उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

MLIS -105 (E3)
ग्रन्थालय सामग्री का परिरक्षण और संरक्षण

ग्रन्थालय सामग्री का परिरक्षण और संरक्षण

इकाई 1

परिरक्षण एवं संरक्षण : आवश्यकता, उद्देश्य एवं कार्य 07

इकाई 2

ग्रन्थालय सामग्री के प्रकार एवं उनका संरक्षण : प्राचीन पाण्डुलिपियाँ और मुद्रित प्रलेख 34

इकाई 3

ग्रन्थालय सामग्री के प्रकार एवं उनका संरक्षण : अग्रन्थीय सामग्री/सूक्ष्म प्रलेख 46

इकाई 4

ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व : पर्यावरण 60

इकाई 5

ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व : जैवीय 78

इकाई 6

ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व : रासायनिक 95

इकाई 7

ग्रन्थालय प्रलेखों की जिल्दबन्दी के विभिन्न प्रकार 112

इकाई 8

जिल्दबन्दी हेतु प्रयुक्त सामग्री के प्रकार एवं प्रक्रियाएँ 122

इकाई 9

ग्रन्थालय जिल्दबन्दी के मानक 132

प्रमुख शब्द 142

सन्दर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्य-सामग्री 146

पाठ्यक्रम अभिकल्पन समिति

1. प्रोफेसर नीतीश कुमार सान्याल (अध्यक्ष)
कुलपति (26 अप्रैल, 2002 तक)
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

2. प्रोफेसर देवेन्द्र प्रताप सिंह (अध्यक्ष)
कुलपति, (27 अप्रैल, 2002 से)
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

3. डॉ. यू. एम. ठाकुर,
निदेशक, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान संस्थान,
पटना विश्वविद्यालय,
पटना

4. डॉ. एस. पी. सूद,
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (सेवा निवृत्त)
ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर

5. डॉ. बी. के. शर्मा,
उपाचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग,
डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय,
आगरा

6. डॉ. जे. एन. गौतम,
उपाचार्य एवं विभागाध्यक्ष,
ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला,
जीवाजी विश्वविद्यालय,
ग्वालियर

7. श्री शंकर सिंह,
प्रबन्धक (पुस्तकालय),
पावर फाइनेन्स कारपोरेशन लि0,
चन्द्रलोक, 36 जनपथ,
नई दिल्ली

8. डॉ. एस. एन. सिंह
वरिष्ठ सहायक ग्रन्थालयी,
केन्द्रीय तिब्बती विश्वविद्यालय,
सारनाथ, वाराणसी

9. डॉ. (श्रीमती) सोनल सिंह,
वरिष्ठ प्रवक्ता,
ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान अध्ययनशाला,
विक्रम विश्वविद्यालय,
उज्जैन

10. श्री सुनील कुमार,
वरिष्ठ प्रवक्ता
एस. सी. ई. आर. टी.,
वरुण मार्ग, डिफेंस कालोनी,
नई दिल्ली

11. डॉ. प्रभाकर रथ (पाठ्यक्रम संयोजक),
ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान संकाय,
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मैदान गढ़ी,
नई दिल्ली

12. डॉ. ए. के. सिंह (प्रशासनिक संयोजक)
कुलसचिव
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

लेखक	सम्पादक	कार्यालयीन सहायक
डॉ. यू. एम. ठाकुर	श्री सुनील कुमार	(1) श्री रंजीत बनर्जी
		(2) श्री दिलीप त्रिपाठी
		(3) श्री पंकज श्रीवास्तव

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 2024
ISBN -

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
प्रकाशक– उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित वर्ष – 2024.
मुद्रक – के0 सी0 प्रिंटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स , पंचवटी , मथुरा – 281003.

प्राक्कथन

आधुनिक समाज में ज्ञान एवं विज्ञान के क्षेत्र में निरंतर नवीन विषयों का आविर्भाव हो रहा है। इन नवीन विषय क्षेत्रों में पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान भी एक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी विषय है। मानव संसाधन विकास के अन्तर्गत किये गये विभिन्न अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि विभिन्न प्रकार के पुस्तकालयों, प्रलेख पोषण केन्द्रों और सूचना केन्द्रो में विभिन्न श्रेणियों एवं स्तरों पर प्रशिक्षित जनशक्ति (Man power) की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गयी जो प्रमाण-पत्र, डिप्लोमा, स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर पर प्रशिक्षण प्रदान कर प्रशिक्षित जनशक्ति को तैयार करते हैं।

पुस्तकालयों, प्रलेख पोषण केन्द्रों और सूचना केन्द्रों में उच्च पदों पर चयन एवं नियुक्ति हेतु केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) को आवश्यक माना है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में तकनीकी सहायकों, सहायक पुस्तकालयाध्यक्षों और पुस्तकालयाध्यक्षों हेतु 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) को मूलभूत योग्यता माना है। विभिन्न राज्य सरकारों ने भी अपने विभिन्न विभागों के अन्तर्गत संचालित पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों हेतु राजपत्रित पदों पर नियुक्ति के लिए 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) आवश्यक योग्यता निर्धारित की गयी है।

वर्तमान में भारत में लगभग 50 विश्वविद्यालय, 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) उपाधि प्रदान कर रहे हैं। अधिकांश विश्वविद्यालय नियमित पाठ्यक्रम ही संचालित कर रहे हैं जिनमें सीमित संख्या में छात्रों का प्रवेश सम्भव हो पाता है। छात्रों की शैक्षिक आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए दूरस्थ शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर पर 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) कार्यक्रम को संचालित करने का प्रथम प्रयास इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली द्वारा अंग्रेजी माध्यम में किया गया। फलस्वरूप हिन्दी भाषी प्रदेशों के छात्र अधिक लाभ नहीं ले पाते। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ने उक्त कार्यक्रम हिन्दी माध्यम से प्रारम्भ करने का प्रयास किया है।

'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) के अन्तर्गत शिक्षकों एवं छात्रों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सरल एवं सुगम हिन्दी भाषा में विषय विशेषज्ञों और वरिष्ठ प्राध्यापकों द्वारा सभी पाठ्यक्रमों का प्रमाणिक साहित्य तैयार कराया गया है। प्रत्येक पाठ्यक्रम में अध्ययन सामग्री को विशेष क्रम के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है। केन्द्रीय हिन्दी मंत्रालय के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित पारिभाषिक शब्दावली एवं इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित ग्रन्थालय एवं सूचना विज्ञान शब्दावली में से ही विषय से सम्बन्धित तकनीकी शब्दों का प्रयोग किया गया है। पाठ्य सामग्री के अन्त में प्रमुख शब्दों की विवेचना एवं परिभाषा तथा सन्दर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्यसामग्री की सूची प्रस्तुत की गयी है।

उद्देश्य एवं क्षेत्र

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद का हिन्दी भाषा में 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) कार्यक्रम को संचालित करने का प्रमुख उद्देश्य उन छात्रों को लाभान्वित करना है जो अंग्रेजी माध्यम द्वारा अध्ययन करने में असमर्थ होते हैं। साथ ही ऐसे पुस्तकालय कर्मचारियों की सहायता करना है जो विभिन्न संस्थानों में कार्यरत हैं और अवकाश लेकर नियमित रूप से इस कार्यक्रम को पूर्ण करने में असमर्थ हैं। ऐसे कर्मचारियों के भविष्य के शैक्षिक विकास व्यावसायिक योग्यता बढ़ाने और पदोन्नति में यह कार्यक्रम विशेष रूप से सहायक होगा।

'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) के इस एक वर्षीय कार्यक्रम में 08 पाठ्यक्रमों को समावेशित किया गया है जो कि दो सत्रों (Semesters) में विभक्त किया गया है। सभी पाठ्यक्रमों का अभिकल्पन इस प्रकार किया गया है कि अध्ययन के पश्चात् छात्र अथवा कार्यरत कर्मचारी किसी भी प्रकार के पुस्तकालय और सूचना केन्द्र में कार्य करने में समर्थ हो सकेंगे। इस कार्यक्रम में सूचना प्रबन्धन एवं प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग पर विशेष बल दिया गया है।

आशा और विश्वास है कि प्रस्तुत पाठ्य अध्ययन सामग्री पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के प्राध्यापकों एवं 'पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातकोत्तर' (MLIS) स्तर पर अध्ययनरत छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

MLIS-04 ग्रन्थालय सामग्रियों का परिरक्षण तथा संरक्षण
(E-03) Preservation & Conservation of Library Materials

विषय प्रवेश

प्राचीन पाण्डुलिपियाँ एवं ज्ञान के अन्य धरोहर हमारे अतीत का दर्पण है। ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक, भौगोलिक, भाषा वैज्ञानिक एवं अन्य विविध ज्ञान अन्यतम स्रोत के अतिरिक्त ये हमारे अतीत एवं सांस्कृतिक विकास की जीती जागती कहानी है।

प्राचीन पाण्डुलिपियों में हमारी सभ्यता, संस्कृति एवं भौतिक तथा अध्यात्म विकास की कहानी समाहित होकर हमारे ग्रन्थालयों में अमूल्य निधि के रूप में विराजमान हैं। इस अमूल्य निधि को हमारे पूर्वजों ने वैज्ञानिक साधनों के अभाव में भी खून-पसीना एक करके हमें विरासत में दिया है। इसलिए इसका परिरक्षण एवं संरक्षण (Preservation and Conservation) प्रत्येक ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों का नैतिक दायित्व है।

विगत कई दशकों में प्रौद्योगिकी की नवीन तकनीकों द्वारा विभिन्न माध्यमों में संग्रहित ज्ञान निधि के परिरक्षण एवं संरक्षण के कई नवीन आयाम विकसित हुए हैं। ग्रन्थालय एवं सूचना केन्द्र बहु माध्यमों में संग्रहित ज्ञान वाहक के रूप में मात्र ग्रन्थों एवं प्रकाशित सामग्रियों के ही नहीं वरन अप्रकाशित प्रलेखों दृश्य-श्रव्य तथा अंकीय सूक्ष्म माध्यम के परिरक्षण एवं संरक्षण के लिए भी पूर्णरूपेण उत्तरदायी हैं।

एक सफल परिरक्षक, किसी संग्रह या ग्रन्थालय एवं सूचना प्रभारी के रूप में परिरक्षण एवं संरक्षण की सम्पूर्ण विधियों के ज्ञान से युक्त होना अत्यन्त आवश्यक है। इस पाठ्यक्रम में विभिन्न इकाइयों के विस्तृत विवरण में परिरक्षण एवं संरक्षण के विभिन्न विधियों के ज्ञान सन्निहित किये गये हैं।

इकाई-1 में परिरक्षण एवं संरक्षण की आवश्यकता, उद्देश्य एवं कार्य का सचित्र वर्णन किया गया है।

इकाई-2 में प्राचीन पाण्डुलिपियों, मुद्रित प्रलेखों, ताल-पत्र, भोज-पत्र आदि के भंडारण विधि के साथ उनके मरम्मत एवं पुनरुद्धार के उपाय बतलाये गये हैं।

इकाई-3 में अप्रलेखीय सामग्रियों, फिल्म, चुम्बकीय प्लास्टिक आदि सूक्ष्म प्रलेखों के रख रखाव का सचित्र वर्णन है।

इकाई-4 में पर्यावरण के रूप में ग्रन्थालयों की सामग्रियों के हानिकारक तत्वों की जानकारी चित्र के माध्यम से दी गई है।

इकाई-5 में जैवीय ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्वों के विषय में सचित्र ज्ञान उपलब्ध कराई गई है।

इकाई-6 में रासायनिक ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्वों का वर्णन है।

इकाई-7,8 एवं 9 में ग्रन्थालयों में बहुतायत उपलब्ध प्रकाशित प्रलेखों की क्रमशः जिल्दबन्दी के विभिन्न प्रकार, जिल्दबन्दी हेतु प्रयुक्त सामग्री के प्रकार एवं प्रक्रियाओं तथा ग्रन्थालय जिल्दबन्दी हेतु प्रयुक्त सामग्री के प्रकार एवं प्रक्रियाएँ एवं ग्रन्थालय जिल्दबन्दी के मानक का विशुद्ध वर्णन सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। परिरक्षण एवं संरक्षण सम्बन्धित इन महत्वपूर्ण ज्ञान सामग्रियों को विभिन्न इकाईयों में सन्निहित कर पाठ्यक्रम में सम्मिलित प्रमुख शब्दों की पारिभाषिक शब्दावली

एवं संदर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्य-सामग्रियों की भी जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार की सांस्कृतिक परिसम्पति की सामग्रियों को सुरक्षित रखने का संरक्षण एक अवधारणा है, जिसमें परिक्षण तथा पुररुद्धार दोनों ही कार्य सम्मिलित है। ऊपरी तौर से परिरक्षण के अन्तर्गत किसी वस्तु को, भौतिक एवं रासायनिक दृष्टि से दुरुस्त स्थिति में रखने का प्रयास किया जाता है, अतः परिरक्षण एवं संरक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जो कभी समाप्त नहीं होती है। इन क्रियाओं का इस पाठ्यक्रम में साँगोपांग वर्णन किया गया है।

इकाई 1 : परिरक्षण एवं संरक्षण : आवश्यकता, उद्देश्य एवं कार्य
PRESERVATION AND CONSERVATION : ITS NEED, PURPOSE AND FUNCTION

संरचना

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 परिरक्षण एवं संरक्षण की अवधारणा

- 1.2.1 पदों के अर्थ
- 1.2.2 सहदायित्व
- 1.2.3 ग्रन्थालयी का दायित्व

1.3 परिरक्षण के सामान्य अभिगम

- 1.3.1 बिम्ब एवं ग्रन्थपुट का परिरक्षण अथवा ग्रन्थों के भौतिक पक्ष तथा मुद्रण : छवि का परिरक्षण
- 1.3.2 सूचना का परिरक्षण

1.4 परिरक्षण मापक

- 1.4.1 भंडारण पर्यावरण
- 1.4.2 वातावरण की स्थिति
- 1.4.3 निराद्रीकरण
- 1.4.4 निराअम्लीकरण
- 1.4.5 विशिष्ट सामग्री का परिरक्षण
- 1.4.6 जैवीय नियंत्रण मापक
- 1.4.7 निरीक्षण और सफाई

1.5 विकासशील देशों के लिए परिरक्षण एक चुनौती के रूप में

1.6 संरक्षण : पुनरुद्धार (Restoration)

- 1.6.1 मोड़ और रेखाओं को सीधा करना
- 1.6.2 अल्पमात्रा में फटे हुए मागों की मरम्मत
- 1.6.3 प्राथमिक उपचार
- 1.6.4 कवक प्रभावित पृष्ठों का उपचार अथवा धब्बों को मिटाना
- 1.6.5 फ्यूमीगेशन (Fumigation)

7.0 निष्कर्ष

1.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई में ग्रन्थालय परिरक्षण एवं संरक्षण से सम्बन्धित सामान्य अवधारणाओं को स्पष्ट किया गया है। इसको पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित तथ्यों को जान पायेंगे :

- परिरक्षण, संरक्षण और पुनरुद्धार की मूलभूत अवधारणायें
- प्राथमिक उपचार एवं ग्रन्थालयी के कर्तव्य,
- परिरक्षण हेतु चरणों का क्रमिक निर्धारण
- प्रभावशाली परिरक्षण विधि का ज्ञान
- ग्रन्थों के परिरक्षण और संरक्षण के लिए विशिष्ट ज्ञान
- संरक्षण एवं पुनरुद्धार के तकनीक की जानकारी
- उपकरणों का उपयोग एवं रख रखाव
- सही समय पर सही मापदंडों को लागू कर भंडार का वास्तविक ज्ञान संरक्षण के क्षेत्र में
- नियंत्रित संरक्षण देने हेतु निर्धारित मापदंडों को स्थापित करने में सफलता की प्राप्ति
- ग्रन्थालयी के नैतिक दायित्वों को प्रायोगिक रूप देने में दक्षता की प्राप्ति।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

सभ्यता के विकास होने के साथ ही कागज निर्माण और मुद्रण की कला ने ग्रन्थालय जगत में क्रान्ति की स्थिति ला दी। ग्रन्थालय का मतलब एक ऐसे भवन से है जहाँ ग्रन्थों का संकलन होता है। इस संदर्भ में ग्रन्थालय विज्ञान के पंच सूत्रों (five Laws) ने ग्रन्थालय भंडार परिरक्षण को एक ग्रन्थालय के नैतिक दायित्व के रूप में परिणत कर दिया। यहाँ यह उल्लेख कर देना भी आवश्यक है कि भंडार परिरक्षण एक ग्रन्थालयी के सफल ग्रन्थालयाध्यक्षता के निर्धारित मापदंड का पैमाना बन गया। अतः ग्रन्थालय सेवा हेतु इसकी मूलभूत धारणाओं का ज्ञान होना अति आवश्यक है। इस इकाई के अन्तर्गत सर्वप्रथम इसके मूलभूत धारणाओं को ही स्पष्ट किया गया है। जैसा कि इसके "शीर्षक" "ग्रन्थालय सामग्री का परिरक्षण एवं संरक्षण" से भी स्पष्ट होता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक ग्रन्थालयी का यह सबसे महत्वपूर्ण दायित्व है कि वह ग्रन्थालय में संग्रहित सामग्री को पूर्ण रूप से संरक्षित एवं परिरक्षित करे, उसे ऐसे स्वस्थ वातावरण में रखे जिससे वह एक लम्बे समय तक स्वस्थ और उपयोगी रह सके अर्थात रख रखाव के लिए निर्धारित मापदंडों का सही समय पर सफलतापूर्वक स्थापित कर ग्रन्थालय भंडार को सही संरक्षण दे सके। यहाँ यदि यह कहा जाय कि समाज के धरोहर को लम्बे अवधि तक सुरक्षित रखकर एक ग्रन्थालयी समाज को विशेष रूप से उपकृत कर रहा है तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

किन्तु इस संदर्भ में वास्तविकता यह है कि यह काम अतिमहत्वपूर्ण होते हुए भी आसान नहीं है, क्योंकि इसमें एक ग्रन्थालयी की पूरी दक्षता चाहिए। उसे परिरक्षण और संरक्षण के सम्बन्ध में क्यों, कहाँ, किस सामग्री के द्वारा तथा कैसे किया जाय ? इसका गहन और विस्तृत ज्ञान होना चाहिए। इस इकाई के तहत उक्त कार्य से सम्बन्धित सभी अवधारणाओं के विभिन्न पक्षों की विस्तृत विवेचना की गयी है, परिरक्षण और संरक्षण विधि के सामान्य नियमों की जानकारी भी दी गयी है तथा एक ग्रन्थालय में निर्धारित मापदंडों के तहत रख-रखाव हेतु किस प्रकार का कैसे वातावरण रखा जाये जिससे सामग्री क्षतिग्रस्त न हो और उसे एक लम्बी आयु मिले तथा इसे एक सुनिश्चित दिशा निर्देश के तहत स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया गया है।

1.2 परिरक्षण और संरक्षण की अवधारणा

"ज्ञान" अथवा सूचना सामग्री का व्यवस्थापन एवं संग्रह किसी ग्रन्थालय में किया जाता है, इस सामग्री में निहित भौतिक तथा वाङ्गमय सम्बन्धी बौद्धिक ज्ञान को किसी भी विशेष समूह को प्रदान किया जाता है जो ग्रन्थालय में कार्यरत कर्मचारी जिन्हें ग्रन्थालय और सूचना विज्ञान का सही प्रशिक्षण प्राप्त प्राप्त हो, के द्वारा ही सफलतापूर्वक इस कार्य को संपादित करवाया जाता है। उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपर्युक्त दायित्व को सही तरीके से निभाने के लिए उससे सम्बन्धित अवधारणाओं का स्पष्ट और गहन ज्ञान होना आवश्यक है।

प्रायोगिक तौर पर यह देखा जा रहा है कि एक ग्रन्थालय कर्मी परिरक्षण एवं संरक्षण दोनों ही शब्दों को सामान्य अर्थों में प्रयोग करते हैं अर्थात ग्रन्थालय सामग्री को सुरक्षित रखना। विस्तृत अर्थों में विशिष्ट रूप से दोनों ही अलग-अलग अवधारणाएँ हैं। विस्तृत अर्थ में संरक्षण एक विस्तृत प्रक्रिया का नाम है जिसके तहत ग्रन्थालय साम्ग्री को सुरक्षित रखना, किसी भी प्रकार की हानि नहीं होने देना, रख-रखाव के लिए सही वातावरण बनाये रखना, क्षति अथवा टूट-फूट से बचाना, विनिष्ट होने से बचाना और इसकी लम्बी आयु प्रदान करना। अतः यह सम्पूर्ण, सुनियोजित कार्य या व्यवस्था का नाम है जिसमें ग्रन्थालय सामग्री को सुरक्षित रखने हेतु निर्धारित मापदंड के तहत वातावरण तैयार करना है, जिसमें भौगोलिक व्यवस्था पर नियंत्रण जैसे, तापमान, वायु, आर्द्रता, धूप, अम्ल, धूलकण इत्यादि जैवीय प्राणियों पर नियंत्रण तथा प्राथमिक उपचार एवं विशिष्ट उपचार सभी शामिल हैं। विशिष्ट रूप से उपचार हेतु अत्यधिक क्षतिग्रस्त सामग्री को विशेष प्रयोगशाला, जहाँ इसके विशेषज्ञ मौजूद हों वहाँ भेजना भी शामिल है, इस प्रकार यदि यह कहा जाय कि ग्रन्थालय सामग्री की संपूर्ण सुरक्षा व्यवस्था का नाम संरक्षण है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

संरक्षण के मुख्य तीन पक्ष या तत्व हैं। इसे संरक्षण के चरण के रूप में भी स्वीकार किया जा सकता है। ये निम्नांकित हैं, जिसे दिये गये रेखा चित्र से भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है:

संरक्षण के तत्व

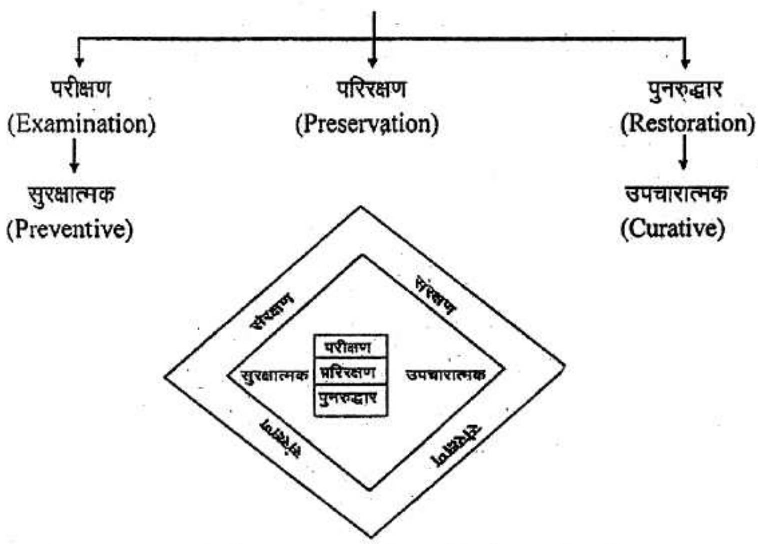

1.2.1 पदों के अर्थ

(क) परीक्षण :– एक ग्रन्थालय में संग्रहित सामग्री विभिन्न प्रकार की होती हैं। इनको प्रकार व आकृति के आधार पर जैसे, ग्रन्थ, ग्रन्थ पुटी, लघु ग्रन्थ, समाचार पत्र, ग्रन्थ विहीन सामग्री इत्यादि,

माध्यम के रूप में यथा मुद्रित सामग्री एवं अमुद्रित सामग्री, छवि के रूप में यथा मुद्रण इंक का प्रकार, कम्प्यूटर से उद्धृत सामग्री इत्यादि, भौतिक पदार्थों के आधार पर यथा मिट्टी, धातु, पाषाण, लकड़ी, चमड़े, कपड़ा अथवा सेल्यूलोज से बनी सामग्री, लेख के रूप में अथवा विषय वस्तु के रूप में इत्यादि कई प्रकार के होते हैं। प्रत्येक के क्षतिग्रस्त होने के अलग-अलग कारण होते हैं और उसके क्षतिग्रस्तता के माध्यम भी अलग-अलग होते हैं क्योंकि वह उस सामग्री के प्रकृति पर निर्भर होता है। एक ग्रन्थालयी को ग्रन्थालय सामग्री के प्रथम चरण में विश्लेषण और परीक्षण का कार्य संपादित करना पड़ता है। परीक्षण से यह सुनिश्चित किया जाता है कि सामग्री के निर्माण का तत्व क्या है? अथवा यों कहें कि उसकी प्रकृति क्या है? यह सुनिश्चित हो जाने पर विश्लेषण के क्रम में यह सुनिश्चित हो जाता है कि सामग्री की प्रकृति के अनुसार इसे किन-किन माध्यमों से क्षति पहुँच सकती है, उसकी मात्रा क्या होगी? कितने समय में सामग्री पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो जायेगी इत्यादि? यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार मानवीय रोगों के निदान के लिए परीक्षण।

(ख) परिरक्षण :- सामग्री की प्रकृति एवं उसकी क्षतिग्रस्तता के कारणों को जान लेने के बाद उसके रख-रखाव तथा उपयोग की जानकारी भी अतिआवश्यक है, क्योंकि अंग्रेजी में एक कहावत है कि "प्रिवेन्शन इज बेटर देन क्योर" अर्थात परहेज दवा से कहीं उत्तम है। यही परिरक्षण है। इस दूसरे चरण में आकार एक ग्रन्थालयी उन मानदंडों का निर्धारण करता है तथा उसे अपने ग्रन्थालय में स्थापित करता है जिनसे ग्रन्थालय सामग्री को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचे। अतः यह कार्य ग्रन्थालय भवन के निर्माण के समय से ही प्रारंभ हो जाता है। इस संदर्भ में एक ग्रन्थालयी अपने सामग्री के रख-रखाव, प्रकाश, वायु, नमी, अम्ल इत्यादि के मानक को प्रायोगिक रूप देता है। दैनिक कार्यों में सफाई, धूल झाड़ना, सीलन हटाना, फ्यूमीगेशन तथा अन्य औषधियों का प्रयोग करता है। यही उपयोग के लिए पाठक प्रशिक्षण की सामयिक व्यवस्था भी सुनियोजित करता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि इस परिरक्षण के अन्तर्गत एक ग्रन्थालयी क्षतिग्रस्तता नियंत्रक मापदंड को स्थापित कर वातावरण को यथा शक्ति स्वच्छ रखने का प्रयास करता है। जिससे सामग्री अधिक-से-अधिक समय तक उपयोगी रह सके और उसे क्षति पहुँचे ही नहीं। यह पक्ष भी दो उप पक्षों में बँटा हुआ है जो निम्नलिखित है -

(i) **सुरक्षात्मक परिरक्षण :-** परिरक्षण हेतु ऐसी सभी प्रकार की प्रक्रिया चाहे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो जिसमें भविष्य में होने वाले क्षति से ग्रन्थालय सामग्री को सुरक्षित रखा जा सके उसे सुरक्षात्मक परिरक्षण कहते हैं।

(ii) **उपचारात्मक परिरक्षण :-** परिरक्षण के क्रम में ऐसे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से की गयी क्रिया जिससे नष्ट हो रहे अथवा हो चुकी सामग्री को बचाया जा सके। इसे सामान्य भाषा में प्राथमिक उपचार भी कहते हैं।

(ग) पुनरुद्धार (Restoration) :- ग्रन्थालय में एक से एक अमूल्य सामग्री संग्रहित होती हैं। इसमें कुछ ऐसी भी सामग्री होती हैं जिसका हर समय, हर स्थिति में और हर जगह सामान्य महत्व होता है। यदि ऐसी सामग्री क्षतिग्रस्त हो जाती है तो यह प्रयास किया जाता है कि यथा संभव सामग्री को मूल रूप में लाया जा सके। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि ऐसे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से की गई कोई भी क्रिया, जिससे नष्ट हो चुकी सामग्री को पुनः मूल रूप में लायी जा सके उसे पुनरुद्धार कहते हैं। उदाहरण स्वरूप यदि किसी ग्रन्थ के पृष्ठ फट जाते हैं या किनारा टूट जाता है या बीच-बीच के अक्षर विनष्ट हो जाते हैं तो कृत्रिम पृष्ठारोपण करना, किनारों को जोड़ना, अक्षरों को पुनः आरेखित करना, पृष्ठों को भरना इत्यादि पुनरुद्धार हैं। चूँकि यह एक खर्चीला और गहन ज्ञान पर आधारित है, अतः ऐसे कार्यों के लिए भारत में प्रयोगशाला बनी हुई हैं, अर्थात् आर्काइवस लेबोरेट्री। पुनरुद्धार का कार्य प्रायः सामान्य ग्रन्थालय में नहीं हो सकता।

1.2.2 सहदायित्व

परिरक्षण तथा संरक्षण के प्रति मात्र ग्रन्थालयी ही उत्तरदायी नहीं होता है। इसके प्रति विभिन्न लोगों का सहदायित्व होता है। सहदायित्व का अर्थ है एक से अधिक व्यक्तियों का आपसी दायित्व। जहाँ एक ओर संग्रहालय में यह पुरातत्वविज्ञ का दायित्व होता है वहीं दूसरी ओर यह संग्रहालय पदाधिकारी का भी उतना ही दायित्व है। पुरातत्वविज्ञ जहाँ यह बताते हैं कि सामग्री की प्रकृति क्या है तथा किस तरह के वातावरण में रखने पर वह क्षतिग्रस्त नहीं होगा वहीं संग्रहालय पदाधिकारी दिये गये निर्देश के अनुसार उसे रखने का प्रयास करते हैं। दोनों आपस में सहयोग नहीं करें तो एक संग्रहालय में संग्रहित सामग्रियों को वास्तविक सुरक्षा नहीं मिल पायेगी। ठीक यही स्थिति ग्रन्थालयी और पाण्डुलिपि विशेषज्ञों का है। इस प्रकार संपूर्ण व्यवस्था के लिए ग्रन्थालय सामग्री के अलग-अलग प्रकृति के कारण उपरोक्त सभी विशेषज्ञों का आपसी सहयोग आवश्यक है। इसी सहयोग समापन के क्रम में सहदायित्व स्थापित होता है। विचारों और सूचनाओं के संग्रह के लिए वर्षों से विभिन्न माध्यमों का उपयोग होता रहा है। इन सभी माध्यमों को अध्ययन की सुविधा के लिए, निम्नांकित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

(क) अकार्बनिक तत्वों से मिलकर बनने वाली सामग्री जैसे पत्थर, चीनी मिट्टी, धातु, इत्यादि।

(ख) कार्बनिक तत्वों से मिलकर बनने वाली सामग्री जैसे, भोजपत्र, ताड़ पत्र, लकड़ी, कपड़ा, कागज, जानवर के चमड़े, पेपीरस, रेशम इत्यादि।

(ग) आधुनिक तकनीक के तत्वों से निर्मित सामग्री तथा सेल्यूलोज से बनने वाली सभी सामग्री जैसे, फिल्म, कैसेट, टेप, फ्लौपी इत्यादि।

इसे निम्नांकित चार्ट के द्वारा भी स्पष्ट किया जा सकता है:

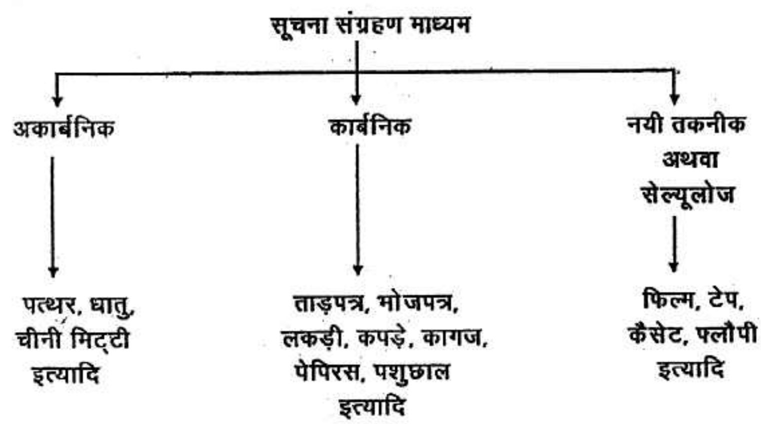

सामान्यतया लेखनीय सामग्री कार्बनिक तत्वों से निर्मित होती हैं जिनका स्वभाव ही होता है विनष्ट होना अर्थात ये अकार्बनिक तत्वों की तुलना में अधिक तेजी से क्षतिग्रस्त अथवा विनष्ट होते हैं। विस्तृत रूप में यह कहा जा सकता है कि वर्षों से लेखनीय सामग्री का निर्माण कार्बनिक माध्यमों से किया जाता रहा है। उसे सुरक्षित रखने का प्रयास भी उतनी ही लम्बी अवधि से चलता आ रहा है। किन्तु इसे पूर्णतः बचाने में पुरातत्वविज्ञ तथा संग्रहालय पदाधिकारी दोनों ही असफल रहे हैं। संरक्षण और पुनरुद्धार दोनों ही एक सफल ग्रन्थालयित्व का द्योतक है। यही पुरातत्वविज्ञ तथा संग्रहालय पदाधिकारी के योग्यता की वास्तविक पहचान है। अतः यह सुनिश्चित करने में निश्चित नियमों का पालन अति आवश्यक है। दूसरी ओर कार्बनिक पदार्थों का सहदायित्व पाण्डुलिपि विशेषज्ञ तथा ग्रन्थालयी के ऊपर पूर्णरूप से निर्भर है। विभिन्न प्रकार के स्थितियों को बनाने के लिए भी दोनों

की समान सहभागिता अतिआवश्यक है।

सामान्यतया भारत में पाये जाने वाले बड़े-से-बड़े ग्रन्थालय में भी पूर्ण रूप से सुरक्षित एवं व्यवस्थित संग्रहण कक्ष नहीं पाया जाता है और न ही यह संभव हो पाता है कि इसे कैसे स्थापित किया जाय। पर्याप्त तथा समुचित ज्ञान के अभाव में भी समुचित सुरक्षित कक्ष नहीं बन पा रही है। ग्रन्थालय में एक-से-एक बढ़कर महत्वपूर्ण ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। यह वर्षों-वर्ष तक पाठकों के लिए उपयोगी होते हैं। अतः ऐसे सामग्री के लिए एक निश्चित संग्रहण कक्ष का होना भी आवश्यक है क्योंकि ऐसे सामग्री का पाठकों द्वारा नियमित उपयोग भी होते रहना स्वाभाविक है और उतना ही स्वाभाविक उसका क्षतिग्रस्त होते रहना भी है। इसमें कोई शक नहीं है कि उतना ही आवश्यक इन सामग्रियों का एक ग्रन्थालयी द्वारा उसका रख-रखाव करना तथा प्राथमिक उपचार करना भी है जिससे उसकी क्षतिग्रस्तता को अधिक-से अधिक समय तक टाला जा सके तथा सामग्री को बचाया जा सके। साथ ही ग्रन्थालयी का यह भी महत्वपूर्ण दायित्व है कि वह अत्यधिक क्षतिग्रस्त सामग्री को विशेष उपचार के लिए पाण्डुलिपि विशेषज्ञ के पास प्रयोगशाला में भेज दें जिससे यथा समय उसका सही उपचार हो सके। चूँकि एक ग्रन्थालयी ग्रन्थालय में संग्रहित सभी महत्वपूर्ण सामग्री का पूर्ण विशेषज्ञ नहीं हो सकते ऐसे में वह स्वयं उसका सक्षम उपचार नहीं कर सकता। उसके पास विशेष प्रयोगशाला भी नहीं होता है। ऐसे स्थिति में उसे हर संभव पाण्डुलिपि विशेषज्ञों पर निर्भर करना पड़ता है तभी वह अपने संग्रह को सही परिरक्षण दे सकता है। अतः एक सफल संग्रह के लिए दोनों का सहदायित्व आवश्यक है।

गृह उपचार अथवा प्राथमिक उपचार को नियमित रूप से करना चाहिए, अर्थात् जोड़ना, पुनर्जिल्दसाजी करवाना इत्यादि। यह सामान्य सामग्री हेतु साधारण रूप से ग्रन्थालय कर्मी पर निर्भर करता है। अतः इन ग्रन्थालयकर्मी को सामयिक प्रशिक्षण आवश्यक है। सही प्रशिक्षण देने पर पुनरुद्धार का साधारण काम भी ग्रन्थालय के अन्दर करवाया जा सकता है।

अतः ग्रन्थालयी को सामान्य सामग्री तथा विशिष्ट सामग्री, सामान्य क्षतिग्रस्तता तथा विशिष्ट क्षतिग्रस्तता, प्राथमिक उपचार तथा विशिष्ट उपचार की अवधारणा का स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए तभी सही संरक्षण प्रक्रिया संपादित हो सकेगी।

जहाँ तक आधुनिक ग्रन्थालय का प्रश्न है उसमें आज कुछ अन्य प्रकार की सामग्री भी संग्रहित की जा रही हैं, यह आधुनिक तकनीक की देन है जैसे फ्लौपी, सी0 डी0 रोम, कैसेट, फिल्म, श्रव्य-दृश्य सामग्री इत्यादि। यह आधुनिक माध्यमों से उत्पन्न हुई है जो सेल्यूलोज से बनी है। इनके संरक्षण के लिए भी विशेष व्यवस्था की आवश्यकता होती है। यह पूर्णतः ग्रन्थालयी पर निर्भर करता है, क्योंकि इसके अभाव में ग्रन्थालय सामग्री तत्काल क्षतिग्रस्त हो जाती है तथा बाद में उसका पुनरुद्धार भी संभव नहीं होता है।

1.2.3 ग्रन्थालयी का दायित्व

ग्रन्थालयी का मुख्य दायित्व पाठकों को वांछित सामग्री देने के साथ-साथ उनमें संग्रहित मानव संस्कृति के ज्ञान को सुरक्षा प्रदान करना भी है। मानव अपने द्वारा अर्जित ज्ञान को किसी-न-किसी रूप में सदियों से अपनी भावी पीढ़ियों को प्रदान करने के लिए ग्रन्थालय में संग्रह करते आया है, जिनका परिरक्षण तथा संरक्षण एक ग्रन्थालयी का नैतिक दायित्व है। ग्रन्थालय मात्र ग्रन्थों का ही संग्रह नहीं है, बल्कि फोटोग्राफ, फिल्म, नक्शा, टेप, फ्लॉपी, पेंटिंग अर्थात सूचनाओं का संग्रह है। यह अत्यन्त उपयोगी है जो मानव-सभ्यता के परिचायक भी हैं। ये सभी भूतपूर्व अभिलेख अत्यंत उपयोगी हैं। वह वर्तमान पीढ़ी के लिए उपयोगी तो होते ही हैं साथ ही, वे आने वाले नई पीढ़ी के लिए भी उतने ही उपयोगी होते हैं। अतः इन धरोहरों को सुरक्षित रखना और अधिक समय तक उपयोगी बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है।

12

हमारे ग्रन्थालय में आज जो भी अभिलेख संग्रहित हो रहे हैं वे भूतकाल में प्राप्त हुए अनुभवों से भविष्य के लिए मार्गदर्शिका होते हैं। किन्तु यहाँ यह भी कहना आवश्यक है कि इन सभी अभिलेखों के अनेक शत्रु हैं, जिनसे रक्षा करना ग्रन्थालयकर्मी का नैतिक दायित्व है। यदि वह अपना संपूर्ण ध्यान परिरक्षण तथा संरक्षण पर नहीं देता है तो वह मात्र भूतकाल के अभिलेख पर ही नहीं बल्कि वर्तमान काल के अभिलेख को भी क्षतिग्रस्त होने के लिए बाध्य कर देता है और भविष्य के लिए वह आगामी पीढ़ी के प्रश्नों के घेरे में आ जाता है। भविष्य में आनेवाली पीढ़ी उससे यह प्रश्न करने के लिए बाध्य हो जाती है कि उसने उसके लिए क्या किया अतः ग्रन्थालयी का यह नैतिक कर्तव्य है कि वह परिरक्षण तथा संरक्षण कार्य को सदैव सतर्कता पूर्वक और तत्परता पूर्वक इसे संपादित करे।

1.3 परिरक्षण के सामान्य अभिगम

जब भी सामान्यतया परिरक्षण एवं संरक्षण की बातें चलती हैं तो ग्रन्थालय के विभिन्न अभिलेख सामने आते हैं। ये अभिलेख विभिन्न प्रकार के होते हैं यथा पाण्डुलिपि, मुद्रित ग्रन्थ अथवा पुस्तकेत्तर सामग्री। यहाँ दो बातें विचारणीय हैं : पहला संरक्षण से पूर्व की जानकारी जिसे वास्तव में परीक्षण कहते हैं अर्थात अभिलेख को किन-किन कारणों से क्षति पहुँच सकती है तथा इनके परिरक्षण हेतु मुख्य पक्ष कौन-कौन से हो सकते हैं और दूसरा क्षतिग्रस्तता सामग्री का प्राथमिक उपचार कैसे किया जा सकता है? ग्रन्थालय सामग्री को क्षति कई कारणों से पहुँचती है जिस प्रकार एक मानव शरीर में विभिन्न माध्यमों से रोग लग सकता है ठीक उसी प्रकार ग्रन्थालय सामग्री की भी यही स्थिति है। अध्ययन की सुविधा के लिए इन्हें मोटे तौर पर चार भागों में बाँटा जा सकता है, जिसके विभिन्न उपकरण हैं जो निम्नलिखित है–

1. **प्राकृतिक कारण :**
   - (i) भूकम्प
   - (ii) बाढ़
   - (iii) आँधी
   - (iv) शिलावृष्टि
   - (v) विद्युत
   - (vi) चक्रवात
   - (vii) ज्वालामुखी
   - (viii) आग
2. **मानवीय कारण :**
   - (i) कम्पन
   - (ii) घर्षण
   - (iii) अनभिज्ञता
   - (iv) खुरचना
   - (v) गलत उपयोग
   - (vi) युद्ध
   - (vii) दासता
   - (viii) धर्मान्माद
   - (ix) विलुप्ता
   - (x) गैर कानूनी खुदाई
   - (xi) नगरीकरण

(xii) गहरी जोत

(xiii) चोरी

3. **जैवीय कारण :**

(i) असुरक्षित रख-रखाव

(ii) सूक्ष्म जैवीय प्राणी

(iii) पौधा और वृक्ष

(iv) कीट

(v) प्राणी

4. **रासायनिक कारण :**

(i) विनष्ट

(ii) अवांछित तापमान

(iii) अवांछित आर्द्रता

(iv) नमक

(v) तैलीय माध्यम

(vi) प्रदूषण

(vii) प्रकाश

(viii) धूल

कागज

इसे निम्नांकित रेखा चित्र के माध्यम से भी समझा जा सकता है :-

धीरे-धीरे तथा क्रमिक क्षति (अर्द्धवार्षिक)

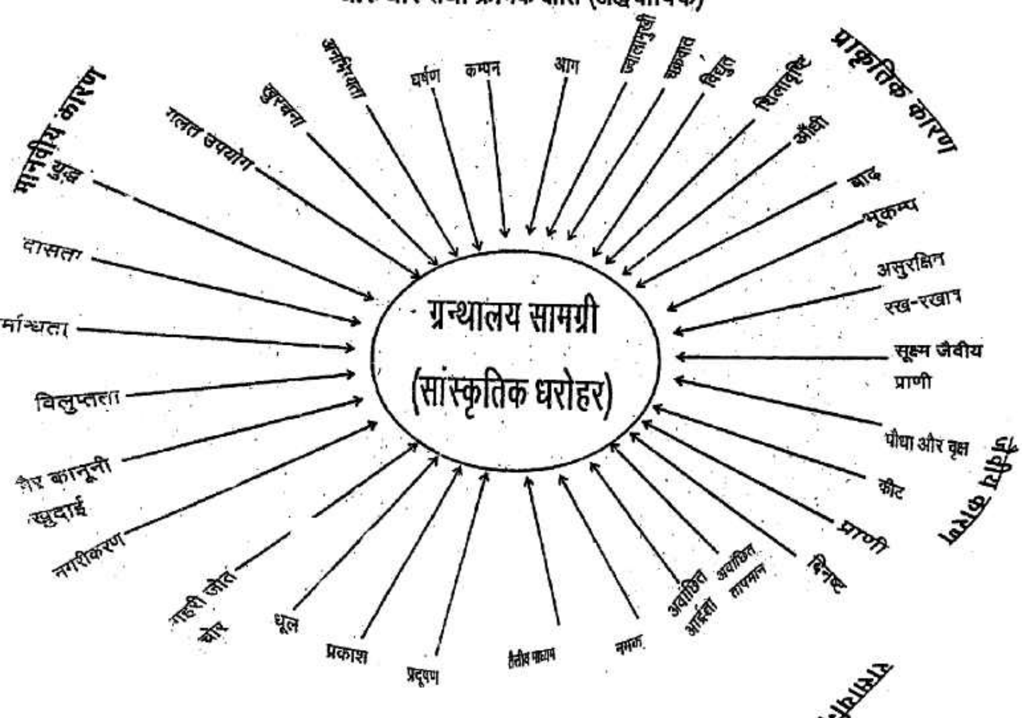

तत्कालिक भयंकर प्रभाव

मानवीय कारण

सार्वजनिक अनभिज्ञता	व्यावसायिक अनभिज्ञता
अभाव में :	अवांछित वितरण
-जागरूकता	- यातायात - संग्रहण - विद्युत
-योजना	- भवन - प्रदर्शन - हस्तक्षेप
-प्रशिक्षण	- वितरण - समर्थन - परिचालन
-उत्प्रेरण	- प्रलेख - जलवायु - रख-रखाव
-सुरक्षा	
-नियंत्रण	
-संचार	

उपर्युक्त विवेचन के उपरान्त ग्रन्थ के कितने पक्ष होते हैं, जिन्हें क्षति पहुँच सकता है यह भी विचारणीय है। परिरक्षण एवं संरक्षण की दृष्टिकोण से किसी भी ग्रन्थ के मुख्य निम्नांकित पक्ष होते हैं :-

(क) **ग्रन्थ के भौतिक पक्ष** : यह ऐसे पक्ष हैं जिसके द्वारा यह स्पष्ट होता है कि ग्रन्थ किन पदार्थों से बना हुआ है ? कागज, हाथ अथवा मशीन से, भोजपत्र, ताड़पत्र, अथवा आण्विक सामग्री से। जिल्दसाजी के लिए किस प्रकार के पदार्थों का उपयोग हुआ है, इत्यादि।

(ख) मुद्रण छवि : ग्रन्थ में निहित विचार अंकित करने के लिए किस प्रकार के स्याही तथा लिखने के लिए किस उपकरण का उपयोग किया गया है इत्यादि ।

(ग) सूचना : ग्रन्थ में निहित विचार के स्तर क्या हैं तथा वह किस हद तक उपयोगी है ? इसे स्पष्ट करने के लिए निम्नांकित रेखा चित्र देखा जा सकता है :

जनसंख्या वृद्धि	प्रशासन द्वारा	अच्छी किन्तु उलझी हुई व्यवस्था
सामाजिक दुरत्व और पुनर्गठन	समूह और	सामूहिक अभिरुचि में विकास
तकनीकी खोज	उपयोगकर्ता के आवश्यकतानुसार सूचना प्रशिक्षण का स्तर	

1.3.1 बिम्ब और ग्रन्थपुट का परिरक्षण अथवा ग्रन्थों के भौतिक पक्ष तथा मुद्रण : छवि का परिरक्षण

ग्रन्थालय सामग्री की जब भी चर्चा होती है तो सर्वप्रथम हमारे सामने ग्रन्थ स्वरूप आता है, उसके बाद ही अन्य स्वरूप। उसकी उपयोगिता तभी तक है जब तक कि वह सही रूप में हमारे सामने है। यदि ग्रन्थ के पृष्ठ फट जायें, अक्षर मिट जायें अथवा बीच-बीच से उसके पृष्ठ ही क्षतिग्रस्त हो जायें जो ग्रंथ की उपयोगिता ही समाप्त हो जाती है। कभी-कभी इसके पृष्ठ आपस में ही चिपक जाते हैं और खुल नहीं पाते, कभी इसकी सिलाई ढीली पड़ जाती है और इसके पृष्ठ फैल जाते हैं, कभी

कवक का प्रभाव इसकी उपयोगिता को विनष्ट कर देता है। ऐसी स्थिति में अन्य भी कई कारण हैं, जिससे ग्रन्थ की उपयोगिता नष्ट हो जाती है।

जहाँ तक ग्रन्थ के मुद्रण छवि का प्रश्न है उसे भी कई कारणों से क्षति पहुँचती है जिससे ग्रन्थ धब्बा युक्त हो जाता है और उस पर अंकित छवि देखने योग्य नहीं रह जाती। फोटोग्राफ तथा मुद्रित छवि रंगहीन, धब्बायुक्त, अस्पष्ट हो तो वह भी ग्रन्थ को पूर्णतः अनुपयोगी बना देता है। ग्रन्थालय सामग्री का यह पक्ष यदि अत्यधिक क्षतिग्रस्त हो जाय तो ग्रन्थालय सामग्री ही समाप्त हो जाती है ठीक उसी प्रकार कैसेट तथा फिल्म स्ट्रिप में यदि खरोंच पड़ जाता है तो उसकी भी उपयोगिता समाप्त हो जाती है।

उपर्युक्त क्षतिग्रस्तता के गहन अध्ययन के बाद मुख्य रूप से तीन कारक स्पष्ट किये गये हैं जो निम्नलिखित हैं -

(क) ग्रन्थालय में भौतिक सामग्री का रख-रखाव

(ख) ग्रन्थालयकर्मी अथवा पाठक के उपयोग की विधि

(ग) ग्रन्थालय सामग्री का ह्रासपूर्ण स्वभाव

ग्रन्थालय सामग्री का ह्रासपूर्ण स्वभाव अथवा स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता :

सामान्यतया ग्रन्थालय सामग्री के भौतिक पक्ष के रूप में कागज का उपयोग ही अधिक किया जाता है। जहाँ तक कागज का प्रश्न है आज हमारे दैनिक जीवन में इसका अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है सुबह दिन निकलते ही अखबार से इसकी शुरुआत होती है। कुछ देर बाद बच्चे भारी-भारी बस्तों का बोझ लादे स्कूल जाते हैं। इन बस्तों में कागज ही होता है। स्कूल हो या दफ्तर, घर हो या बाहर हर जगह कागज के विभिन्न रूपों का प्रयोग होता है, जहाँ तक कागज के इतिहास का प्रश्न है इसका सर्वप्रथम प्रयोग चीन में हुआ था, किन्तु इस संदर्भ में ग्रन्थालय सामग्री के रूप में इसके पूर्व के इतिहास पर भी एक नजर डालना आवश्यक है। ज्ञान का प्रारंभिक आदान-प्रदान मौखिक था, जिसका उदाहरण वेद है, जिसे एक व्यक्ति अपने वाणी द्वारा दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाता था जिसके कारण वेदों को 'श्रुति' कहा गया।

किन्तु समयोपरान्त सभ्यता का कुछ और विकास हो जाने के बाद लोगों ने अपने विचार आड़ी-तिरछी रेखाओं को लिखकर व्यक्त करना शुरू किया, जिसे 'चित्रलिपि' की संज्ञा दी गई। भारत के अनेक स्थानों पर प्राप्त शैल इसके उदाहरण हैं। ठीक इसी प्रकार के कुछ शैल चित्र अन्य देशों में भी पाये गये हैं। सभ्यता के बढ़ते अगामी चरण में लिखने के लिए पत्थर, ताँबे, लकड़ी और मिट्टी इत्यादि का उपयोग होने लगा, ये सभी अकार्बनिक पदार्थ होने के कारण अधिक टिकाऊ थे, किन्तु आकार में इतने बड़े और वजनी होते थे कि उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना बहुत कठिन था। आगामी चरण में इस कार्य के लिए कुछ वृक्ष के पत्ते और छाल को उपयोग में लाया गया। इस प्रकार ताड़पत्र तथा भोजपत्र भी ग्रन्थालय सामग्री के रूप में महत्वपूर्ण स्थान लेने लगे। इनके ह्रासपूर्ण स्वभाव का विस्तृत विवेचन निम्नलिखित हैं :

(क) **ताड़पत्र तथा भोजपत्र से बनी पाण्डुलिपि :** पाण्डुलिपियों में ताड़पत्र तथा भोजपत्र का महत्वपूर्ण स्थान है। आज भी इससे बने हुए दुर्लभ पाण्डुलिपि ग्रन्थालयों में अमूल्य स्थान रखते हैं। ऐसी स्थिति में इनका अलग-अलग विवेचन आवश्यक है जो निम्नलिखित है :

(i) **भोजपत्र :-** भोजपत्र भोज वृक्ष की भीतरी छाल है। इस वृक्ष का जन्म हिमालय की तराई में हुआ है। यह वृक्ष दस हजार फुट या उससे अधिक ऊँचाई पर पैदा होता है। भोजपत्र के पत्रक में दो या तीन पत्रक परत-दर-परत रहते हैं और यह परतें एक प्राकृतिक गोंद के द्वारा उसके मजबूत गांठों और लकीरों अथवा नसों से जुड़ी रहती है जो भोज वृक्ष के छाल का एक हिस्सा होता है। भोज की छाल का रंग बहुत ही हल्का होता है। परत की ओर इसका रंग सागवन की तरह हल्का भूरा और दूसरी ओर सफेद

होता है जिसमें हल्के भूरेपन की झलक रहती है।

वृक्ष की भीतरी छाल को ही लिखने के काम में लाया जाता है। छाल को वृक्ष से उतार लेने के बाद अंदरूनी छाल को पहले सुखा लिया जाता है और उस पर कुछ तेल लगा दिया जाता है और फिर उस पर पॉलिश कर दी जाती है।

इस तरह यह छाल भोज-पत्र के रूप में लिखने के काम में लाने के लिए तैयार हो जाती है। भोज वृक्ष की छाल में कई-कई महीन परते होती हैं और ये परतें जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है एक प्राकृतिक गोंद से एक दूसरे से चिपकी रहती है। इस गोंद की शक्ति एक समय सीमा तक बंधी रहती है जो समय के साथ प्राकृतिक रूप से धीरे-धीरे समाप्त होती चली जाती है। इस प्रकार भेज वृक्ष की गोंद भी ढ़ीली पड़ने लगती है और इसके कारण ही भोज-पत्र जगह-जगह से अलग-अलग होना शुरू हो जाता है। समय के साथ ही दूसरे प्राकृतिक तत्व तथा सैल्यूलोज, लिंगनिन, लिशा, गोंद आदि जो भी उनमें मौजूद रहते हैं वह भी धीरे-धीरे विखरना शुरू हो जाते हैं और इसके साथ ही छाल कड़ी भी कमजोर हो जाती है तथा फट कर गिरने लगती है। परिणामस्वरूप भोज-पत्र पर लिखी पाँडुलिपियाँ फट कर छितराने लगती है तथा उसके किनारे भी कमजोर पड़ कर आसानी से झड़ने लगते हैं। कभी-कभी ऐसा भी देखने को आया है कि भोज-पत्र पर लिखी पाँडुलिपियाँ आपस में ही चिपक जाती है, जिसका मुख्य कारण उन पर हुई लिखावट अथवा इनमें मौजूद प्राकृतिक गोंद की नमी का बढ़ जाना है ऐसी स्थिति में उन्हें एक दूसरे से अलग करना बड़ा मुश्किल काम होता है। समय के साथ-साथ भोज-पत्र काला पड़ जाता है और उसका रंग फीका पड़ जाता है किन्तु उन पर न तो कवक लगते हैं और न ही उनमें कीड़े ही लगते हैं। किन्तु उनकी स्वभाविक क्षतिग्रस्तता को रोकना सम्भव नहीं होता है।

(ii) ताड़-पत्र : भारत में कागज के उपयोग से पूर्व ताड़-पत्र भी लिखने के काम में लाया जाता था। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ताड़-पत्र, ताड़ वृक्ष की पत्ती से बनता है। यह वृक्ष दक्षिण भारत में केरल और पूर्वी भारत में उड़ीसा में पैदा होता है जहाँ की जलवायु उष्णकटिबंधीय है। लिखने के काम में आने वाले ताड़ पत्र को तैयार करने की हर एक प्रदेश की अपनी-अपनी विधि है जिसका विस्तृत विवेचन आगामी इकाई में दिया जा रहा है।

ताड़ पत्र की अनेक किस्में हैं, जिनमें से लिखने के लिए कुछ खास प्रकार के ताड़पत्रों को ही काम मे लाया जाता है। मुख्य रूप से ताड़ पत्र की ये तीन किस्में हैं :-

(क) बोरासस फ्लेबेलिफर लिन (ताड़ अथवा ताल)

(ख) कोरिफा अनबेकुलिफेरा लिन (करालिका, श्री ताल अथवा ताली)

(ग) कोरिफा तालिफारोरवस्व

(क) **बोरासस फ्लेबेलिफर लिन (ताड़ अथवा ताल) :** बोरासस फ्लेबेलिफर लिन एक किस्म के ताड़पत्र का वनस्पति शास्त्रीय नाम है। इसे पंखिया ताड़ या पनिया ताड़ भी कहते हैं। यह ज्यादा तो नहीं, लेकिन तुलनात्मक दृष्टि से खुश्क जलवायु में पैदा होता है। पंखिया ताड़ की पत्तियाँ मोटी तथा रेशेदार होती हैं। इसी कारण इनमें लचीलापन नहीं होता है। कीड़े-मकोड़े इसे नुकसान पहुँचा सकते हैं। इनका लचीलापन समय के साथ-साथ और भी कम होता जाता है। इसी कारण इसे लिखने के योग्य नहीं माना जाता है जिससे इस पर बहुत ही कम लिखी हुई पाण्डुलिपि मिली है।

(ख) **कोरिफा अनबेकुलिफेरा लिन (करालिका, श्री ताल अथवा ताली) :** वास्तव में इसका नाम तालिपोथ है। संस्कृत में इसे करालिका या श्री ताल कहते हैं। यह नम जलवायु अर्थात अधिकांश तटवर्ती क्षेत्रों में पैदा होता है, जहाँ आर्द्रता बनी रहती है। इसकी पत्तियाँ सूखने पर मुलायम एवं हल्के रंग की होती है और इनमें काफी लचीलापन होता है। इसकी पत्तियों से

पंखे, चटाई, टोकरियाँ, छत्ते तथा झोपड़ियाँ आदि बनायी जाती हैं। यह लिखने के लिए पूर्ण उपयोगी होती है इसी कारण अभी तक प्राप्त अधिकांश पाण्डुलिपि में इसी प्रकार के ताड़पत्र का प्रयोग होता था क्योंकि इसमें लचक भी काफी समय तक बनी रहती है तथा इसे कीड़े-मकोड़े भी जल्दी हानि नहीं पहुँचा सकते। अतः यह अधिक टिकाऊ होती है।

(ग) **कोरिफा तालिफारोरवस्व** : इस किस्म की ताड़ की पत्तियाँ हल्के भूरे रंग की होती हैं, जिनमें काले रंग की नसें बनी रहती हैं। ये पत्तियाँ मोटी होती हैं और इनमें ज्यादा लचक नहीं रहती है। ये वृक्ष अधिकतर बंगाल और तमिलनाडु के तटवर्ती क्षेत्रों में पैदा होते हैं। यह लिखने के बिल्कुल भी योग्य नहीं होता है। इन्हें कीड़े-मकोड़े भी आसानी से क्षति पहुँचा सकते हैं।

ऊपर बताये गये तीनों प्रकार के ताड़पत्रों में तालिपोथ नाम का ताड़पत्र अधिक चिकना, कोमल और लचीला होता है। पंखियाँ ताड़ वृक्ष की पत्तियाँ खुरदुरी और मोटी होती है। तालिपोथ किस्म की ताड़पत्र पंखिया ताड़पत्र की तुलना में कहीं अधिक समय तक टिक सकता है। तालिपोथ ताड़पत्र का उपयोग श्रीलंका, थाईलैंड, मलेशिया, इण्डोनेशिया और पूर्व के अन्य देशों में होता है। किन्तु भारत और नेपाल में तीनों प्रकार के ताड़पत्रों को लिखने के काम में लाया जाता है।

सामान्यतया ताड़पत्रों पर काले रंग की स्याही से लिखा जाता है जो अम्लीय होते हैं। इन्हें यदि अम्लीय वातावरण से दूर रखा जाय तो यह वर्षों टिक सकते हैं; किन्तु अम्लीय वातावरण में यह स्वतः ही क्षतिग्रस्त होने लगते हैं।

कागज :

जहाँ तक कागज का प्रश्न है, ग्रन्थालय का नाम ही ग्रन्थों का घर होता है। ऐसी स्थिति में यदि हम सामान्यतया किसी ग्रन्थालय की ओर देखते हैं तो हमें कागज से बनी सामग्री ही दिखायी देती है। नयीं विधा जो आणविक युग की देन है तथा जिसें कागज रहित ग्रन्थालय की संज्ञा दी गई है वह किसी छोटे से कोने में ही दिखाई देती है। कागज से बनी ग्रन्थालय सामग्री का ग्रन्थालय में दिन-प्रतिदिन वृद्धि हो रही है इसी कारण आज ग्रन्थालय और ग्रन्थालयी दोनों को साहित्यिक विस्फोट का सामना करना पड़ रहा है। ऐसी स्थिति में इसका परिरक्षण और भी आवश्यक है। किन्तु कागज में भी समयानुसार ही स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता आती है, क्योंकि यह भी निम्नांकित कच्चे मालों से निम्नांकित विधि द्वारा तैयार की जाती है :

कागज निर्माण हेतु कच्चे माल :

- कपास सूत या सूती कपड़ा
- फ्लैक्स
- साधारण लकड़ी या शहतूत की लकड़ी घास
- बाँस
- पटसन

कागज के रेशों में ज्यादातर सैल्यूलोज, स्टार्च और एक विशेष प्रकार का लिशा अर्थात रेशिन आदि रहते हैं। लकड़ी के रेशों में लिगनिन की मात्रा ज्यादा नहीं रहती है, जबकि उसके रेशे छोटे होते हैं। जिस कागज में रेशे लम्बे-लम्बे होते हैं, जैसे कि कपास के रेशे। वह कागज छोटे रेशे की तुलना में अधिक टिकाऊ होते हैं।

कागज बनाने की विधि :

कागज बनाने की विधि भी पूर्णतः वैज्ञानिक और कलात्मक दोनों हैं। यह भी युग के मुताबिक दोनों विधि से बनायी जाती है। हाथ से और मशीन से, जो निम्नलिखित है

हाथ से कागज बनाने की विधि :

हाथ से कागज बनाने के लिए सबसे पहले कच्चे माल को एकत्र किया जाता है। उसके बाद उसे छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लिया जाता है। फिर उसे चूने के पानी में भिगो कर कुछ समय के लिए छोड़ दिया जाता है। उसके बाद उसे साफ करने की प्रक्रिया अपनायी जाती है, जिसमें विभिन्न रसायनों का प्रयोग भी किया जाता है। इसके बाद पिटाई की प्रक्रिया आती है जो बहुत पुरानी है। भारत और चीन में यह ओखली मूसल अथवा ढ़ेकी से किया जाता है जबकि अन्य देशों में इसे पत्थर की चक्की में पीसा जाता है, जिससे इसकी लुगदी तैयार हो जाती है, जिसे कुछ समय तक पानी में सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता है। पुनः इसमें चूना या सोडा मिलाया जाता है, जिसे रंगकाट की संज्ञा दी जाती है। रंगकाट से सफाई करने के बाद पुनः इसे स्वच्छ पानी से इसे अच्छी तरह से धो लिया जाता है; ताकि उसमें से मैल या क्षार तत्व को आसानी से बाहर निकाला जा सके। यदि सफेद कागज बनाना है तब तो इसे इसी रूप में छोड़ दिया जाता है और यदि रंगीन कागज बनाना हो तो इसमें इच्छित रंग डाल दिया जाता है। आज जबकि कागज की खपत बहुत अधिक मात्रा में होने लगी है तो यह काम तीन प्रकार से किया जाता है। लुगदी तैयार हो जाने के बाद पहली विधि यह है कि उसे पानी से अच्छी तरह से धोया जाता है, उसमें से गन्दगी निकाली जाती है तथा इसे टब या हौज में जो पानी से भरा हुआ होता है उसमें डाल दिया जाता है फिर सिरकी के बने स्क्रीन को तिरछा करके टब या हौज में डाला जाता है और थोड़ा सा टेढ़ा करके उसे बाहर निकाल लिया जाता है। इस प्रकार जो रेशे स्क्रीन पर आ जाते हैं, वे सूखने लगते हैं और इसी क्रम में वे एक-दूसरे से चिपक जाते हैं। पूरा सूखने पर यह कागज की चादर (सीट) की आकृति ले लेता है। यह निम्नांकित रेखा चित्र से भी स्पष्ट होता है :

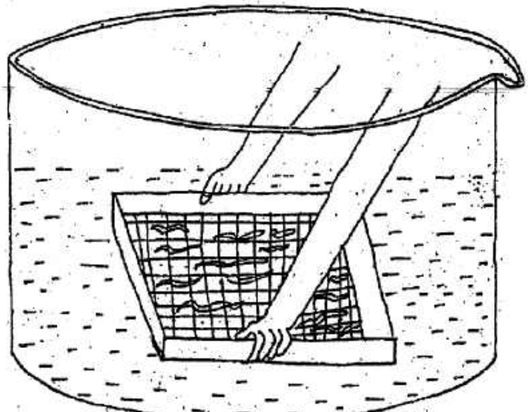

दूसरी विधि यह है कि बाँस के एक आयताकार ढाँचे पर पतला कपड़ा फैला दिया जाता है तथा उस पर पानी वाली लुगदी को उलट दिया जाता है। इस प्रकार पानी बह जाता है और रेशे बच जाते हैं। जब ये कुछ सूख जाता है तो उसे कपड़े से अलग कर सुखा लिया जाता है।

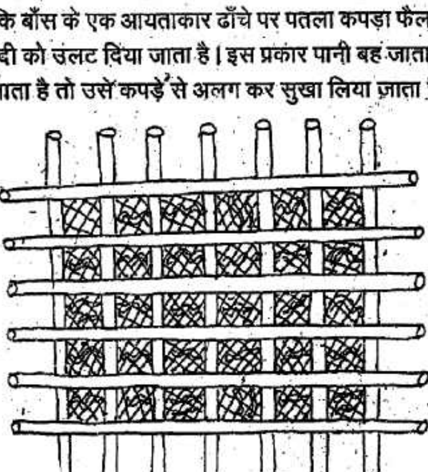

तीसरी विधि में एक तीसरे प्रकार का ढाँचा प्रयोग होता है जिसे लाइड मोल्ड कहते हैं। यह ढाँचा गोल बाँसों का पतली-पतली पट्टियों को रेशम के धागे, ताँत धागें अथवा घोड़े के बाल से बाँध कर तैयार किया जाता है। इस पर भी लुगदी उलट दी जाती है तथा उसमें से पानी बह या निकल जाता है जिससे और रेशे बच जाते हैं जो सूखने पर चादर का रूप ले लेता है। इस प्रकार के ढाँचे से गीले कागज के परतों को भी अलग किया जा सकता है।

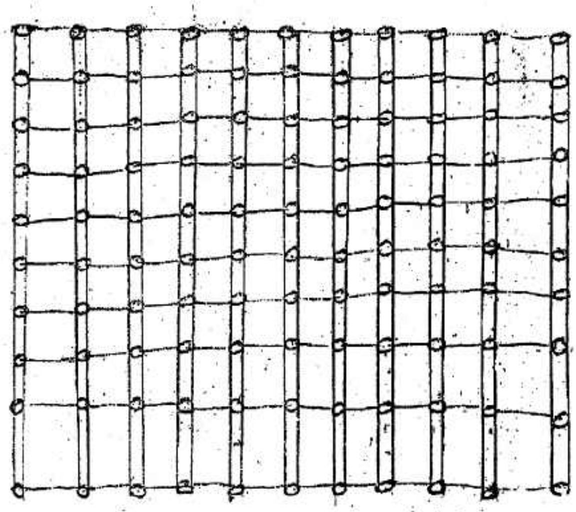

कागज की गीली परतों को सुखाने के लिए संगमरमर या चूने की बनी चिकनी दीवार का उपयोग किया जाता है। कागज की गोली, परतों इन दीवारों के सहारे चिपका दिया जाता है। सूख जाने पर इसे अलग कर लिया जाता है। इस तरीके से सुखाये गये कागज की परतें दीवार से अलग करने पर समतल और चिकनी होती है। खासकर उस तरफ से जिस तरफ से यह दीवार से चिपकी रहती है।

कागज निर्माण की अगली प्रक्रिया में घिसाई की प्रक्रिया आती है। घिसाई के द्वारा कागज को और भी चिकना बनाया जाता है जिससे स्याही उस पर न फैले। इस काम के लिए सरेस का लेप, विरोजा अथवा गोंद को कागज पर लगा दिया जाता है और तब उसकी घिसाई की जाती है। जिससे कागज चिकना हो जाय और स्याही सोखने की क्षमता और कम हो जाय। यह लिखने के योग्य बन सके। भारत में हाथ से बने कागज पर स्टार्च का लेप लगाकर भी उसकी घिसाई की जाती है। कुछ अन्य देशों में कागज को चिकना बनाने के लिए एक तरह के धोल का प्रयोग किया जाता है, कागज को इस घोल में डुबाया जाता है। इस घोल से कागज में मजबूती भी आती है।

अच्छे किस्म के कागज तैयार करने के लिए आगामी चरण में लोडिंग का काम आता है। लोडिंग का काम चॉक या सफेद मिट्टी से किया जाता है। भारत में कागज का यह काम गोमेद पत्थर या जानवर के सींग से किया जाता है। इसे कागज पर पॉलिश करना भी कहते हैं, जिससे कागज में चमक आती है। उसकी सरंध्रता भी दब जाती है। चूँकि कागज में जगह-जगह पर सरंध्रता बनी रहती है जिसे इसी विधि से दूर किया जाता है। यूरोप में कागज में चमक लाने का काम बड़े-बड़े पत्थर के बेलन अथवा भारी पत्थर के चक्कों द्वारा होता है। इनके बीच से कागज को दबाकर निकाला जाता है।

चूँकि हाथ से बने कागज में भी ज्यादा से ज्यादा सैल्यूलोज, लिगनिन स्टार्च आदि जैसे पदार्थ मौजूद रहते हैं। खासकर लकड़ी के रेशें में लिगनेंट ज्यादा रहता है। इसी कारण समयानुसार कागज स्वयं क्षतिग्रस्त होने लगते हैं तथा इसे कीड़े-मकोड़े तथा जानवर सभी हानि पहुँचा सकते हैं।

मशीन से कागज बनाने की विधि :

इस मशीनी युग में मशीन से बने कागज का मिलना बिल्कुल स्वाभाविक है। इसको बनाने में भी उन्हीं प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है जो हाथ से कागज बनाने में। मशीन से कागज बनाने में लुगदी से लेकर सीट बनाने तक सभी प्रक्रिया लगातार चलती रहती है। पहले मशीन से कागज बनाने के लिए रद्दी अथवा चित्रों का प्रयोग किया जाता था किन्तु आजकल कागज की बढ़ती हुई माँग को पूरा करने के लिए उन सभी कच्चे मालों का प्रयोग किया जाता है जो हाथ से बने कागज के लिए। सबसे पहले लुगदी तैयार किया जाता है और उसके बाद उसे साफ करने के लिए निम्नांकित तीन विधियों का प्रयोग किया जाता है :

1. सल्फाइड विधि
2. संशोधित सल्फाइड विधि
3. सोडा विधि

1. **सल्फाइड विधि :** लकड़ी के लुगदी में लिगनेंट नामक द्रव्य की मात्रा अधिक रहती है। यह कागज की क्षतिग्रस्तता के लिए अत्यन्त नुकसानदेह मानी जाती है। इस द्रव्य को हटाने के लिए उसे गंधक से साफ किया जाता है। इस विधि में लकड़ी को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लिया जाता है तब उन टुकड़ों को कैल्शियम बाई सल्फाइड और सल्फ्यूरिक एसिड अर्थात गन्धक और तेजाब के घोल में मिलाया जाता है। उसके बाद उन रासायनिक घोल को एक मशीन में डालकर घुमाया जाता है, जिससे यह लुगदी बन जाती है पुनः इसे 140 डिग्री-180 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर पकाया जाता है इसी तापमान पर लिगनिन घोल दिया जाता है। इस विधि में पी0 एच0 की मात्रा बहुत कम होती है। जिसका अर्थ है एसिड की मात्रा अधिक रहना। यह भी कागज के लिए हानिकारक मानी जाती है। जिससें कागज में स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता होती है।

2. **संशोधित सल्फाइड विधि :** चूँकि गंधक विधि से तैयार किये गये कागज में तेजाब की मात्रा अधिक पायी जाती है इसलिए इसमें कुछ सुधार की आवश्यकता महसूस की गई। इस संशोधित विधि में लुगदी बनाने के लिए लकड़ी के टुकड़ों में संशोधित सल्फाइड विधि या मैग्नीशियम सल्फाइड मिलाया जाता है, जिससे उसमें तेजाब की मात्रा कम हो जाती है। इसमें पी0 एच0 की मात्रा 4-5 ही रह जाती है और इसे 170 डिग्री सेन्टीग्रेड पर पकाया जाता है।

3. **सोडा विधि :** इसे क्राफ्ट विधि भी कहा जाता है। इस विधि में लुगदी बनाने के लिए लकड़ी में सोडियम हाइड्रोक्साइड या सोडियम सल्फाइट मिलाया जाता है और तब उसे 170 डिग्री सेन्टीग्रेडपर पकाया जाता है किन्तु पकाने से पहले हाइपोक्लोराइट या क्लोरीन या हाइड्रोजन पेराक्साइड से यदि जरूरत हो तो इसमें मौजूद गन्दगी को साफ किया जाता है।

रंगकाट से रंग और गन्दगी की सफाई के बाद उसकी धुलाई होना अति आवश्यक है। गन्दगी की सफाई के लिए ज्यादातर तो हाइपोक्लोराइड का ही उपयोग किया जाता है क्योंकि यह हाइड्रोजन पेराक्साइड से तुलनात्मक रूप से सस्ता पड़ता है। समय-समय पर रसायनों की कमी को पूरा करने के लिए सोडियम सल्फेट मिलाने की प्रक्रिया चलती रहती है।

रंगकाट से सफाई :

रासायनिक द्रव्यों से तैयार लुगदी में हल्का भूरापन या हल्का कथई रंग बना रहता है। रंगकाट से जिसकी सफाई करना आवश्यक है। इसके लिए क्लोरीन हाइपोक्लोराइड, क्लोरीन डाइऑक्साइड और हाइड्रोजन पेराक्साइड जैसे द्रव्यों का उपयोग किया जाता है। मशीन से कागज बनाने के लिए जिस विधि का प्रयोग किया जाता है उसमें लकड़ी को तैयार करने के लिए बहुत से रसायनों का

उपयोग किया जाता है। परिणाम यह होता है कि मशीन से बने कागज में तेजाब रहता है और उसकी लम्बाई भी कम रहती है। इसी कारण हाथ से बने कागज की अपेक्षा मशीन से बने कागज कम टिकाऊ होते हैं।

लकड़ी से बने कागज कुछ मशीनों की सहायता के बिना किसी रासायनिक द्रव्यों के उपयोग किये हुए भी तैयार किया जाता है। इसके लिए टुकड़ों को गर्म पानी में डालकर पत्थर की चक्की से पीस दिया जाता है। कागज जनित पदार्थ बच जाते हैं और अन्य पदार्थ बह जाते हैं।

घिसाई की विधि :

कागज की घिसाई अर्थात उसे चिकना करने के लिए स्टार्च घोल अथवा मोम का उपयोग किया जाता है। कभी-कभी तेजाब में मिलाकर लिसा का उपयोग भी किया जाता है। आजकल प्राकृतिक लिसा की जगह कृत्रिम लिसा का उपयोग किया जाने लगा है।

भराई की विधि :

मशीन से बने कागज़ की लुगदी में ऐसे कुछ पदार्थ मिलाये जाते हैं, जिससे उसका रंग सफेद हो जाय और वह छपाई के उपयुक्त बन सके। यह पदार्थ है, कॉलिन, ब..यम सल्फेट, सफेद टिटानियम, चॉक मिट्टी, जिप्सम मैग्नीशियम सिलिकेट इत्यादि।

कागज चाहे हाथ से बना हो अथवा मशीन से, समय के अन्तराल के बाद उसमें स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता तो आती है इन पर कीड़ों जानवरों इत्यादि का प्रकोप भी भयंकर तरह से होता है।

(ख) जिल्दसाजी :

ग्रन्थालय सामग्री के दूसरे भौतिक पक्ष के रूप में जिल्दसाजी का स्थान है। इसमें परम्परागत रूप से जो पदार्थ यथा भोजपत्र तथा ताड़पत्र से बनी पाण्डुलिपियों के लिए लकड़ी के बोर्ड अथवा कपड़े में लपेट कर रखना इत्यादि तथा ग्रन्थों के लिए एक्सट्रा बोर्ड, चमड़े, रेक्सीं, धागा, लेई, इत्यादि का उपयोग होता रहा है इसमें समय के अन्तराल से स्वाभाविक रूप से क्षतिग्रस्तता आती है। यदि ग्रन्थालय सामग्री के जिल्दसाजी में चमड़े का उपयोग किया जाता है तो यह निश्चित रूप से अधिक मजबूत तथा टिकाऊ होता है। यह चमड़ा जानवरों के खाल के बीच का भाग होता है जो चिकना तथा मजबूत होता है। इसे टेनिंग की क्रिया के द्वारा तैयार किया जाता है। अच्छे श्रेणी तथा अच्छी विधि के द्वारा तैयार चमड़ा काफी आकर्षक और टिकाऊ होता है। लेकिन इसमें भी कोई शक नहीं है कि यह चमड़ा जानवरों और कीटों के भोजन के लिए भी उतना ही आकर्षक होता है। यह चिपचिपा और मुलायम होता है जिसके कारण उष्ण वातावरण में भी काफी समय तक इसमें लचीलापन रहता है। किन्तु समय के अन्तराल के बाद यह भी अपनी कोमलता खो देता है और कड़ा होकर फटने लगता है।

चमड़ा और रैक्सीन का उपयोग हमेशा ही जिल्दसाजी में किया जाय यह कोई निर्धारित मानक नहीं है, बल्कि यह भी अन्य प्रकार के सामानों में ही एक प्रकार है। जिल्दसाज गरीब होता है। इसी कारण वह इस क्षेत्र में सस्ती और सुलभ वस्तुओं का उपयोग करता है जिसके कारण उपयोग करते समय ग्रन्थ के पृष्ठ आपस में अलग हो जाते हैं। जिल्दसाज यदि सिलाई ढीला छोड़ता है तो भी उपयोग के क्रम में क्षतिग्रस्त होगी और यदि सिलाई कड़ा करता है तो भी उपयोग के क्रम में क्षतिग्रस्त होगी। यदि सिलाई में कमजोर धागों का प्रयोग किया गया तो भी ये टूट जाती है तथा ग्रन्थ के पन्ने बिखर जाते हैं।

(ग) अन्य उत्पाद अथवा सामग्री :

पुस्तकेतर सामग्री में फिल्म, माइक्रोफिल्म, फिल्मस्ट्रीप तथा माइक्रोफिश का भी विभिन्न ग्रन्थालयों में संग्रह बढ़ता जा रहा है। पिछली अर्द्धशताब्दी से फिल्म सामग्रियों का भी ग्रन्थालय सामग्री के रूप में आना अति तीव्रता से शुरू हो गया है। ये सभी सैल्यूलोज़ नाइट्रेट से बनने वाली सामग्री है, जिसमें

जिंक के प्लेट पर नाइट्रेट का घोल पोत दिया जाता है और उसके बाद उस पर छवि उगाई जाती है। इसका ऐतिहासिक क्रम यह है कि प्रारंभ में यह फिल्म मात्र सैल्यूलोज से बनती थी, किन्तु 1930 में आकर यह सैल्यूलोज नाइट्रेट से बनने लगी। 1960 में इसका स्थान पोलिस्टर ने ले लिया। यह काफी टिकाऊ और मजबूत होती है, किन्तु यदि सही रख रखाव तथा परिरक्षण नहीं दिया गया तो यह उतनी ही तेजी से क्षतिग्रस्त हो जाता है। इसके लिए जिंक और घोल दोनों का उन्नत किस्म का होना अति आवश्यक है। इसे यदि कड़े ढंग से रखा गया तो इसमें खरोंच आ जाती है और ये घिस जाती है। इसकी छवि उड़ने लगती है तथा यह भी टूटने लगती है। समय के अन्तराल से इस पर धब्बे भी पड़ने लगते हैं। किन्तु बाद में ऐसे सिल्वर फिल्म भी बने हैं जिसमें पॉलिस्टर का उपयोग नहीं किया गया है। यह पॉलिस्टर फिल्मों की अपेक्षा अधिक टिकाऊ होता है, किन्तु यदि उस पर भी तेज धूप, गर्मी अथवा रोशनी पड़े तो उस पर अंकित छवि उखड़ने लगती है तथा यह पूर्णतः अनुपयोगी हो जाती है। अतः इन सामग्री का परिरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है।

फिल्म के अतिरिक्त आधुनिक तकनीक ने ढेर सारी अन्य सामग्री भी तैयार की है जो आधुनिक ग्रन्थालय सामग्री के अभिन्न अंग बन गये हैं। इनका रख-रखाव तथा परिरक्षण भी अत्यन्त आवश्यक है।

उपर्युक्त विषय से सम्बन्धित विस्तृत विवेचन ग्रन्थ कुटी 02 के इकाई 05 और 06 में देखा जा सकता है।

भौतिक सामग्री के भंडारण की व्यवस्था :

ग्रन्थालय सामग्री अधिक दिनों तक उपयोगी बनी रहे इसके लिए यह आवश्यक है कि उसे कभी भी प्रतिकूल वातावरण में नहीं रखना चाहिए। कुछ विपरीत स्थितियों को जो इसे प्रत्यक्ष रूप से हानि पहुँचाती है अथवा यों कहें कि ऐसे प्रतिकूल वातावरण जिसके द्वारा इन ग्रन्थालय सामग्रियों को प्रत्यक्ष हानि पहुँचती है उसकी सूची नीचे दी जा रही है :

विपरीत पर्यावरण की स्थिति	भौतिक पक्षों के क्षतिग्रस्तता के स्वाभाविक अथवा प्राकृतिक कारण
(i) अचानक ताप तथा आर्द्रता में परिवर्तन	सभी कार्बनिक पदार्थ जिससे सामग्री बनती है में निम्नांकित क्षति पहुँचती है : • लचीलापन में कमी • भंगुरता अथवा टूटन • कमजोर होना
(ii) शीलनयुक्त गर्म जलवायु में आर्द्रता की कमी (भारत जैसे देश के लिए गंभीर समस्या)	(क) धूल तथा कवक से भूरे तथा हरे धब्बे का लगना (ख) जगह-जगह कागज पर गोल धब्बों का होना (ग) भोज पत्र तथा ताड़ पत्र से बने कागज का आपस में चिपक जाना (घ) शीलनयुक्त दीवार तथा आर्द्रतापूर्ण गर्म में कीड़े, कीट तथा जानवरों के जन्म तथा पोषण अधिक होती है जो भंडारण को क्षति पहुँचाती है।
(iii) दूषित पर्यावरण	दूषित पर्यावरण में अम्ल की मात्रा बहुत बढ़ जाती है, जिससे कागज में पीलापन आ जाता है। वह छेद युक्त तथा कमजोर हो जाता है। इसमें धूल से भी भयंकर क्षति पहुँचती है। प्रदूषण जिल्दसाजी को

	क्षति पहुँचाती है तथा इसके कारण उत्पन्न छवि को समाप्त कर देता है।
(iv) तेज़ प्रकाश विशेष तौर पर सूर्य का प्रकाश तथा अन्य प्रकाश	इसके कारण कागज, फिल्म तथा अन्य प्रकार की सभी सामग्री को क्षति पहुँचती है। खासतौर पर यदि उसमें रंगीन छवि हो तो उसे प्रत्यक्ष रूप से भयंकर हानि पहुँचती है।
(v) धूल के ठोस कण तथा कार्बनिक पदार्थ	धूल के कण से इसे निम्नांकित छति पहुँचती है : (क) कागज के रेशों को जगह-जगह से तोड़ देती है, जिससे कागज निश्चित रूप से कमजोर पड़ जाता है। (ख) अम्लीय गैस से अम्लीय वातावरण उत्पन्न होता है जिससे कागज आर्द्रतापूर्ण हो जाता है। (ग) अस्वस्थ वातावरण में नाना भाँति के जीवाणु जन्म लेते हैं तथा पल-बढ़ कर सामग्री को प्रत्यक्ष रूप से क्षति पहुँचाते हैं।

यह सारणी एक ऐसे प्रतिकूल वातावरण की ओर संकेत मात्र है, जो ग्रन्थालय सामग्री को प्रत्यक्ष रूप से क्षति पहुँचाती है। यदि इनपर पूर्ण ध्यान देकर वातावरण को स्वस्थ तथा अनुकूल बनाकर रखा जाय तो ग्रन्थालय सामग्री को एक लम्बे समय तक उपयोगी रखा जा सकता है।

ग्रन्थालय सामग्री का उपयोग :

रंगनाथन द्वारा निर्मित ग्रन्थालय विज्ञान के प्रथम सिद्धान्त में यह कहा गया है कि "ग्रन्थ उपयोगार्थ है" इसका स्पष्ट अभिप्राय यह है कि ग्रन्थों के उपयोग होंगे अर्थात जब सभी ग्रन्थ पाठकों के द्वारा पढ़े जायेंगें तभी इस ग्रन्थालय की सार्थकता सिद्ध होगी। इस क्रम में वे निश्चित रूप से एक हाथ से दूसरे हाथ में जायेंगे ।अतः ग्रन्थालय सामग्री के इस प्रकीर्णन में परिरक्षण भी एक हाथ से दूसरे हाथ को हस्तांतरित होते रहते हैं। इस हस्तान्तरण के अन्तर्गत दो प्राथमिक विशेषतायें जिसे सदा सत्य (Universal Truth) भी कहा जाता है, निरूपित होती है कि यदि एक छोर पर उसका आदि है तो दूसरे छोर पर उसका अन्त भी है। परिरक्षण का मूलभूत उद्देश्य ही होता है ग्रन्थालय सामग्री को स्वस्थ और स्वच्छ वातावरण तैयार करना जिससे उन्हें एक लम्बी आयु मिले। इसके रख-रखाव के लिए सही वातावरण हेतु कठोर तथा अनुचित ढंग से उपयोग भी पूर्ण वर्जित है। ग्रन्थालयी का यह सामान्य अनुभव है कि वह ऐसे ग्रन्थों को पाठकों के बीच सामान्य उपयोग के लिए नहीं ले जाये जो महत्वपूर्ण होते हुए भी दुर्लभ हैं।

अतः उपयोग की दृष्टि से ग्रन्थालय सामग्री को प्राथमिकता के क्रम में रखा जाता है। जैसे उपयोगिता कम और अधिक मात्रा वाले गुणों से युक्त ग्रन्थों को सामान्य उपयोग के लिए छोड़ दिया जाता है। दूसरी ओर महत्वपूर्ण किन्तु दुलर्भ ग्रन्थों को सुरक्षित रखा जाता है। यदि ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित नहीं की जायेगी तो ग्रन्थालय की सामान्य उपयोगिता ही समाप्त हो जायेगी। इस प्रकार परिरक्षण तथा उपयोग में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। एक के बिना दूसरे की उपयोगिता स्वयं स्पष्ट हो जाती है।

अतः इस स्थिति में ग्रन्थालय संग्रहण स्वभाविक तौर पर दो भागों प्रथम का सामान्य उपयोग तथा दूसरे का सुरक्षित उपयोग में बँट जाता है ।अतः एक ग्रन्थालयी का यह नैतिक दायित्व हो जाता है कि वह अपने भंडार को दो भागों में बाँटते समय ग्रन्थों के साथ पूरा-पूरा न्याय करे।

जिस सामग्री को सुरक्षित उपयोग के लिए अलग किया जाता है तो उसके लिए निम्नलिखित प्रश्नों पर ध्यान देना पड़ता है :

(i) उसे यथाशीघ्र सुरक्षित परिरक्षण सम्बन्धी विधि का वास्तविक ज्ञान होना।

(ii) आने वाले आगामी शोधकर्ता उसका सुरक्षित उपयोग कर सकें तथा

(iii) यदि उसे सुरक्षित नहीं रखा गया तो भविष्य में उसका अगला ग्रन्थ कुटी नहीं तैयार हो सकेगा।

इस संदर्भ में यह भी विचारणीय है कि उपर्युक्त प्रश्नों का दुर्भाग्यवश सही उत्तर पूर्ण रूप से नहीं दिया जा सकता है। अतः एक ग्रन्थालयी के लिए यह स्वभाविक समस्या है जिससे वह समय-समय पर जूझते रहता है।

1.3.2 सूचना का परिरक्षण

हमारे परिरक्षण की मूलभूत सफलताओं में ग्रन्थ के भौतिक पक्ष छवि तथा सूचनाओं का रख रखाव और उनकी सही व्यवस्था करना है। इन्हीं तीन पक्षों के मिश्रित रूप को प्रलेख कहते हैं।

कुछ सुनिश्चित स्थिति में ग्रन्थों के भौतिक पक्ष का अपना विशेष महत्व है किन्तु यहाँ भी निश्चित ही है कि जब सूचना के सुरक्षा का प्रश्न उठता है तो इसका महत्व स्वतः कम हो जाता है। उदाहरण स्वरूप पाण्डुलिपि की सजावट तथा पौराणिक महत्व को देखते हुए कुछ विशिष्ट स्वरूप में इसे पुनः निर्मित कर लिया जाता है। किन्तु पौराणिक तथा मूल पाण्डुलिपि इतिहास और कला का अपना एक अद्भुत साक्ष्य होता है।

यही कारण है कि संग्रहालय तथा ग्रन्थालय में इसे पूर्ण सुरक्षा के साथ रखा जाता है। इसे किसी भी कीमत पर परिरक्षित रखा जाता है। इन सभी परिस्थितियों में पाण्डुलिपियों पर अंकित छवि तथा उसके भौतिक पक्ष दोनों ही सूचना संरक्षण की दृष्टिकोण से अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है।

यह सत्य है कि प्रत्येक ग्रन्थ कुटी का महत्व काफी लम्बे समय तक बना रहता है। इसकी सूचनाओं का परिरक्षण भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है, जो एक ग्रन्थालयाध्यक्ष की सेवा का मूल उद्देश्य होता है।

यह भी सत्य है कि प्रत्येक दुर्लभ ग्रन्थ कुटी का महत्व भी अधिकतम समयों तक बना रहता है। ऐसी स्थिति में उसके भौतिक पक्ष तथा छवि का परिरक्षण बहुत ही कठिन होता है और यह बहुत ही विचारणीय भी होता है।

इसी कारण परिरक्षण पूर्णतः अर्थ पर ही निर्भर नहीं होता है, बल्कि उसका सही ज्ञान भी उतना ही आवश्यक है। अतः एक ग्रन्थालयी को इसका प्रायोगिक ज्ञान होना अनिवार्य है। दूसरी ओर छवि को बचाने के लिए भी आधुनिक प्रौद्योगिकीय ज्ञान का होना अतिआवश्यक है, जिसके आधार पर उसका पुनरुत्पादन भी किया जा सके। सबसे अन्तिम स्तर पर सूचनाओं का परिरक्षण आता है और यह यदि भौतिक पक्ष और छवि का परिरक्षण सही ढंग से हो तो स्वतः हो जाता है। उपयोगकर्ता के भीड़ को देखते हुए सूचना की सुरक्षा भी उतनी ही आवश्यक है, क्योंकि इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरने के बाद सूचना तैयार की जाती और इन्हीं उपयोगकर्ताओं के बीच विभिन्न माध्यमों से दिया जाता है। इस क्रम में भी क्षति की संभावना बनी रहती है। खासतौर पर आधुनिक युग में जब यह सूचना मशीन द्वारा पठनीय स्वरूप में तैयार किया जाता है तो यह ग्रन्थालयी का अंतिम दायित्व होता है।

1.4 परिरक्षण मापक

ग्रन्थालय सामग्री का स्वरूप ही क्षतिग्रस्ततायुक्त होती है जिसका विस्तृत विवरण उपरोक्त अध्याय में दिया जा चुका है। इसकी वृहत् विवेचना आवश्यकता पड़ने पर समुचित अध्यायों में की जायेगी। तत्काल एक उपयोगी दिशा-निर्देश परिरक्षण अभिगम के लिए दिया गया है जिसमें प्रायोगिक और सैद्धान्तिक दोनों पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। वैसे तो परिरक्षण मापक पर भी विस्तृत विवेचन आगामी अध्यायों में दी जायेगी। यहाँ एक संक्षिप्त सामान्य जानकारी दी जा रही है।

1.4.1 भंडारण पर्यावरण

ग्रन्थालयी सामग्री को लम्बी अवधि तक परिरक्षित रखने के लिए प्राथमिक तौर पर भंडारण पर्यावरण का चयन करना अति आवश्यक है। उक्त संदर्भ में ग्रन्थालय भंडार कक्ष के क्षेत्र को निम्नांकित गुणों से युक्त होना चाहिए :

- ग्रन्थालय में वायु आवागमन की समुचित व्यवस्था हो सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रचुर मात्रा में वायु निष्कासन पंखा लगाया जाय। हवा के उचित आवागमन के द्वारा नमी मात्रा पर नियंत्रण किया जा सकता है जिससे जैवकीय प्रदूषण से भी बचाव होता है तथा विभिन्न प्रकार के कीड़े-मकोड़े का भी जन्म नहीं होता है।
- खिड़कियों पर काले शीशे लगे होने चाहिए जिससे सूर्य का प्रत्यक्ष प्रकाश ग्रन्थालय सामग्री पर न पड़े तथा बाहरी मौसम से सम्बन्धित बदलते हुए स्थिति से बचा जा सके।
- भंडार कक्ष के फर्श को भी पूर्ण सुरक्षित बना हुआ होना चाहिए जिससे किसी प्रकार की नमी उत्पन्न न हो। खास कर जब वर्षा ऋतु हो, ऐसे में नमी से बचने के लिए सन अथवा चटाई का प्रयोग करना चाहिए।
- चूहों के प्रवेश को रोकने के लिए दीवार के सभी जोड़ों को अच्छी तरह बन्द कर देना चाहिए तथा नालों के ऊपर भी अच्छी तरह से जाली लगा देना चाहिए। फर्श पर भी किसी प्रकार छेद नहीं होना चाहिए तभी भंडार कक्ष का वातावरण स्वच्छ रह सकता है।
- दीमक के प्रकोप से बचने के लिए भवन बनाते समय ही ध्यान देना चाहिए। उसकी नींव डालते समय उसमें निम्नलिखित रासायनिक द्रव्य यथा कोलतार और केरासन तेल की समुचित मात्रा डाल देनी चाहिए। यह हमेशा व्यावसायिक जैवकीय नियंत्रण के लिए मददगार रहा है। एलड्रेक्स अथवा अन्य रासायनिक पदार्थों का उपयोग फर्श की सफाई के लिए करना चाहिए जिससे दीमक का प्रवेश ग्रन्थालय भंडार कक्ष में नहीं होता है जो प्रतिदिन तीस हजार अण्डे दिया करती है। इसी कारण विगत पाँच-छः वर्षों में जितने भी भवन ग्रन्थालय के निर्मित किये गये हैं उनके नींव देने के समय ही उन रासायनिक द्रव्यों का उपयोग कर लिया जाता है जिससे बाद में किसी प्रकार के उपचार की आवश्यकता ही नहीं होती है।
- भंडार कक्ष के दीवार और फर्श की सफाई नियमित रूप से करते रहना चाहिए, जिससे धूल ग्रन्थालय सामग्री को प्रभावित न कर सके।
- ग्रन्थालय भंडार कक्ष के अन्दर किसी प्रकार के ज्वलनशील पदार्थ का उपयोग नहीं

होना चाहिए। पाठकों के लिए इसी दृष्टिकोण से धूम्रपान निषेध होना चाहिए। सभी प्रकार के विद्युत तार को पाइप के अन्दर से लगाना चाहिए। अस्थायी प्रकाश अथवा भारी विद्युत प्रवाह यंत्र का उपयोग नहीं करना चाहिए। समुचित फ्यूज, सरकिट ब्रेकर तथा अर्थिंग की व्यवस्था रहनी चाहिए। कार्यालय अवधि के बाद सभी प्रकार के विद्युत प्रवाह को रोक देना चाहिए। भंडार कक्ष के पास अग्निशामक यंत्र कैसा हो जिसके लिए भारतीय मानक में निम्नांकित धारा दिये गये हैं। जिसका अध्ययन प्रत्येक ग्रन्थालयी के लिए आवश्यक है :-

"IS : 11460-1991 Code of Practice for fire safety of libraries and archives buildings."

1.4.2 वातावरण की स्थिति

इस सम्बन्ध में विस्तृत विवेचन पूर्व के विवेचन में आ चुका है, जिसका शीर्षक ग्रन्थालय सामग्री की भंडारण स्थिति है।

जहाँ तक ताप का प्रश्न है उसके लिए सामान्य माप 22 डिग्री से0 - 25 डिग्री से0 के बीच है तथा सहभागी नमी का प्रश्न है, उसके लिए सामान्यतः 45 प्रतिशत से 55 प्रतिशत के बीच निर्धारित की गयी है। यह सबसे आदर्श स्थिति मानी गयी है, किन्तु यह स्थिति बनाये रखना तभी संभव है जब भवन वातानुकूलित हो, किन्तु भारत वर्ष के अधिकांश ग्रन्थालयों में यह उपलब्ध नहीं है। इसी कारण समुचित ताप, नमी रहित स्थिति इत्यादि बनाने के लिए यथासंभव अन्य उपलब्ध विधियों का प्रयोग किया जाता है।

1.4.3 निरार्द्रीकरण

जिस ग्रन्थालय में वातानुकूलन की व्यवस्था नहीं है, वहाँ आर्द्रता (नमी) पर नियंत्रण रखने के लिए ग्रन्थालयी की ओर से सुरक्षित कदम उठाना भी आवश्यक होता है क्योंकि आर्द्रता के कारण ही शीलन उत्पन्न होती है। खास तौर पर वर्षा ऋतु में यह अधिक प्रभावी हो जाती है। अतः इस पर नियंत्रण पाने के लिए ग्रन्थालयी द्वारा कुछ विशेष प्रकार के रासायनिक द्रव्यों का उपयोग किया जाता है - जैसे कैल्शियम क्लोराइड और सिलिका जेल इत्यादि। सिलिका जेल एक निश्चित मात्रा में (दो-तीन किलोग्राम) एक कमरे के लिए जिसकी लम्बाई-चौड़ाई 20x25 cm-mts की हो, के अन्तर्गत छोटे-छोटे तश्तरियों में निश्चित रूप से क्रमिक दूरी पर रख दिया जाता है। जब सिलिका जेल नमी को सोख लेता है तो ग्रन्थालय के अन्तर्गत स्वतः नमी पर नियंत्रण हो जाता है और वातावरण ग्रन्थालय सामग्री के अनुकूल हो जाता है। वैसे तो आजकल अन्य भी विभिन्न प्रकार के व्यापारिक साधन नमी को दूर करने के लिए उपलब्ध हैं, जिसका उपयोग समय-समय पर किया जा सकता है, किन्तु इसके लिए भंडारण कक्ष के स्थान का बड़ा होना आवश्यक है। छोटे स्थान पर इनका व्यापारिक उपयोग संभव नहीं है।

1.4.4 निराम्लीकरण

अम्ल भी नमी के समान ही ग्रन्थालय सामग्री को हानि पहुँचाती है। लकड़ी का बोर्ड, कपड़ा या चमड़े का उपयोग पाण्डुलिपि को बाँधकर रखने के लिए किया जाता है अथवा जिल्दसाजी में इसके साथ-साथ इन्ड पेपर का भी उपयोग किया जाता है। इन सामग्रियों पर अम्ल का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है

इसी कारण उपयोग से पूर्व ही इनका निराम्लीकरण करना आवश्यक होता है।

यदि किसी कारणवश अम्ल कागज को प्रभावित कर देता है तो ग्रन्थालय सामग्री निश्चित रूप से क्षतिग्रस्त होगी । इस बात का ध्यान कागज उत्पादन के समय देना ही आवश्यक होता है। अतः अम्लीय तत्व को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न विधियों का उपयोग किया जाता है। सबसे सामान्य विधि का नाम Morpholine Process (Barrow's) Vapour Phase Deacidification, wei To Process, diethyl Zinc Process. चूँकि ये रासायनिक द्रव्य प्रकृतितः हानिकारक हैं। अतः इनका उपयोग करते समय इन्हें ऊँचे स्थानों पर रखना अथवा मोटी गद्दियों पर रखना आवश्यक होता है। यह काफी मंहगे रासायनिक द्रव्य हैं जिसके कारण कुछ सस्ते द्रव्य भी बाजार में आ चुके हैं - जैसे : कैल्शियम हाइड्रोक्साइड, अमोनिया गैस और कैल्शियम बाइकार्बोनेट इत्यादि। किन्तु इन द्रव्यों का उपयोग करने से पूर्व सामग्री हेतु जिस स्याही का प्रयोग किया गया है उसके प्रकृति को जानना भी उतना ही आवश्यक है तथा कागज के मज़बूती की जानकारी भी समान महत्व रखती है।

उपर्युक्त रासायनिक द्रव्यों के उपयोग का भी अपना हानि और लाभ दोनों है। यदि ग्रन्थालय सामग्री के प्रकृति को जानते हुए सही मात्रा में सही समय पर उपयोग करने से ग्रन्थालय सामग्री की आयु बढ़ती है ठीक इसके विपरीत थोड़ी सी असावधानी से यह ग्रन्थालय सामग्री को पूरी तरह समाप्त कर सकता है। किसी एक रासायनिक द्रव्य का प्रभाव तेज गति से भी होता है और मध्यम गति से भी। ऐसी स्थिति में ग्रन्थालय सामग्री के उपचार के लिए सही द्रव्य का चुनाव बहुत ही सावधानी से करना पड़ता है और उसके लिए ग्रन्थालय के पास उपलब्ध अर्थव्यवस्था पर भी उतना ही ध्यान देना पड़ता है।

1.4.5 विशिष्ट सामग्री का परिरक्षण

परम्परागत व्यवस्था के तहत इन उपर्युक्त पाण्डुलिपियों को लकड़ी के दो बोर्ड के बीच एक साथ बाँधकर रखा जाता है और बाद में इसे कपड़े के अन्दर बाँध दिया जाता है जिससे धूप और कीड़े मकोड़े से बचाव होती है। इस परम्परागत व्यवस्था का मूल उद्देश्य पाण्डुलिपि के विभिन्न टुकड़ों पर दबाव नहीं पड़ना है तथा धूल से भी उसका बचाव होना है। यदि ये टुकड़े मुड़ जाते हैं तो इसके टूटने और फटने का भी डर रहता है। अतः इसे बाँधते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि ये न तो अधिक जोर से बँधे हुए हों और न अधिक ढीले हों।

पाण्डुलिपियों को सुरक्षित रखने का उपयोगी उपाय यह है कि इन्हें लकड़ी के बने कार्डबोर्ड बॉक्स में खोलकर रखना चाहिए। इस बॉक्स का आकार पत्तियों के आकार से बड़ा होना चाहिए जिससे इसे आसानी से रखा और निकाला जा सके। सामान्य उपयोग से बचाना चाहिए।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो गया है कि पाण्डुलिपि बहुत ही परिश्रम से बनायी गयी एक दुर्लभ सामग्री है जिसका ग्रन्थालय में होना गौरव की बात है। अतः इसको सुरक्षित रखने के लिए भी अलग-अलग रखना ही श्रेयस्कर है जिससे सही समय पर सभी पत्तियों की सफाई और रख-रखाव सावधानीपूर्वक किया जा सके।

फिल्म :- फिल्म को विभिन्न प्रकार के खानों में रखा जाता है जो धातु के बने बॉक्स में होते हैं। मैक्रोफिश के लिए अलग-अलग लिफाफे होते हैं। इन बॉक्सों को ठंडे, सूखे और प्रदूषण रहित वातावरण में रखा जाता है यह आवश्यक भी है क्योंकि फिल्में कीमती होती हैं और इनमें क्षति में भी तेजी होती है। ध्यान नहीं देने पर अथवा सही वातावरण नहीं रखने पर इनके स्ट्रिप्स अथवा पत्तियाँ आपस में चिपक जाती हैं और उसका उपयोग संभव नहीं रहता।

28

- **जिल्दसाजी :–** ग्रन्थालय सामग्री में जिल्दसाजी का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है। कागज के अतिरिक्त इसमें धागे अथवा अन्य सामग्री का प्रयोग सुनिश्चित है। इसकी जाँच एक ग्रन्थालयी ही कर सकता है। वही इसको प्रमाणित कर सकता है कि एक जिल्दसाजी ने मानक सामग्री का उपयोग किया है तथा जिल्दसाजी के क्रम में मानक प्रक्रिया को भी अपनाया है। इस सम्बन्ध में भारतीय मानक संहिता की निम्नांकित कोड में विस्तृत निर्देश दिये गये हैं : "Code of Practice for reinforced binding of library books and periodicals."

सामान्यतया धूलकण, शीलन इत्यादि के कारण जिल्दसाजी को क्षति पहुँचती है। खास तौर पर जब जिल्दसाजी में चमड़े का उपयोग किया जाता है। इन चमड़ों पर विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों का लेप लगा दिया जाता है, जिससे सामग्री क्षतिग्रस्त नहीं होती है। इसका निराद्रीकरण एवं निरा अम्लीयकरण भी कर दिया जाता है, जिससे यह काफी टिकाऊ हो जाता है और इन पर कीड़ों का भी प्रभाव नहीं होता है। इन लेपों को लिनियन इडिसियस बीज बाक्स, मिट्टी का तेल तथा बेंजीन से तैयार किया जाता है। यह मिश्रण जहाँ चमड़े को जिल्दसाजी के लिए उपयोग में लाया जाता है उसी बॉक्स के अन्तर्गत किया जाता है। साथ ही जहाँ उन सामग्री को रखा जायेगा (चमड़े से जिल्दसाजी किया हुआ) उस बॉक्स के अन्दर भी इसका लेप चढ़ा दिया जाता है, जिससे सामग्री पूर्ण सुरक्षित रहती है।

1.4.6 जैवीय नियंत्रण मापक

ग्रन्थालय के महत्वपूर्ण दुश्मनों में जैवीय प्राणियों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इनसे बचने के लिए भी ग्रन्थालयी द्वारा सहज और स्वाभाविक ढंग से कार्यों का निष्पादन किया जाता है। सर्वप्रथम परम्परागत रूप से इस कार्य के लिए नेपथालिन के गोलियों का प्रयोग किया जाता है जिसे फलक के बीच-बीच में प्रयोग किया जाता है। यह अत्यन्त ही प्रभावी दवा है जो साधारण कीटों को मारने में पूर्ण सक्षम हैं। यह काफी सस्ती है। इससे कुछ महँगा पैराडाइक्लोरी बेंजीन तथा किरोसिन के तेल का घोल बनाया जाता है। इस घोल को भंडार कक्ष में तशतरियों में जगह-जगह रख दिया जाता है। इससे भी कीड़े स्वयं नष्ट हो जाते हैं। तीसरे दवा के रूप में दस प्रतिशत (10%) के अनुपात में थाइमोल तथा स्प्रिट का घोल तैयार किया जाता है और इसका छिड़काव भंडार कक्ष में किया जाता है। छोटे-छोटे ग्रन्थालय में इसकी जरूरत कभी-कभी होती है किन्तु बड़े-बड़े ग्रन्थालय में यह छिड़काव नियमित रूप से किया जाता है।

1.4.7 निरीक्षण और सफाई

उपर्युक्त सभी कार्यों के अतिरिक्त ग्रन्थालय सामग्री के परिरक्षण के लिए निम्नांकित अन्य दो कार्य भी किये जाते हैं। इसे दो चरण भी माना जाता है, जो निम्नलिखित हैं :

- प्रथम चरण में वह सभी सामग्रियों का नियमित रूप से निरीक्षण करता है। खास तौर पर उन जगहों को जो कोने तथा अंधेरे में हैं। इसके द्वारा सूक्ष्म जैवीय जीवों का प्रभाव उनके निगाह में तत्काल आ जाने से इसके प्रभाव को रोकने में वह सक्षम हो जाता है।

- इस क्रम में वह सफाई और धूल झाड़ने का कार्य नियमित रूप से करवाता है और यह सुनिश्चित कर लेना है कि इन धूलकणों से किसी भी सामग्री को क्षति नहीं पहुँचे। इसके अतिरिक्त इसी क्रम में वैक्यूम क्लिनर (vacuum cleaner) का भी उपयोग होता है।

1.5 विकासशील देशों के लिए परिरक्षण एक चुनौती के रूप में

एशिया के विभिन्न विकासशील देशों में ग्रन्थालय सामग्री का परिरक्षण एक सामान्य कारक हो गया है कि गर्म और आर्द्रतापूर्ण वातावरण से इसकी रक्षा कैसे किया जाय ? एशिया ही क्यों यह कारक अफ्रीका तथा दक्षिणी अमेरिका के देशों पर भी लागू होता है। इन देशों का वातावरण पूर्ण गर्म है तथा मौसम भी बहुत ही तेजी से बदलता रहता है। बरसात के समय तथा सूखे के समय अलग-अलग परिस्थितियाँ सामने आती हैं। ऐसी स्थिति में परिरक्षण के एक ही उपाय उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकता। इन बदलते मौसमों का प्रभाव भी ग्रन्थालय सामग्रियों पर बुरी तरह पड़ता है। इन परिस्थितियों का सामना यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के ग्रन्थालयों को नहीं करना पड़ता है।

ताप, आर्द्रता, धूल तथा अन्य प्रदूषण जैसे कागज में छिद्र होना, उस पर धब्बों का आना, धूल कण का जमना तथा विभिन्न कीड़ों का प्रकोप होना। ये सभी विकासशील देशों के लिए यह गंभीर समस्या है, क्योंकि यहाँ यह अत्यन्त तीव्र गति से बढ़ता है। ध्रुवीय प्रदेशों में जहाँ मौसम में परिवर्तन न के बराबर होता है वहाँ बिना वातानुकूलन के भी ग्रन्थालय सामग्री का परिरक्षण किया जा सकता है, क्योंकि यहाँ एक बार जो व्यवस्था कर दी गयी उसमें फिर परिवर्तन की आवश्यकता नहीं होती। इसके विपरीत गर्म प्रदेशों में तथा परिवर्तनशील मौसम वाले प्रदेशों में वातानुकूलन अति आवश्यक है। किन्तु अर्थाभाव के कारण यह संभव नहीं हो पाता है। आर्थिक स्थिति किसी भी परिरक्षण व्यवस्था का आधार स्तंभ है, जो सभी योग्यताओं को पंगु बना देती है। इसी कारण निराद्रीकरण, निराअम्लीयकरण इत्यादि के लिए सहज और सुलभ व्यवस्था दी गयी है।

भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह और भी कठिन है, क्योंकि यहाँ दुश्मन अधिक हैं और सुरक्षा के उपाय कम। ऐसी स्थिति में परिरक्षण एक ग्रन्थालयी के लिए चुनौतीपूर्ण काम है।

हम लोग किसी भी स्थिति में पूर्ण क्षतिग्रस्तता को नहीं बचा सकते हैं, क्योंकि यहाँ के वातावरण के अनुकूल क्षतिग्रस्तता नियमित रूप से होगी ही। अतः यहाँ समय-समय पर उसके मरम्मत का उपाय आवश्यक है। इसी कारण यहाँ समय-समय पर ग्रन्थालय के सामानों का सही भंडारण करते समय ही वातावरण पर ध्यान देना आवश्यक है तथा यथासंभव परिरक्षण के उपाय को भी बनाये रखना आवश्यक है।

1.6 संरक्षण : पुनरुद्धार

जब सामग्री क्षतिग्रस्त हो जाती है तब संरक्षण की आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि इसे ही प्राथमिक उपचार के चरणों का क्रमिक रूप से वर्णन किया गया है, जिससे एक ग्रन्थालयी अपनी प्रतिदिन के क्रिया-कलापों में शामिल कर सकता है। कुछ ऐसे उपचार विधि जिसे मात्र विशेषज्ञ ही कर सकते हैं, उसे छोड़ देता है।

संरक्षण एवं पुनरुद्धार की तकनीक पुनर्विचार और पुनरावृत्ति के द्वारा ही संभव है। संरक्षक के लिए यह संभव नहीं है कि ऐसी विधि अथवा कुछ ऐसा रासायन का उपयोग करे, जिससे संरक्षण अथवा पुनरुद्धार स्थायी हो जाय। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में नये-नये अविष्कार भी हो रहे हैं। अतः एक ग्रन्थालयी के लिए इतना ही आवश्यक है कि वह इन नये-नये अविष्कारों की जानकारी रखे।

1.6.1 मोड़ एवं रेखाओं को सीधा करना

पुस्तक के कुछ पृष्ठों में मोड़ अथवा रेखायें आ जाती हैं। कुछ समय बाद पुस्तक के किनारे भी मुड़ने लगते हैं, जहाँ से प्रभावित भाग कमजोर पड़ जाता है और फटने लगता है। अतः जैसे ही इस पर

निगाह पड़े तत्काल ही इसे सीधा करने की व्यवस्था करना चाहिए। चूँकि यह अधिक ताप के कारण होता है इसी कारण इसे सबसे पहले इसे स्पंज के उपयोग से कोमल बनाना चाहिए और यदि इसका कारण नमी हो तो इसके आगे-पीछे ब्लौटिंग पेपर लगाना चाहिए। इसके बाद ठंडे लोहे से अथवा यदि आवश्यक हो तो हल्के गर्म लोहे से सीधा कर देना चाहिए।

1.6.2 अल्पमात्रा में फटे हुए भागों की मरम्मत

जब ग्रन्थ कहीं-कहीं से फट जाय तो ऐसी स्थिति में अच्छे श्रेणी के पतले पारदर्शी पेपर का लम्बा लम्बा टुकड़ा काट लेना चाहिए और फटे हुए भाग पर दोनों तरफ से चिपका देना चाहिए। सामान्यतया इसके लिए टिशु पेपर का भी उपयोग किया जाता है। साधारण स्तर के गोंद अथवा लेई का उपयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह सूखने के बाद सिकुड़ जाता है। जिल्दसाज के द्वारा तैयार किया गया लेई का ही उपयोग किया जाना चाहिए जो गेहूँ के आटा में दो-तीन प्रतिशत फोरमेलिन मिलाकर बनाया जाता है। यदि पारदर्शी टिशु पेपर का उपयोग किया जाता है तो डेक्स ट्राइम पेस्ट अथवा सोडियम साल्ट और कार्बोक्सी मिथाइल सेल्यूलोज पेस्ट का उपयोग किया जाना चाहिए। इन पेस्टों के द्वारा टिशु पेपर की भी मरम्मत की जा सकती है।

1.6.3 प्राथमिक उपचार

यदि प्रलेख के पृष्ठ बीच-बीच से फट गये हों अथवा जिल्दसाजी ढीली पड़ जाय तो ऐसी स्थिति में निम्नलिखित विधि का उपयोग करना चाहिए :

- टिशु मरम्मत : पूरे पृष्ठ को जापानी टिशु पेपर लगा देना चाहिए।
- सिफान रेपेयर : उच्च श्रेणी के पारदर्शी सिफान के कपड़े भी लगा देना चाहिए।
- ताप के सहारे सेल्यूलोज फॉइल को बीच में लगा देना चाहिए। इसे ही लेमीनेशन कहते हैं।

उपर्युक्त में से प्रथम दो विधियाँ ग्रन्थालय कर्मचारी के थोड़े से प्रशिक्षण के बाद आसानी से करवायी जा सकतीं हैं, किन्तु तीसरी विधि में निश्चित रूप से विशिष्ट प्रकार के सामग्री, यंत्र एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। सामान्यतया भोजपत्र और ताड़पत्र के पाण्डुलिपियों के लिए सिफान मरम्मत ही उपयोगी है।

1.6.4 कवक प्रभावित पृष्ठों का उपचार अथवा धब्बों को मिटाना

ग्रन्थालय सामग्री के पृष्ठों पर विभिन्न कारणों से गोल-गोल धब्बा दिखाई देता है इसको हटाने की भी विभिन्न विधि है जिसे नीचे तालिका में दिखाया गया है। लेकिन जो धब्बे भयानक स्थिति में हो उससे छेड़-छाड़ नहीं करना चाहिए। बल्कि इसे विशेषज्ञ के पास भेजना चाहिए, क्योंकि यदि ग्रन्थालयी जानकारी की कमी में गलत रासायनिक द्रव्यों का प्रयोग करेगा तो सामग्री को अधिक हानि होगी। ऐसी स्थिति में विशेषज्ञ से सलाह लेना निश्चित रूप से जरूरी है।

धब्बों की प्रकृति		कुछ उपयोगी रासायनिक द्रव्य
• पानी, प्रकाश अथवा उँगली के दाग से बने धब्बे	–	20 ग्राम क्लोरीन टी पर लीटर ऑफ डिस्टिल्ड वाटर फार बेटर रिजल्ट : कैल्शियम हाइपोक्लोराइड

• ग्रीस, अल्कतरा अथवा तार से बने धब्बे	–	कार्बन टेट्राक्लोराइड
• तेल अथवा वाष्प से बने धब्बे	–	हेक्सेन एण्ड टॉलिन
• कीट से बने धब्बे	–	हाइड्रोजन पेराक्साइड मिक्सड विथ एन इक्वल वाल्यूम ऑफ एल्कोहल
• चाय और काफी से बने धब्बे	–	2: साल्यूशन ऑफ पोटैशियम परबोरेट इन वाटर
• स्याही से बने धब्बे	–	साइट्रिक एसिड इन वाटर

किसी भी रासायनिक द्रव्य का उपयोग करने से पहले यह आवश्यक है कि पहले छोटे से भाग पर इसका उपयोग करके देख लेना चाहिए और यदि वह सही साबित हो तो इसका उपयोग करना चाहिए।

1.6.5 फ्यूमीगेशन (Fumigation)

आम भाषा में इसे धुआँ दिखाना भी कहा जाता है। इस कार्य के लिए निम्नलिखित प्रकार की धूमन प्रक्रिया की जा सकती है। वायु प्रदूषण कवक या कीटों को खत्म करने के लिए बहुत उपयोगी साबित होता है। भारत के आम ग्रन्थालयों में नीम के सूखे हुए पत्तों को जलाकर फ्यूमीगेशन की प्रक्रिया संपादित की जाती है। रासायनिक पदार्थों यथा पेराइड क्लोरोबेंजीन, कार्बन डाइसल्फाइड, कार्बन टेट्राक्लोराइड, मिथाइल ब्रोमाइड इत्यादि के वाष्पीकरण से भी फ्यूमीगेशन किया जाता है जिससे जैवकीय शत्रु को नाश किया जाता है। तीसरा आधुनिक ग्रन्थालय में एक फ्यूमीगेशन चैम्बर होता है जहाँ यह प्रक्रिया संपादित की जाती है। कीटों तथा कवक को रोकने के लिए यह बहुत ही उपयोगी विधि है। इसका प्रभाव तत्काल देखा गया है।

फ्यूमीगेशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा सभी सक्रिय जैव कार्य प्रतिनिधियों का तत्काल विनाश किया जाता है। जिस ग्रन्थ पर कवक या ग्रन्थ कीट का आक्रमण हो जाता है उसको फ्यूमीगेशन द्वारा समाप्त किया जाता है जो निम्नलिखित चरण में होते हैं :

प्रथम चरण में इन ग्रन्थों को छाँटकर ऐसी जगह पर रखा जाता है जहाँ पर उसे हवा नहीं लगे। जिससे अन्य ग्रन्थों को प्रदूषित होने से बचाया जा सके।

दूसरे चरण में निम्नांकित रसायन को फ्यूमीगेशन के लिए निर्देशित किया जाता है जो न तो ग्रन्थ के लिखित पक्ष को क्षति पहुँचाता है और न तो कागज के रंग को बदलता है।

- थाईमोल; 100-150 ग्राम प्रति किमी0 स्थान हेतु,
- कार्बो टेट्रा क्लोराइड तथा इथलिन डाइक्लोराइड का मिश्रण (:3) 225 एम एल प्रति किमी0 स्थान के लिए
- पैरा डाइक्लोरोबेंजीन : 400-500 ग्राम प्रति किमी0 स्थान के लिए

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो चुका है कि आजकल फ्यूमीगेशन चैम्बर का उपयोग भी हो रहा है। यह एक प्रकार का बॉक्स या आलमारी होता है। यह लकड़ी या स्टील का बना होता है जिसमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं जिसके सहारे धुआँ को एक खाने से दूसरे खाने तक पहुँचाया जाता है। इसमें चार या छः खाना होता है, जिसके दोनों ओर छिद्र क्रम से ग्रन्थ रख दिये जाते हैं। इसके भीतर ही फ्यूमीगेशन की क्रिया की जाती है। दरवाजे को कस कर बन्द कर दिया जाता है तथा निर्वात पम्प के द्वारा अन्दर की हवा को बाहर खींच लिया जाता है। जिससे चैम्बर वायु रहित हो जाता है। आवश्यक

1.7 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में परिरक्षण और संरक्षण से सम्बन्धित मुख्य बिन्दुओं पर ध्यान दिया गया है। परिरक्षण जहाँ एक ओर रख-रखाव की व्यवस्था सुनिश्चित करता है वहीं संरक्षण पुनरुद्धार (Restoration) की प्रक्रिया को सुनिश्चित करता है। एक ग्रन्थालयी की भूमिका के अन्तर्गत परिरक्षण और संरक्षण दोनों ही क्रियाएँ आती हैं। परिरक्षण के अन्तर्गत ग्रन्थालय को व्यवस्थित करने से सम्बन्धित एक वृहत योजना स्थापित की जाती है। इस कार्य को पूरा करने के लिए विभिन्न विधियों को बताया गया है, जो ग्रन्थालय सामग्री के स्वभाव के अनुकूल परिरक्षण कार्य के लिए आवश्यक है -जैसे ग्रन्थालय का वातावरण, कीटों के विनाश की व्यवस्था, नियमित रूप से देख रेख और सफाई इत्यादि महत्वपूर्ण कारकों का विवरण इस इकाई में दिया गया है। साथ ही संरक्षण से सम्बन्धित विभिन्न तकनीकों तथा पुनरुद्धार से सम्बन्धित विभिन्न विधियों और सामग्रियों का वर्णन किया गया है।

इकाई 2 : ग्रन्थालय सामग्री के प्रकार एवं उनका संरक्षण : प्राचीन पाण्डुलिपियाँ एवं मुद्रित प्रलेख
TYPES OF LIBRARY MATERIALS AND THEIR PRESERVATION : ANCIENT MANUSCRIPTS AND PRINTED DOCUMENTS.

संरचना

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ : एक विवरण

- 2.2.1 प्राचीन सामग्री
- 2.2.2 प्रमुख विशेषतायें
- 2.2.3 लिखने के लिए तालपत्र को तैयार करने की विधि
- 2.2.4 लेखन
- 2.2.5 फार्मेट

2.3 परिरक्षण विधि

- 2.3.1 भंडारण विधि
- 2.3.2 भंडारण पर्यावरण
- 2.3.3 कीटों से बचाव
- 2.3.4 फ्यूमीगेशन
- 2.3.5 मरम्मत एवं पुनरुद्धार

2.4 भोजपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ : एक विवरण

- 2.4.1 सामान्य स्वभाव
- 2.4.2 क्षतिग्रस्तता के कारण और स्वभाव
- 2.4.3 मरम्मत और रख-रखाव

2.5 निष्कर्ष

2.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

प्राचीन युग से ही भारत में तालपत्र और भोजपत्र का उपयोग लेखन के रूप में हो रहा है। भारत विश्व का सबसे पुराना देश है जहाँ सभ्यता का आगमन हुआ। सभ्यता का प्रथम चरण ही लिपि और लिखित अभिलेख से हुआ है। इसी कारण से भारतीय ग्रन्थालय में तालपत्र और भोजपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ बहुत मिलती हैं और इसका अपना खास महत्व है। इस इकाई का अध्ययन करने पर निम्नलिखित तथ्य पर स्पष्ट धारणा प्राप्त होगी।

- लेखन सामग्री का उद्‌भव कैसे हुआ
- लेखन् सामग्रियों के निर्माण की प्रक्रिया क्या है
- इन सामग्रियों के विशिष्ट स्वभाव
- इन सामग्रियों पर लिखने की विधि तथा उपकरण
- इन सामग्रियों के रख-रखाव, परिरक्षण और पुनरुद्धार कैसे किया जाता है
- इन सामग्रियों का उपयोग

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

तालपत्र और भोजपत्र पर लिखने के लिए भारत में दो खास प्रकार के लेखनीय सामग्री उपलब्ध है, जिनका उद्‌भव 10 वीं शताब्दी से पहले का है। कागज का आविष्कार पहली बार भारत में 11 वीं शताब्दी में हुआ था। इससे पहले लिखने के लिए तालपत्र या भोजपत्र को ही काम में लाया जाता था। इनका इकाई 1 में संक्षिप्त परिचय दिया जा चुका है, उसी का विस्तृत विवरण इस इकाई में दिया जा रहा है जो भारतीय ग्रन्थालयों में इसकी स्थानीय महत्ता को देखते हुए आवश्यक भी है।

प्राचीन साहित्य के साथ-साथ एशियाई साहित्य के भी सैकड़ों अभिलेखों का संग्रह भारतीय ग्रन्थालयों तथा संग्रहालयों में देखने को मिलता है। देश के कोने-कोने के ग्रन्थालय में इसका जाल फैला हुआ है। बहुत सारे ग्रन्थालय तो ऐसे हैं जहाँ भोजपत्र और तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियों की एक अलग इकाई ही है। भारत के विभिन्न मंदिरों और मस्जिदों में भी भोजपत्र और तालपत्र से बने अभिलेखों का संग्रह देखने को मिलता है। निजी ग्रन्थालय में भी इसका संग्रह देखा जा रहा है। ऐसी स्थिति में यदि यह कहा जाय कि भोजपत्र और तालपत्र भारतीय संस्कृति से जुड़े हुए हैं तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

कुछ ग्रन्थालयों, संग्रहालयों तथा अभिलेखागारों को छोड़कर सामान्यतया यह देखा जा रहा है कि इन अभिलेखों का उपयोग असावधानीपूर्वक किया जा रहा है तथा इसका रख-रखाव भी ठीक ढंग से नहीं किया जा रहा है। बहुत से जगह पर इनके भंडारण की वैज्ञानिक व्यवस्था नहीं की जा रही है जिसके कारण उन्हें भयंकर क्षति पहुँच रही है और भविष्य में इनके समाप्त हो जाने का डर बना हुआ है। अतः यह बहुत जरूरी है कि इनका भंडारण सुनिश्चित मापदंड के अनुसार वैज्ञानिक विधि से किया जाय तथा क्षतिग्रस्त भोजपत्रों और तालपत्रों के पाण्डुलिपियों को वैज्ञानिक ढंग से पुनरुद्धार किया जाय।

क्षतिग्रस्तता के कारणों से इसे यथासंभव दूर रखा जाय। चूँकि ये हमारे संस्कृति के धरोहर हैं। ऐसी स्थिति में इनका विनष्ट होना हमारे संस्कृति का विनष्ट होना है। अतः प्रत्येक ग्रन्थालयी का यह नैतिक दायित्व है कि अपनी संस्कृति धरोहर की रक्षा के लिए सही वैज्ञानिक व्यवस्था स्थापित करें।

2.2 तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ : मुख्य विवरण

2.2.1 प्राचीन सामग्री :

भारत के लेखनीय सामग्री में तालपत्र सबसे प्राचीन सामग्री के रूप में उपलब्ध है। ताल के वृक्षों को तथा तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियों को सबसे पहले मध्य एशिया के तकिया मकान नामक मरुभूमि से प्राप्त किया गया लेकिन कोई भी ऐसा प्रमाणिक अभिलेख नहीं मिल पाया है जिसके माध्यम से इसकी सही प्राचीनता का पता चल सके। तत्काल उपलब्ध तालपत्र की पाण्डुलिपि के बारे में यह साक्ष्य मिल रहा है कि यह चौथी शताब्दी के आस-पास की है जो गार्ड फ्रे संग्रह के अन्तर्गत काश्मीर

35

में खासघर नामक ग्रन्थालय में मिला है। इन पाण्डुलिपियों का उपयोग गुप्तकाल में भारतीय इतिहास में उपलब्ध है जो 6वीं शताब्दी के माने जा रहे हैं। इन पाण्डुलिपियों को जापान में होराइजी नामक ग्रन्थालय में परिरक्षित करके रखा गया है। तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ 7वीं शताब्दी में जो गुप्तकालीन भारतीय इतिहास का समय था, यह नेपाल में पायी गयी है।

भारत में तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ 10वीं शताब्दी में पायी गयी लेकिन इसकी संख्या बहुत ही कम हैं जिसका कारण यह है कि सही रख-रखाव नहीं होने की वजह से अधिकांश मात्रायें विनष्ट हो गई। कुछ महत्वपूर्ण लिपियां ताल पत्र की 11 वीं शताब्दी की भी हैं। भारत के विभिन्न ग्रन्थालयों में 11वीं और 12वीं शताब्दी के बीच की बनी पाण्डुलिपियां बहुत मात्रा में देखी जा सकती है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि 11वीं और 12वीं शताब्दी में भारत में प्रचुर मात्रा में तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियां आयी या तालपत्र को लेखनीय सामग्री के रूप में इस काल में अत्यन्त द्रुत गति से प्रयोग किया गया।

जैन धर्म से सम्बन्धित सैकड़ों की संख्या में ग्रन्थालय (जनाना भंडार - **Jnana bhandars**) भारत में उपलब्ध है; जिसे जैसलमेल के किला में देखा जा सकता है, जहाँ तालपत्र से बने पाण्डुलिपियों का भंडार पड़ा है। शंभुनाथ जैन मंदिर जो इसी किला के नजदीक है में भी इसका एक विशाल भंडार है। इस संग्रह में एक प्रमुख पाण्डुलिपि जिसका नाम (पंचमी कहा) है, जिसे विक्रम संवत 1109 तथा ई0 सन् - 1052 में लिखा गया है। गुजरात में पाये जाने वाले एक ग्रन्थालय का नाम ही पाठान पाण्डुलिपि भंडार है, जहाँ मात्र तालपत्रों का ही भंडार है। सबसे अद्यतन पाण्डुलिपि का नाम निशिग्राचुर्नी नाम अभिलेख है, जिसे विक्रम संवत 1157 तथा ई0 सन् 1101 में लिखा गया है। बहुत ही कम ऐसे तालपत्र पाण्डुलिपि उपलब्ध है जिससे यह जाना जा सके कि वह किस काल में बना क्योंकि प्राचीनतम पाण्डुलिपियों पर सुनिश्चित तिथि नहीं दी गयी है जिससे इसके प्राचीनता को आंकना सम्भव नहीं हो पा रहा है।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि तालपत्रों से बनी पांडुलिपियाँ प्राचीनतम अभिलेखों में से एक है। ये व्याख्यात्मक और विस्तृत है, भारत में भी तालपत्रों को लेखनीय सामग्री के रूप में विश्व के किसी भी देश से पहले प्रारंभ हुआ और इसका विस्तार सम्पूर्ण विश्व में हुआ क्योंकि यह भारत लेकर सम्पूर्ण विश्व के विभिन्न ग्रन्थालयों में उपलब्ध है। खासतौर पर दक्षिण के रेगिस्तानों और भारत में और पूर्वी भारत में तो यह प्रचुर मात्रा पाया जा रहा है। इसका एक कारण और भी है कि तालपत्रों को धार्मिक दृष्टिकोण से भी पवित्र और उपयोगी माना गया है। इसे शुभ माना गया है, इसी कारण धार्मिक जगहों पर इसका संग्रह पाया जा रहा है और आज भी खासतौर पर बिहार के मिथिला में वैवाहिक सम्बन्धों का पंजीयन तालपत्रों पर ही किया जाता है।

2.2.2 प्रमुख विशेषताएँ

सामान्यतया तालवृक्ष लम्बा, खड़ा और बिना शाखाओं वाले खंभे की आकृति का होता है। सबसे ऊपर पत्तियों का गुच्छा होता है। ताल विभिन्न प्रकार के पाये जाते हैं जों विभिन्न प्रकार के रेगिस्तानों और महादेशों में पाये जाते हैं। भारत में इसके मुख्य तीन प्रकार पाये जाते हैं, जिनमें से दो प्रकार के तालपत्र ही लेखनीय सामग्री के रूप में प्रयोग में लाया जाता है जो निम्नलिखित है

तालपत्र

- बोरासस फ्लेबेलिफर लिन (ताड़)
- कोरिफा अनब्रेकुलिफेश लिन (ताली)
- कोरिफा तालिरारोख्स्य

बोरासस फ्लेबिलिफर लिन (ताड़):

दक्षिण में यह ताल थाली योला के नाम से जाना जाता है। बोरासस फ्लेबिलिफर लिन इसका वनस्पतिक नाम है। हिन्दी में इसे ताला अथवा प्लाम्बरा अथवा पंखिया ताड़ या पनिया ताड़ भी कहते

हैं। तुलनात्मक रूप से इसकी पत्तियाँ मोटी, रेशेदार होती हैं। चूँकि यह खुश्क जलवायु में पैदा होता है, इसी कारण इसमें लचीलापन भी नहीं होता है। यह सामान्यतया दक्षिण भारत तथा मालवाड़ द्वीप समूह में भी पाया जाता है किन्तु यह भारत के अन्य भागों में भी यथा-उड़ीसा, बंगाल तथा श्रीलंका में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इसे कीड़े-मकोड़े आसानी से नुकसान पहुँचा सकते हैं, जो थोड़ा-बहुत लचीला होता है वह भी समय के साथ कम होता चला जाता है।

कोरिफा अनब्रे कुलिफेरा लिन (ताली)

दक्षिण भारत में इसे कड़ीमना और उत्तर भारत में इसे श्रीताल कहते हैं। कोरिफा अनब्रेकुलिफेरा लिन इसका वनस्पति नाम है। संस्कृत भाषा में इसे तालीपोत कहते हैं इसके अतिरिक्त इसे कड़ालिका अथवा श्री ताल के नाम से भी पुकारते हैं। यह मालवाड़ द्वीप समूह में बहुत ज्यादा पाया जाता है। यह नम जलवायु और तटबर्ती क्षेत्र में जहाँ आर्द्रता बनी रहती है ज्यादातर पाया जाता है। इसकी पत्तियाँ सूखने पर मुलायम हो जाती है और यह हल्के रंग की होती है तथा इसमें काफी लचीलापन भी होता है, जिसके कारण इसके पत्तियों से चटाई, पंखे, छाते, टोकरियाँ, झोपड़ियों के छत आदि भी बनाये जाते हैं। अभी तक प्राप्त प्राचीनतम पाण्डुलिपि इसी प्रकार के तालपत्र पर लिखी मिली है। इस प्रकार के तालपत्र में लचक काफी लम्बे समय तक बनी रहती है।

कोरिफा तालिरा रोख्स्व

हिन्दी में इसे रूखे ताड़ के नाम से जाना जाता है। कोरिफा तालिरा रोख्स्व इसका वनस्पति नाम है। इस तरह के ताड़ के पेड़ की पत्तियाँ कुछ-कुछ हल्के भूरे रंग की होती हैं और इसमें काले रंग की नसें बनी रहती है। इसकी पत्ती मोटी होती है और इसमें लचीलापन नहीं के बराबर होता है। इसके पेड़ ज्यादातर बंगाल और तमिलनाडु के तटवर्तीय क्षेत्र में होते हैं। कीड़े–मकोड़े भी इन्हें आसानी से हानि पहुँचा सकते हैं।

उपर्युक्त तीनों तरह के तालपत्रों में तालीपोत (श्रीताल) नाम का तालपत्र अधिक कोमल, चिकना और लचकदार होता है, जबकि पंखिया ताड़ अथवा रूखे ताड़ की पत्तियाँ खुरदरी और मोटी होती हैं। श्री ताल किस्म की तालपत्र पंख्यिा तालपत्र की तुलना में कहीं अधिक समय तक चलता है। इस वजह से लेखनीय सामग्री के रूप में विश्व के विभिन्न भागों में इसका उपयोग हो रहा है : जैसे श्रीलंका, थाईलैण्ड, मलेशिया और पूर्व के अन्य देशों में श्रीताल का ही उपयोग किया जाता है लेकिन भारत और नेपाल में तीनों प्रकार के तालपत्रों का उपयोग किया जाता है। इसी कारण भारतीय ग्रन्थालय के पास इसके परिरक्षण, संरक्षण और पुनरुद्धार की मूलभूत समस्यायें पैदा हो गई हैं।

2.2.3 लिखने के लिए तालपत्र को तैयार करने की विधि

भारत में और अन्य देशों में इसको अलग-अलग विधियों से तैयार किया जाता है। दक्षिण भारत में तालपत्र की पत्तियों को छाँह में सुखा लिया जाता है तब उनकी सतह पर तिल या गुगली का तेल लगा दिया जाता है जिससे उसकी सतह चिकनी हो जाती है। इसी प्रदेश के कुछ और जगहों पर ताल के मुलायम पत्तों को रसोई-घर में टाँग दिया जाता है, जहाँ धुआँ निकलता हो। कुछ दिनों के बाद उन्हें रसोई घर से हटाकर साफ कर लिया जाता है, जिससे कि वह लिखने के काम में आने के लिए तैयार हो जाय।

उड़ीसा और पूर्वी भारत के कुछ हिस्सों में भी तालपत्रों को रसोई में टांग कर रखने और कुछ दिनों बाद उनपर जमे हुए धुएँ की परत को साफ करने की विधि अपनायी जाती रही है, उसके बाद पत्तियों पर हल्दी का लेप लगा दिया जाता है जिससे उनका रंग हल्का पीला हो जाता है। इसके अतिरिक्त और भी विधि काम में लायी जाती है यथा पत्तियों को धूप में सुखा लिया जाता है और उसके 10 से 15 दिन तक उसक मिट्टी में दवा कर रखा जाता है उसके बाद उन्हें निकालकर साफ कर लिया जाता है और पुनः धूप में रखा जाता है और सूखने के बाद हल्दी का लेप लगा दिया जाता

है।

खुरदरी और पकी हुई पत्तियों को मुलायम बनाने के लिए उन्हें कुछ समय तक पानी में डालकर उबाला जाता है और उसके बाद निकालकर उसे धूप या ओस में सुखाया जाता है, सूख जाने पर उनपर हल्दी का लेप लगाया जाता है और इच्छित आकार में काट लिया जाता है। श्रीलंका मे ताल की ताजी पत्तियों को सादा पानी या चूने के पानी में उबालकर उन्हें छाँह में सुखाया जाता है और बाद में उसे इच्छित आकार में काट लिया जाता है।

थाइलैण्ड में अपनायी जाने वाली विधि उपरोक्त सभी विधियों से एकदम अलग है। वहाँ ताल वृक्ष की ताजी पत्तियों को छाँह में सुखाकर उनमें मौजूद कड़ी नसों को तेज चाकू से निकाल दिया जाता है और लकड़ी के दो तख्तों के बीच लगभग 50 पत्तियों को रखकर जितनी लम्बाई-चौड़ाई में जरूरत हो उसी आकार में काट लिया जाता है, काटने के बाद उन्हें खास तौर से तैयार की गई एक भट्ठी में रखा जाता है, जिसके ऊपर और नीचे दो हिस्से बने रहते हैं और जिनमें दरवाजे लगे होते हैं ऊपर वाले हिस्से में तालपत्र को पुलिंदा बनाकर रखा जाता है, जहाँ 24 घंटे तक इसे गर्म किया जाता है। नीचे वाले हिस्से में आग जलाया जाता है। दोनों हिस्से में बने दरवाजे को बन्द कर दिया जाता है। 24 घंटे बाद जब इन पुलिन्दों को बाहर निकाला जाता है तब पत्तियों से रिस कर निकला हुआ तेल जो काला रंग का होता है पुलिन्दों के किनारे की तरफ जम जाता है, कपड़े से पोंछकर इसे साफ कर दिया जाता है और उसके बाद पुलिन्दा को खोलकर प्रत्यक पत्ते को साफ किया जाता है ताकि काले रंग का निशान बाकी न रहे। उसके बाद प्रत्यक पत्तक को खुली आग पर कुछ मिनट तक सेक लिया जाता है, उसके बाद उस पर पॉलिश कर दी जाती है तब यह पत्ता लिखने के लिए तैयार हो जाता है।

2.2.4 लेखन (Writing)

तालपत्र पर खास कर के श्रीताल पर लिखने का काम किया जाता है, क्योंकि यह लचीला, पतला और स्याही सूखने वाला होता है। यह काम दो तरह से किया जाता है :-

(i) उकेर कर लिखाई करना

(ii) कलम या ब्रश से लिखना

उकेर कर लिखने की विधि

तालपत्र पर उकेर कर लिखने का काम लोहे की छड़ से बनी एक कलम जैसे औजार से किया जाता है, जिसे स्टाइलस कहते हैं। जिसमें एक तरफ तेज नोक बनी रहती है और दूसरी तरफ उसमें चाकू भी बना रहता है , जिससे जरूरत पड़ने पर तालपत्र काटा भी जा सकता है। उकेर कर लिखने का कार्य भी दो तरह से किया जाता है। पहले तरीके में स्टाइलस को तालपत्र पर चलाया जाता है और दूसरे तरीके में उकेरने के लिए स्टाइलस यथावत रहता है और तालपत्र को ही घुमाया जाता है, लिखे गये अक्षर दिखायी दें इसके लिए लालटेन या दीपक की कालिख या कोयले की राख को तेल में मिलाकर लिखावट के ऊपर मल दिया जाता है। बची हुई कालिख और राख को मुलायम कपड़े से झाड़कर उसे साफ कर दिया जाता है। कभी-कभी किसी खास किस्म की पेड़ की पत्तियाँ ताल पत्र पर रगड़ी जाती हैं, जिससे उन पत्तियों से निकला रस उकेर कर लिखे गये अक्षरों पर जम जाता है। कभी-कभी अनेक प्रकार की प्राकृतिक वस्तुओं से बना लेप लिखावट के ऊपर लगा दिया जाता है, जिससे कि लिखे गये अक्षर दिखाई दे सके। ये सामग्रियाँ हैं : फलों की पत्तियों का रस, धतूरे, हल्दी, नारियल के छिल्के या भूसे की काली राख और गिलगिली के तेल। ऐसा माना जाता है कि इस लेप को लगाने से कीड़े-मकोडे भी नहीं लगते हैं।

श्रीलंका मे काली राख मिलाने के लिए दो तरह के तेल काम में लाये जाते हैं। एक तेल है दुदु का तेल

और दूसरा है डुमेला का तेल। ये दोनों तेल प्राकृतिक रूप से मिलता है। पहला तेल एक फल का रस है जिसे सख्त फली कहते हैं और दूसरा तेल फोसिलेरसिल का तेल जो वाष्पीकरण से पकाकर तैयार किया जाता है। यह फासिलरेसिल श्रीलंका के कुछ हिस्सों में पाया जाता है। डुमेला के तेल का रंग भूरा होता है और इसका लेप करने से तालपत्र लचकदार और मुलायम बना रहता है।

थाइलैण्ड में एक तेल जिसे काष्ठ तेल कहते हैं, दीपक की कालिख मिलाकर इसे तालपत्र पर लगा दिया जाता है, जिससे लिखे हुए अक्षर दिखायी देने लगते हैं। बालू रेत को गर्म करके इस पर रगड़ा जाता है जिससे सफाई हो सके। रगड़ने की क्रिया सिर्फ थाइलैण्ड में ही होती है और किसी देश में नहीं।

कलम अथवा ब्रश से लिखने की विधि

तालपत्र पर स्याही या ब्रश से उसी तरह से लिखा जाता है जैसे कि कागज पर, फर्क सिर्फ इतना है कि कागज स्याही सोख लेता है मगर तालपत्र पर स्याही ज्यों की त्यों बनी रहती है क्योंकि तालपत्र की तुलना में कागज में सोखने की क्षमता अधिक होती है।

तालपत्र को सजाने की विधि

थाइलैण्ड में तालपत्र को कई तरह से सजाया जाता है। कुछ खास और महत्वपूर्ण विधियाँ निम्नलिखित हैं :

- तालपत्र सिंदूरी रंग से रंगा जाता है और उन पर लिखाई का काम सुनहरी रंग की स्याही से किया जाता है।
- तालपत्र पर लाल प्रलाक्षा रंग से हुई लिखावट भी पायी गयी है।
- ऐसे तालपत्र भी प्राप्त हुए हैं जिनपर काले रंग की लाख के साथ सुनहरे रंग की स्याही से लिखायी का काम किया गया है।
- तालपत्र पर लाल प्रलाक्षा रंग से हुई और पत्ते को काले अथवा नीले रंग में रंग लिया जाता है और उसके बाद सफेद रंग की स्याही से लिखा जाता है यह स्याही गोंद में चॉक मिट्टी को मिलाकर तैयार की जाती है।
- लिखने के लिए काले, लाल या सुनहरे रंग की स्याही को भी काम में लाया जाता है।
- सोने के पानी का मुलम्मा चढ़े कुछ ऐसे तालपत्र भी प्राप्त हुए हैं, जिनपर काले रंग की लाख से बनी स्याही उपयोग की जाती है।

थाईलैण्ड में तालपत्रों पर लिखी कुछ ऐसी पाण्डुलिपियाँ भी प्राप्त हुई हैं जिनके किनारों को सोने की भस्म या सिंदूर के बने लाख रंग रंगा गया है तथा उनपर उसका मुलम्मा या पानी चढ़ाया गया है। इस विधि से तैयार तालपत्रों पर लिखित पाण्डुलिपियों पर दाग या धब्बे नहीं लगते और साथ ही वे सड़ने-गलने से बची रहती है। इसके प्रयोग से पाण्डुलिपियों के किनारों के रेशे भी आपस में बंधे रहते हैं।

बर्मा में भी कभी-कभी तालपत्र पर लाल प्रलाक्षा रंग की परत जमायी जाती है और फिर उस पर उसी तरह की रंगवाली लाख से बनी गहरे रंग की स्याही से लिखायी की जाती है।

2.2.5 फॉर्मेट (Format)

तालपत्र की चौड़ाई बहुत कम होती है किन्तु इसकी लम्बाई अधिक होती है जिसे इच्छित आकार दिया जा सकता है। इसी कारण इसकी पत्तियों को इच्छित आकार देकर काट लिया जाता है। पाण्डुलिपियों की कड़ी जो समान रूप से उपलब्ध है वो अधिकांशतः 10.0 सेंमी से लेकर 90.0 सेंमी

तक लम्बी होती है। सबसे लम्बे आकृति की पाण्डुलिपि गुजरात के पठान भंडार में पाया गया है जो 95 cm x 6.5 cm आकृति की है। इन पत्तियों पर पंक्तिबद्ध रूप से लिखा गया है, किन्तु जो अधिक लम्बी पत्तियाँ हैं उन पर परिच्छेद के क्रम में भी लिखा गया है।

लिखने के उपरान्त इन पत्तियों को परम्परागत रूप से दो लकड़ी के पटरों के बीच दबाकर रखा जाता है, दोनों किनारों पर छेद कर दिया जाता है और उसके बीच धागे से बाँधा जाता है। लकड़ी के पटरे पाण्डुलिपि की लम्बाई-चौड़ाई से बड़ा होता है, जिसके कारण पाण्डुलिपियों को सुरक्षित रखा जाता है। आधुनिक ग्रन्थालयों में इसे सीसे के दराजों में रखा जाता है और ग्रन्थालय को यथासंभव वातानुकूलित रखा जाता है।

2.3 परिरक्षण विधि (Preservation Method)

पाण्डुलिपि एक ऐसी सामग्री है जो किसी भी राष्ट्र की धरोहर है। हमारी संस्कृति और सभ्यता का प्रतीक है तथा किसी भी ग्रन्थालय का गौरव है। यह प्रायः दो तरह के पदार्थों से बना हुआ पाया गया है, खासतौर पर कार्बनिक तत्वों से ब ी हुई पाण्डुलिपि पर फफूँदी और कीटों का प्रभाव अति तीव्रता से देखा जाता है। ऐसी स्थिति में इनके बचाव का उपाय करना भी बहुत जरूरी है। इस क्रम में निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार करना जरू ी है :

2.3.1 भंडारण विधि (Method of Storing)

सामान्यतः पाण्डुलिपियों को दो लकड़ी के तख्तों के बीच धागे से बाँध कर रखा जाता है तथा उसे कपड़ों से लपेट कर भी रखा जाता है ताकि उस पर न तो धूल पड़े और न तो कीड़ों का प्रकोप हो। सबसे खास बात यह है कि इन कपड़ों का रंग परम्परागत रूप से लाल, पीला या उजला होता है। इसके अतिरिक्त और कोई रंग नहीं होता है। इसका कारण यह है कि ये तीनों रंग कीटाणु विरोधी क्षमता रखते हैं तथा सत्य, बल और निष्ठा के प्रतीक हैं। रेशमी कपड़े पुस्त-कीट विरोधी हैं लेकिन इसका प्रयोग अत्यधिक मूल्यवान पाण्डुलिपि को सुरक्षित रखने के लिए ही होती है क्योंकि यह बहुत कीमती होती है। जहाँ पाण्डुलिपियों की संख्या बहुत अधिक है वहाँ इनकी गठरी बनाकर लकड़ी या स्टील के बक्से में रखा जाता है, जिसकी आकृति पाण्डुलिपि की आकृति से थोड़ा बड़ी होती है, जहाँ इसकी सुविधा नहीं है वहाँ आलमारी या कार्ड बोर्ड के अन्दर रखा जाता है।

आधुनिक युग में इसके रख-रखाव में भी काफी बदलाव आया है। इस संदर्भ में इसका भंडारण ही अलग कर दिया जाता है, जहाँ इन पाण्डुलिपियों के आकृति के अलग-अलग परिमाण में स्थान निर्धारित कर छोटे-छोटे बाक्स बना दिये जाते हैं, जहाँ स्थायी रूप से इन्हें रख दिया जाता है। ये बॉक्स स्टील के होते हैं तथा ऊपर से इसमें पारदर्शी शीशा लगा रहता है, जिससे आसानी से उसे देखा जा सके और पाण्डुलिपि को छूने की आवश्यकता ही न पड़े क्योंकि संस्थागत भंडारण के द्वारा निम्नलिखित समस्यायें उत्पन्न होती हैं।

- पाण्डुलिपियों को बाँधते समय इसके किनारे प्रायः क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। यदि इन्हें कसकर बाँध दिया गया तो पाण्डुलिपियों के ऊपर अनावश्यक दबाव पड़ता है, जिसके कारण इसके टूटने का डर रहता है, दूसरी तरफ अगर इसे ढीला छोड़ दिया गया तो इसके ऊपर धब्बे पड़ जाते हैं तथा इस कारण भी इसमें टूटन आती है।
- पाण्डुलिपियों में छेद करते समय भी इसके टूटने का डर रहता है और यह कभी-कभी उपयोग के योग्य नहीं रह पाता है।
- पाण्डुलिपियों को कपड़ों से लपेटते समय यह सत्य है कि इससे धूल, कीट तथा अन्य जीवाणुओं का प्रकोप नहीं होता लेकिन यह भी सही है कि कपड़ों के तत्व में जो अम्लीय पदार्थ हैं वे

प्राण्डुलिपि के किनारे को प्रभावित कर देते हैं, जिससे इसके फटने और क्षतिग्रस्त होने की संभावना बढ़ जाती हैं।

अनुभव के द्वारा यह पाया गया कि पाण्डुलिपियों की सुरक्षा की दृष्टि से इसके भंडारण के लिए लकड़ी का कार्डबोर्ड बॉक्स सबसे महत्वपूर्ण है जिसमें उसे रखा जा सके। चूँकि पत्तियाँ इसमें रहती हैं इसलिए इसमें न तो छेद करने की आवश्यकता रहती है और न ही बाँधने की और न ही कपड़े में लपेटने की, जिससे क्षतिग्रस्तता को काफी दूर रखा जा सके, ये बक्से पाण्डुलिपि के आकृति से कुछ बड़े होते हैं तथा इन बक्सों के अन्दर इसे आसानी से रखा जा सकता है। प्रयास यह किया जाता है कि बक्सों के अन्दर की दीवार भी इन्हें छू न सके।

एक अच्छी और सुरक्षित व्यवस्था के अन्तर्गत एक खास फर्म के अन्दर लुगदी या हाथ से बने कागज के छोटे-छोटे बॉक्स का उपयोग किया जाता है, जिसे लिफाफा कहा जाता है। यह पाण्डुलिपि से थोड़ा बड़ा रहता है। इसके अन्दर पाण्डुलिपि को रखा जाता है इससे यह लाभ होता है कि पाण्डुलिपि पर किसी प्रकार का कोई दबाव नहीं पड़ता है, और यह पूरी तरह से सुरक्षित रहता है।

2.3.2 भंडारण पर्यावरण (Storing Environment)

उच्च स्तरीय तापमान और निम्न स्तरीय आर्द्रता दोनों ही तालपत्र से बनी पाण्डुलिपियों के लिए बहुत हानिकारक है, क्योंकि इसके द्वारा उसके टूटने का डर रहता है और बंधन कमजोर हो जाने का भी डर रहता है। उच्च तापमान या आद्रता के कारण इसमें छोटे-छोटे छेद हो जाते हैं और एक सुनिश्चित समय में ये पाण्डुलिपि विनिष्ट हो जाते हैं। इसी कारण इसके भंडारण के समय ही उसके तापमान और आर्द्रता पर यथासंभव नियंत्रण रखा जा सके। सामान्य ग्रन्थालयों में इसे छोटे-छोटे लकड़ी के बने बक्से में रखा जाता है, किन्तु बड़े ग्रन्थालय में जहाँ वातानुकूलन की व्यवस्था है वहाँ तापमान 22 डिग्री से0-25 डिग्री से0 (72 डिग्री-77 डिग्री फॉरेनहाइट) तथा आद्रता 45 से 55 % के बीच रखा जाता है। जहाँ ऐसी व्यवस्था नहीं है वहाँ स्वच्छ हवा के लिए निष्कासन पंखा लगाया जाता है और विभिन्न प्रकार के रासायनिक द्रव्यों का भी प्रयोग किया जाता है।

2.3.3 कीटों से बचाव (Protection from Insects)

प्रतिदिन सफाई, रख-रखाव और अवलोकन कीटों पर नियंत्रण का सबसे अच्छा तरीका है, अगर उसके बाद भी कीटों पर नियंत्रण नहीं होता है तो निम्नलिखित विधियों के द्वारा कीटों पर नियंत्रण किया जाता है। ताल पत्र से बने पाण्डुलिपियों का सबसे प्रबल शत्रु ग्रन्थ कीट है। यह कीट पाण्डुलिपि के प्रत्येक हिस्से को समान ढंग से प्रभावित करता है और यदि उसे मौका मिल जाय तो यह एक बार में पाण्डुलिपि के पूरे बंडल को बर्बाद कर देता है, इसी वजह से तालपत्र के रख रखाव की सख्त आवश्यकता है।

ग्रन्थ कीट से बचाव के लिए सबसे पहले औषधीय पौधा जैसे, नीम या अन्य पौधों की पत्तियों को सुखाकर बारीक पाउडर के रूप में पीस दी जाती है और कपड़े के थैले में पाउडर को भरकर, पाण्डुलिपियों के बीच इस थैले को रख दिया जाता है या उस पाउडर को पाण्डुलिपि के ऊपर, नीचे और बीच में छिड़क दी जाती है जिससे पाण्डुलिपियों की सुरक्षा होती है। पिंडरि भी एक प्रकार की घास है, तथा गोबर बच्च एक प्रकार का औषधीय पौधा है, जिसका उपयोग इस काम के लिए किया जाता है। ये सभी औषधीय 'वनस्पतियाँ' का प्रयोग कीटों के आक्रमण के बाद ही किया जाता है। कीटों से पहले तापमान, आर्द्रता तथा प्रकाश पर नियंत्रण ही इसकी सुरक्षा है। यदि कीटों का आक्रमण हो जाय तो सबसे कार्यकारी औषधि नीम का पत्ता है।

आधुनिक युग में नेप्थलिन की गोली या कपूर के पैकेट का उपयोग सबसे अच्छा है। नेप्थलिन की गोली को या कपूर के पैकेट को पाण्डुलिपियों के बक्से में रख दिया जाता है और समय-समय पर

उसे देखते रहना पड़ता है। जिससे जैसे ही उसका प्रभाव कम होने लगता है वैसे ही उसे हटाकर नयी गोली का नया थैला वहाँ रख दिया जाता है।

2.3.4 फ्यूमीगेशन (Fumigation)

साधारण बोलचाल की भाषा में इसे 'धूमन' कहते हैं, जब तालपत्र पर भी कीटों का प्रभाव दिखाई देने लगता है तो उससे बचने के लिए 'फ्यूमीगेशन' की प्रक्रिया की जाती है। इस क्षेत्र में सबसे प्रभावशाली कार्य भारतीय राष्ट्रीय संग्रहालय कर रहा है, अपने यहाँ विस्तृत स्तर पर फ्यूमीगेशन की विधि की व्यवस्था कर रखा है। यहाँ सामान्यतः पैराडायोक्लोरो बेंजीन का उपयोग किया जा रहा है और फ्यूमीगेशन चेम्बर भी स्टील का बना है जहाँ 65: तापमान पर फ्यूमीगेशन की प्रक्रिया की जाती है।

अगर कीटों का अधिक प्रभाव हो गया हो तो विशेष परिस्थिति में पाण्डुलिपियों को यहीं भेजना चाहिए, लेकिन अगर अन्य ग्रन्थालयों में इसकी व्यवस्था हो तो सोडियम क्रोमेट अथवा मैग्नीशियम एसिटेट का घोल बनाकर फ्यूमीगेशन की प्रक्रिया करना चाहिए। वैसे इस संदर्भ में कार्बन टेट्राक्लोराइड और इथलिन डाइक्लोराइड का समानुपात में बना हुआ घोल भी उपयोगी होता है।

उपर्युक्त संदर्भ में यदि सावधानी नहीं बरती गयी तो पाण्डुलिपि के लिखावट को हानि पहुँच सकती है। इसी कारण इस संदर्भ में लेमिनेशन को प्राथमिकता दी गयी है।

2.3.5 मरम्मत और पुनरुद्धार (Repair and Restoration)

अगर पाण्डुलिपि क्षतिग्रस्त हो गयी है तो उसको निम्नांकित विधियों के द्वारा मरम्मत और पुररूद्धार **किया जा सकता है :**

- पाण्डुलिपि पर धूल जमने के कारण सबसे अधिक क्षति पहुँचती है क्योंकि यह इसके लिखावट को ही प्रभावित करती है। अतः इससे बचाव के लिए कृत्रिम ब्रश का प्रयोग किया जाता है। यदि इससे काम नहीं हो तो इस ब्रश के द्वारा ही पानी में एसिटोन बेंजीन अथवा कार्बन टेट्राक्लोराइड के घोल का प्रयोग भी किया जाता है। यदि स्याही पानी में घुलने वाली न हो तो ग्लिसरीन, एल्कोहल इत्यादि का प्रयोग भी आसानी से किया जाता है।
- तालपत्र की पाण्डुलिपियों पर सामान्यतया कार्बनिक स्याही का प्रयोग किया जाता है, जिसे अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है। यदि उस पर स्टाइल्स के द्वारा लिखा गया हो तो, उसका पुनरूद्धार संभव है। पुनः स्याहीकरण के काम के लिए ग्रेफाइट के पाउडर का प्रयोग किया जा सकता है, जिसे सफाई के बाद पाण्डुलिपि पर छिड़क दी जाती है और बाद में उसे कपड़ा से पोछ दिया जाता है।
- पुरानी और फटी हुई पाण्डुलिपि को खास तरह की संरक्षण की आवश्यकता होती है इसके लिए सिफॉन का कपड़ा या टिशु कागज का उपयोग किया जाता है। इन कपड़ों का थैला बनाकर उसमें पाण्डुलिपि रख दी जाती है। इससे भी कुछ समय के लिए संरक्षण हो जाता है।
- अगर पाण्डुलिपियों की गठरी बनाकर रखी हुई हो तो प्रत्येक पाण्डुलिपि को अलग करने की विधि निम्नलिखित है :

  (क) सही तापमान और आर्द्रता के बीच ही में उसे खोला जाय और प्रत्येक को चाकू के सहारे ही एक दूसरे को अलग किया जाय।

  (ख) इसे हल्के गुनगुने पानी में (60 डिग्री से0) 5-10 CC ग्लिसरीन मिलाकर अलग-अलग सभी पत्तियों को धोना चाहिए ।

  (ग) इसे (70-80 डिग्री से0) पर सुखा देना चाहिए।

2.4 भोजपत्र से बनी पाण्डुलिपियाँ : एक विवरण (Birch Bark Manuscripts)

कई शताब्दी पहले यूरोप और दक्षिणी अमेरिका के विभिन्न देशों में तथा विशेष रुप से भारत में भोजपत्र को लिखने के काम में लाया जाता था। इन भोजपत्रों पर छोटी-छोटी टिप्पणियाँ और पत्र लिखे जाते रहे हैं और महत्वपूर्ण संदेश भी इस पर लिखा जाता रहा है। इसी कारण विभिन्न राष्ट्र अपनी सांस्कृतिक परम्परा के अनुसार इसे जमा करते आये हैं तथा उसे विभिन्न ग्रन्थालयों का एक अभिन्न अंग बनाते आये हैं। बिब्लियोथिक नस्लों के क्रम में 28 जून 1647 और अक्टूबर 1676 में इनका प्रदर्शन विस्तृत तौर पर हुआ है। भोजपत्र पर सबसे पुरानी पाण्डुलिपि मध्य एशिया के खोतान नामक जगह में मिली है। उसके बाद धीरे-धीरे यह साहित्य के एक विभिन्न रूप में मिलने लगी और जिससे यह प्रमाणित हो गया कि मध्य एशिया और भारत के विभिन्न कोणों में यह इतिहास का भी एक विभिन्न अंग बन गया। इसका सबसे प्रमुख उदाहरण सिकन्दर महान द्वारा स्थापित ग्रन्थालय क्विनटस सरसियस रुफूज नामक ग्रन्थालय है जहाँ विभिन्न शताब्दियों में बनी हुई भोजपत्र की पाण्डुलिपियाँ उपलब्ध हैं। इन्हीं पाण्डुलिपियों के विषय में यह कहा गया है कि "पेपिरस के स्थान पर लम्बे आकृति वाले वृक्ष के छाल का उपयोग सर्वोत्तम है"।

उपर्युक्त कथन के कारण ही अथवा यों कहें कि सिकन्दर द्वारा जारी किये गये इस फरमान के कारण ही यह खोजा किया गया कि ऐसा कौन सा लम्बा पत्ता है या वृक्ष की छाल है; जिसका उपयोग कागज के रूप में किया जा सकता है और इसी खोज के परिमाण के रूप में भोजपत्र सामने आया। इसी कारण इसे सिकन्दर महान की देन के रूप में माना गया है। बाद में राजा महाराजाओं के द्वारा इसका उपयोग किया गया।

भारत में इस पाण्डुलिपि का उपयोग सबसे पहले कश्मीर में किया गया, क्योंकि भोज का वृक्ष हिमालय पर्वत पर इन्हीं जगहों में पाया जाता है ऐसा अनुमान किया जाता है कि इसका नाम भी भारतीय नाम भोजपत्र के नाम के आधार पर रखा गया तथा मूलतः यह 13 वीं शताब्दी की देन है। धीरे-धीरे यह संस्कृति, सभ्यता और इतिहास का अभिन्न अंग बन गया तथा कोई भी संग्रहालय इसके संग्रह को अपना गौरवशाली अतीत मानता है।

2.4.1 सामान्य-स्वभाव

भोजपत्र के विभिन्न टुकड़ों को भोजवृक्ष के आन्तरिक भागों से लिया जाता है। ये चादर परत-दर-परत बारीकी से जुड़े होते हैं। छाल उतारने के क्रम में लिखने से पहले इसे चिकना कर लिया जाता है और उसे सुखा लिया जाता है। ये परत एक दूसरे से जुड़े होते हैं, किन्तु काफी मजबूत होते हैं। इस पर सामान्यतया काले रंग के कार्बनिक स्याही से अथवा सब्जी के रस से लिखा जाता है।

मूलतः भोजवृक्ष की पाण्डुलिपियाँ गोलाकार बंधी हुयी होती थीं। यह दोनों ओर से 1 सेमी0 को छोड़कर लिखने के काम में लायी जाती थी। इसकी अलग-अलग रॉल को पेपिरस के रॉल की तरह विभिन्न खंड के रूप में मान लिया जाता है और इसे ही साहित्य व्यवस्था के अन्तर्गत सजाकर रखा जाता है। बिब्लियोथानिक नेशनल नामक ग्रन्थालय में भागवत गीता इसी पाण्डुलिपि पर लिखी हुई है, जो पेरिस में है। यह 1760 मिमी0 लम्बी और 45 मिमी0 चौड़ाई की आकृति में बंधी हुयी है।

2.4.2 क्षतिग्रस्तता के कारण और स्वभाव (Causes and Nature of Ditreioration)

भोज-पत्र, भोज वृक्ष की भीतरी छाल से तैयार किया जाता है। यह वृक्ष सामान्यतया 10 हजार फुट या उससे अधिक ऊँचाई पर पैदा होता है। भोज-पत्र के पत्रक में दो या तीन पतली-पतली परतें

रहती हैं और ये परतें एक प्राकृतिक गोंद और उसमें मौजूद गाठों और लकीरों या नसों से जुड़ी या चिपकी रहती हैं। यह भी भोज वृक्ष का ही एक हिस्सा होती है। भोज की छाल का रंग बहुत ही हलका होता है। परत की एक ओर इसका रंग सागवाना टीका की लकड़ी की तरह हलका भूरा और दूसरी और सफेद होता है, जिसमें हलके भूरापन की झलक रहती है।

वृक्ष की भीतरी छाल को ही लिखने के काम में लाया जाता है। छाल को वृक्ष से उतार लेने के बाद अदंरूनी छाल को पहले सुखा लिया जाता है। इस पर कुछ तेल लगा दिया जाता है और फिर उस पर पॉलिश कर दी जाती है। इस तरह यह छाल भोज-पत्र के रूप में लिखने के काम में लाने के लिए तैयार हो जाती है। जहाँ तक इनके क्षतिग्रस्ततापूर्ण स्वभाव अथवा उसके कारण का प्रश्न है, उसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि मध्य एशिया का वातावरण अत्यन्त उपयुक्त है। क्योंकि यहाँ सूखा मौसम रहता है, जो इसे मजबूती प्रदान करने के लिए बहुत ही उपयुक्त है और इसी कारण इस प्रदेश में सामान्यतया इसके परिरक्षण को अधिक चिन्ता नहीं रहती है दूसरी ओर जहाँ का मौसम ठंढा है, जैसे कश्मीर और हिमालय के क्षेत्र वहाँ इसके क्षतिग्रस्त होने के अधिक अवसर हैं। अतः वहाँ इसके परिरक्षण की विशेष व्यवस्था आवश्यक है, क्योंकि भोजवृक्ष की छाल में कई-कई परतें होती हैं और ये परतें एक दूसरे से एक प्राकृतिक गोंद से आपस में जुड़ी या चिपकी रहती हैं। समय के साथ इन्हें जोड़कर रखने की इस गोंद की शक्ति समाप्त हो जाती है। इस तरह कहीं-कहीं ये परतें इन गांठों के कारण ही जो इन परतों को जगह-जगह मजबूती के साथ पकड़कर मिलाये रखती है, वहीं से उखड़कर अलग-अलग होना शुरू हो जाती है। दूसरे प्राकृतिक तत्व जैसे सैल्यूलोज, लिगनिन, लिशा, रेशिन आदि गोंद जो उसमें मौजूद रहते हैं, वह भी बिखरना स्वतः प्रारम्भ हो जाते हैं और छाल कड़ी साथ ही कमजोर और ऐसी हो जाती, जो फट कर टूटने और बिखरने लगती है। परिणाम यह होता है कि भोजपत्र पर लिखी, पाण्डुलिपियाँ फटकर छितरने लगती है और उनके किनारे कमजोर पड़कर आसानी से झड़ने लगते हैं। कभी-कभी ऐसा भी देखने में आया है कि भोजपत्र पर लिखी हुयी पाण्डुलिपियाँ आपस में चिपक जाती हैं। इसका कारण यह है कि उन पर हुयी लिखावट अथवा उनमें मौजूद प्राकृतिक गोंद में नमी का बढ़ जाना। तब उन्हें एक दूसरे से अलग करना बड़ा मुश्किल काम होता है। समय के साथ ही भोजपत्र काला पड़ने लगता है और उसका रंग फीका पड़ जाता है लेकिन भोजपत्र पर न तो फफूँदी लगती है और न ही किसी प्रकार के कीड़े लगते हैं। इसकी जाँच भारतीय राष्ट्रीय संग्रहालय में करके सिद्ध कर दी गयी है।

2.4.3 मरम्मत और रख-रखाव (Repair and Maintenance)

सन् 1948 में काश्मीर सरकार ने भारतीय राष्ट्रीय संग्रहालय में गिलीट संग्रह के नाम से एक विधेयक पास किया जिसके तहत 1800 पाण्डुलिपियाँ रॉल के शक्ल में जमा करवायी गयी जिसे भारतीय भोजपत्र अथवा वेतुला भोजपत्र कहा जाता है। इन भोजपत्रों की चादरों की आकृति बहुत ही टूटी-फूटी और दयनीय स्थिति में थी। भारतीय राष्ट्रीय संग्रहालय ने इनकी मरम्मत और रख-रखाव के लिए अपने पास मँगा लिया। बाद में इनकी जो मरम्मत की गयी वह अत्यन्त संतोषजनक थी और यह मरम्मत भोजपत्र मरम्मत के मानदंड बने। इन भोजपत्रों से बनी पाण्डुलिपियों की मरम्मत और रख-रखाव के लिए जो प्रक्रिया अपनायी गयी थी वह निम्नलिखित हैं :-

सबसे पहले इन चादरों को आटा की लेई बनाकर सिफॉन के कपड़ों के द्वारा चिपका दिया गया। उसके बाद मरम्मत वाले जगहों को हल्के से धूप में सुखा लिया गया और उसके बाद इसे शीशे के नीचे दबा दिया गया। जब यह पूरी तरह सूख गया तो इसका परिणाम अत्यन्त संतोषजनक निकला। इसको धीरे-धीरे एक छोर से दूसरे छोर तक अंधेरे में रखकर एक के ऊपर एक तह देते हुए फिर चिपका दिया गया और जहाँ से ये टूटे-फूटे या फटे थे, वहाँ भी सिफॉन के कपड़ों को चिपका दिया गया। इसके अतिरिक्त जरूरत के अनुसार हाथ से बने कागज का भी उपयोग किया गया जिसमें

लपेट कर इसे ग्रन्थ पुटि का रूप दिया गया। इस विधि से किया हुआ मरम्मत या रख-रखाव आज भी पूरी तरह से संतोषजनक है।

पाण्डुलिपियों में यदि किसी तरह का दाग या धब्बा लग गया हो तो उसे पानी के भाप के द्वारा साफ कर देना चाहिए और उसके बाद मरम्मत करना चाहिए।

सबसे विचारणीय इसके रख-रखाव का वातावरण है। इस क्रम में इसे भी उसी वातावरण में रखना चाहिए जिसमें तालपत्र हो। जैसे, इसके लिए भी आदर्श वातावरण के लिए तापमान 22 डिग्री से0-25 डिग्री से0 (72 डिग्री-77 डिग्री फॉरेनहाइट) तथा सापेक्षिक आद्रता 45-55 % के बीच होना चाहिए। यह तभी संभव है जब ग्रन्थालय में वातानुकूलन की व्यवस्था हो, और अगर वातानुकूलन की व्यवस्था नहीं है तो निष्काषण पंखे और रासायनिक द्रव्यों के प्रयोग से इस पर नियंत्रण करना चाहिए। चूँकि इसमें कीट और फफूँद नहीं लगते हैं, इसी कारण कीटनाशक दवाइयों की जरूरत ही नहीं पड़ती।

2.5 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में तालपत्र और भोजपत्र से बने पाण्डुलिपियों के स्वभाव और परिरक्षण का विस्तृत विवेचन किया गया है। इस क्रम में यह पाया गया है कि दोनों ही प्रकृति के वनस्पति जगत की देन है, इसलिए इन दोनों का स्वभाव लगभग समान है। इसी वजह से दो परम्परागत पांडुलिपियों के भण्डारण के लिए आदर्शात्मक स्थिति भी समान माना गया है जैसे तापमान 22 डिग्री-25 डिग्री (72 डिग्री फा0-77 डिग्री फा0) तथा सापेक्षिक आद्रता 45-55 % के बीच में होना चाहिए। चूँकि यह हमारे संस्कृति और सभ्यता के प्रतीक हैं इसी कारण प्रत्येक ग्रन्थालयी का यह दायित्व है कि इसका सही रख-रखाव करें। यही वह प्रारंभिक प्रतीक है जिसने लिखने के लिए वास्तविक फार्मेट प्रदान किया। अतः इसके संरक्षण एवं परिरक्षण की आवश्यकता है। इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण विधियों का भी वर्णन किया गया है। जिस क्रम में संरक्षण के लिए आदर्श वातावरण, कीटों से संरक्षण एवं पुनरुद्धार की व्यवस्था बतायी गयी है यह पूरे भारत वर्ष के लिए एक आदर्शात्मक स्थिति है, जो भोजपत्र और तालपत्र से बने पाण्डुलिपियों के लिए एक आदर्श निर्देश संपूर्ण विश्व के ग्रन्थालयी को देता है।

इकाई : 3 ग्रन्थालय सामग्री के प्रकार एवं उनका संरक्षण : ग्रन्थत्तेर सामग्री/सूक्ष्म प्रलेख
TYPES OF LIBRARY MATERIAL AND ITS PRESERVATION : NON BOOK MATERIALS / MICRO DOCUMENTS

संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 ग्रन्थेत्तर सामग्री का परिरक्षण : पूर्व दृष्टिकोण

3.2.1 भौतिक वातावरण

3.2.2 सुरक्षा

3.2.3 परिसंचरण नीति

3.2.4 रख-रखाव से सम्बन्धित उपकरण

3.2.5 भंडारण

3.2.6 उपयोग

3.3 ग्रन्थेत्तर सामग्री के विभिन्न प्रकार और उसका परिरक्षण

3.3.1 फिल्म मीडिया

3.32 चुम्बकीय सामग्री

3.3.3 प्लास्टिक सामग्री

3.4 निष्कर्ष

3.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई में ग्रन्थेत्तर सामग्री के प्रकार संरक्षण एवं भंडारण पर पूरी जानकारी दी गयी है। इसके अतिरिक्त इस इकाई में ग्रन्थालय में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के ग्रन्थेत्तर सामग्री के स्वरूप और फार्मेट की भी पूरी जानकारी दी गयी है, जो आधुनिक ग्रन्थालय के आधार स्तंभ है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद निम्नलिखित जानकारी प्राप्त होगी :

- ग्रन्थेत्तर सामग्री के विभिन्न स्वरूप को समझना
- ग्रन्थेत्तर सामग्री के विभिन्न स्वरूपों के भौतिक पक्षों की जानकारी
- इन्हें तैयार करने की विधि को समझना
- उन पर सूचना एकत्र करने की तकनीक को समझाना

- इसके भंडारण, संरक्षण और पुनरूद्धार को समझना
- इसके सुरक्षित उपयोग को समझाना।

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

आज के परिप्रेक्ष्य में सूचना एक महत्वपूर्ण साधन बन चुकी है। हम लोग इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि वर्तमान युग सूचना का युग है। आज के युग में सूचना की उपादेयता के कारण उसे शक्ति की संज्ञा दी गई है तथा उसे आज आवश्यक शक्ति माना गया है क्योंकि किसी भी देश की आर्थिक शक्ति को मजबूत करने में सूचना प्रमुख शक्ति का काम कर रही है। हमारे समाज का विकास सूचना के विकास के साथ जुड़ा हुआ है, चाहे वह सूक्ष्म हो अथवा स्थूल। सूचना के बढ़ते स्वरूप ने सूचना प्रौद्योगिकी को जन्म दिया है, जो किसी भी ग्रन्थालय के लिए एक ऐसे शर्त के रूप में आ गया है, जो द्रुत गति से प्रौद्योगिकीय परिवर्तन की ओर लेकर जा रहा है। जिस तेजी से सूचना प्रौद्योगिकी में परिवर्तन हो रहा है, उसी तेजी से किसी भी ग्रन्थालय को उसके भंडारण, संरक्षण एवं प्रसारण की व्यवस्था भी करने के लिए अपने आप को तैयार करना जरूरी है किन्तु ऐसा नहीं हो रहा है, जिसका कारण ग्रन्थालयी के लिए सूचना प्रौद्योगिकी के लिए वास्तविक जानकारी का अभाव है। वह परम्परागत तरीके से ही इसका भी भंडारण और उपयोग करता है जो कागज पर आधारित मीडिया है जिससे ग्रन्थेत्तर सामग्री को प्रत्यक्ष रूप से हानि तो होती ही है साथ ही इसका उपयोग भी नहीं हो पाता है। इस क्रम में एक ग्रन्थालय और एक ग्रन्थालयी दोनों ही अपनी प्रतिष्ठा खो बैठे हैं जो किसी भी देश के लिए एक हानिकारक और निर्बल व्यवस्था का द्योतक है। उसे समाज के साथ नहीं चलने देता है।

आज प्रायोगिक रूप से यह देखा जा रहा है कि जिस राष्ट्र की सूचना प्रौद्योगिकी जितनी उन्नतिशील है, वह राष्ट्र उतना ही शक्तिशाली है। इसी क्रम में विभिन्न ग्रन्थालयों में आज अग्रन्थीय सामग्री के विभिन्न प्रकार भी द्रुत गति से आते जा रहे हैं। ये कागज मीडिया नहीं है। इसी कारण सामान्य भाषा में इसे एक नाम दिया गया है जो "ग्रन्थेत्तर सामग्री (Non-Book Material)" कहलाती है। प्रारंभिक काल में ग्रन्थेत्तर सामग्री मीडिया भी कागज पर आधारित होते थे और विभिन्न फार्मेट्स में ग्रन्थों के समान ही उपयोगकर्ता को निर्गत किये जाते थे जैसे पत्रिकायें, प्रतिवेदन, समाचार पत्र, पंचांग, मानचित्र, समाचार पत्र कतरन, पम्पलेट, इत्यादि।

उपर्युक्त वर्णन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि ग्रन्थालय में दो प्रकार की सामग्री पायी जाती हैं : ग्रन्थीय और अग्रन्थ्यीय किन्तु, दोनों के बीच सीमा रेखा खींचना आसान नहीं है। दोनों में बहुत ही सूक्ष्म अन्तर है अथवा यूँ कहें कि दोनों में मात्र कृत्रिम अन्तर है। कागज पर लिखा हुआ या मुद्रित की हुई कोई भी सामग्री ग्रन्थीय कहलाती है और कागज से अलग अन्य किसी भी प्रकार की सामग्री ग्रन्थेत्तर सामग्री कहलाती है।

वर्तमान में जिसके लिए ग्रन्थेत्तर शब्द व्यवहार में लाया जाता है, उसकी भी दो श्रेणी पायी जाती हैं : पहली मुद्रित माध्यम और दूसरा अमुद्रित माध्यम। ग्रन्थेत्तर माध्यम जब मुद्रित रूप में सामने आता है तो उसके फार्मेट पर कुछ लिखे हुए शब्द दिखायी देते हैं, जिसे प्रत्यक्ष रूप से या सहज आँखों से नहीं देखा जा सकता है, जैसे चुम्बकीय फीता, अंकीय प्रतिवेदन इत्यादि साथ ही फिल्म, फिल्म स्ट्रिप स्लाइड इत्यादि। ये सभी जब अपना सह माध्यम पकड़ते हैं तब ये प्रत्यक्ष रूप में दिखायी देते हैं। इसी कारण इसे माइक्रोफार्म भी कहते हैं। एक ग्रन्थालय में ग्रन्थेत्तर सामग्री के मुख्य प्रकार निम्नलिखित दिखायी देते हैं :

47

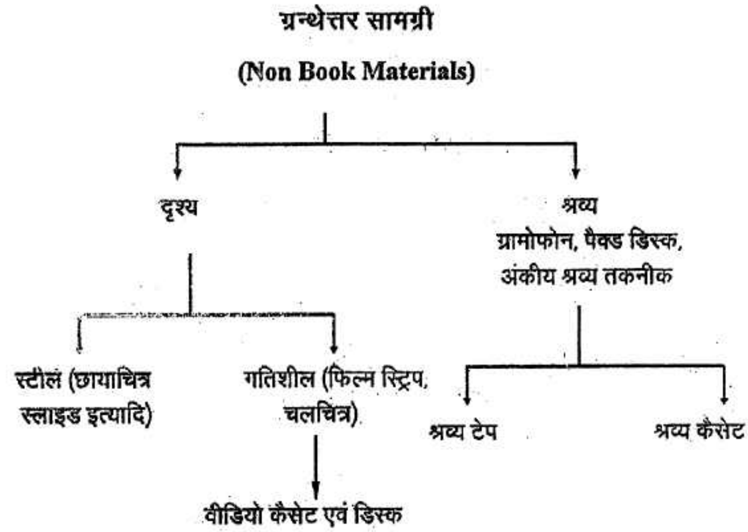

उपर्युक्त इकाई में मात्र इतना ही वर्णित है कि किसी ग्रन्थालय में ग्रन्थेत्तर सामग्री के कितने प्रकार पाये जाते हैं। आगामी इकाई में इनके भंडारण, रख-रखाव, उपयोग इत्यादि का सामान्य अध्ययन उपस्थापित किया जा रहा है, जिससे श्रेणीबद्ध भंडारण की व्यवस्था ग्रन्थालय में हो सके, जैसे- सूक्ष्म प्रलेख, सूक्ष्म फिल्म, सूक्ष्म फिश इत्यादि एवं उसका उपयोग भी सही ढंग से हो सके इसी का विस्तृत विवेचन किया जा रहा है।

3.2 ग्रन्थेत्तर सामग्री का परिरक्षण : पूर्व दृष्टिकोण (Preservation of Non-Book Material)

ग्रन्थेत्तर सामग्री के रहने पर कभी भी अच्छे मित्र का अभाव नहीं खटकता। जिस व्यक्ति को ग्रन्थेत्तर सामग्री के साथ रहने का अभ्यास है, वह हर जगह सुखी रह सकता है। ऐसी स्थिति में ग्रन्थेत्तर सामग्री के उपयोग में रख-रखाव की व्यवस्था भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है। इसके संदर्भ में विभिन्न प्रकार के मानक स्थापित किये जाते हैं जैसे : अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आई० एस० ओ० (ISO), बी० एस० आई (BSI), ए० एन० एस० आई (ANSI), डी० आई० एन (DIN) इत्यादि हैं जो क्रमशः अन्तर्राष्ट्रीय ब्रिटिश, अमेरिका, जर्मन, इत्यादि देशों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस क्षेत्र में बहुत तरह के श्रव्य-दृश्य संग्रहालय समिति की भी स्थापना हुई है जो समय-समय पर इस क्षेत्र में भाँति-भाँति के मानक सिद्धान्त भी स्थापित करते रहे हैं जिनके द्वारा इन सामग्रियों की सही सुरक्षा एवं परिरक्षण किया जा सके। इस संदर्भ में वास्तविकता यह है कि हर जगह के लिए एक ही प्रकार के मानक संबंधी निर्देशिका नहीं बनाया जा सकता, किन्तु भंडारण, आग से सुरक्षा, विशिष्टिकरण और प्रदर्शन इत्यादि से सम्बन्धित मानक समान रूप से स्थापित किये जा सकते हैं। ये मानक संबंधी निर्देश पूर्ण उपयोगी हैं इसमें किसी प्रकार की शंका नहीं की जा सकती है, किन्तु भौगोलिक जानकारी और अन्य व्यवस्था से सम्बन्धित विभिन्नता के कारण मानकों का तुलनात्मक अध्ययन करके एक नपा-तुला मानक भी स्थापित किया जा सकता है। तभी एक ग्रन्थेत्तर सामग्री को एक लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। अतः एक ग्रन्थालयी या सूचना विशेषज्ञों के लिए इनके संचालन और परिरक्षण सम्बन्धी मानकों का ज्ञान होना बहुत जरूरी है, जिससे वह अपनी व्यवस्था को सही रख सके।

वैसे तो कुछ सुनिश्चित मानक इन सामग्री के आते ही स्वयं स्थापित हो जाते हैं, जो ग्रन्थेत्तर सामग्री के साथ ही आते हैं और जो ग्रन्थ से अलग होते हैं, क्योंकि ग्रन्थ के लिए इसकी जरूरत नहीं होती। जैसे, फ्लॉपी के आते ही फ्लॉपी कवर, ड्राइवर तथा उसके रखने के स्थान स्वयं सुनिश्चित हो जाते

हैं, जो परिरक्षण की दृष्टि से भी अतिमहत्वपूर्ण हैं। वास्तव में ये सब स्थिति उसके भौतिक पक्ष से सम्बन्धित है। सुरक्षा और संचालन की दष्टि से सभी मानक अधिक महत्वपूर्ण हैं।

3.2.1 भौतिक वातावरण (Physical Environment)

किसी भी ग्रन्थेत्तर सामग्री के रख रखाव, संरक्षण और परिरक्षण में उसके भौतिक वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान है, जिन्हें इस तरह से समझा जा सकता है :

- **तापमान :** जब हमलोग विभिन्न प्रकार के भौतिक प्रलेख की चर्चा करते हैं तो सबसे पहले हमारे सामने तापमान की समस्या उत्पन्न होती है। इसका कारण यह है कि ग्रन्थेत्तर सामग्री का निर्माण अथवा फार्मेट अलग-अलग वस्तुओं से बना होता है। ऐसी स्थिति में तापमान का एक ही मानक स्थापित करना पूर्ण प्रभावी नहीं हो सकता। इसी कारण विशेषज्ञों ने एक तुलनात्मक तापमान मानक दिया है जो उच्चतम तापमान और निम्नतम तापमान के बीच की स्थिति को स्थापित करता है। विभिन्न प्रकार के मीडिया फार्मेट्स के लिए 75 डिग्री फॉ0 तथा वीडियो टेप, कैसेट्स, मैग्नेटिक टेप इत्यादि के लिए 65 डिग्री फॉ0-68 डिग्री फॉ0, फ्लापी और अन्य के लिए 50 डिग्री फॉ0 - 125 डिग्री फॉ0 के बीच निर्धारित किया है।

  सामान्यतः सभी के लिए आदर्शात्मक तापमान 60 डिग्री फॉ0 रखा गया है, क्योंकि यह एक ऐसा तापमान है, जो ग्रन्थीय, अग्रन्थीय और मनुष्य सभी के लिए आरामदायक हैं। तापमान की यह व्यवस्था ग्रन्थालय में सामग्री के उपयोग के लिए पूर्ण उपयोगी है, तथा मानव स्वास्थ्य को भी हानि नहीं पहुँचाती। कभी भी तापमान को 10 डिग्री फॉ0 से नीचे नहीं आने देना चाहिए। इसी कारण आदर्शात्मक तापमान मानक 50 डिग्री फॉ0 से 60 डिग्री फॉ0 के बीच रखा गया है।

  जब भी तापमान निर्धारित समय-सीमा से आगे-पीछे होता है तो सामग्रियों को प्रत्यक्ष रूप से नुकसान पहुँचता है। इसी वजह से तापमान को निर्धारित सीमा में रखना चाहिए। अगर यह संभव नहीं हो तो अथवा किसी कारण से उसमें व्यवधान आ रहा हो तो निम्नलिखित सावधानी अपनाना जरूरी है :

  (क) संग्रहण कभी भी दरवाजे या खिड़की के नजदीक नहीं रखना चाहिए।

  (ख) जब संग्रहण काफी समय पहले कर लिया गया हो और इस मध्य तापमान भी निर्धारित मानक के अनुसार नहीं रह पाया हो तो सामग्री को प्रत्यक्ष रूप से उपयोग में नहीं लाना चाहिए, बल्कि स्टैकिंग विधि के द्वारा पहले इसे मानक तापमान के अन्तर्गत लाना चाहिए और उसके बाद उसका उपयोग करना चाहिए।

- **सापेक्षिक आर्द्रता :** भौतिक वातावरण में सापेक्षिक आर्द्रता का भी महत्वपूर्ण स्थान है। सापेक्षित आर्द्रता एक प्रकार की ऐसी अनुभूति है जो वातावरण के हवा में मौजूद रहती है और सामग्री के ऊपर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। इसकी मात्रा बढ़ जाने से या इसकी मात्रा घट जाने से प्रत्यक्ष हानि पहुँचाती है। आर्द्रता के बढ़ जाने से सामग्री में नमी बढ़ जाती है जिसके कारण सामग्री एक दूसरे से चिपक जाती है और उपयोग के योग्य नहीं रहती है। दूसरी ओर नमी के घट जाने से सामग्री में तनाव बढ़ जाती है और सामग्री टूट-फूट जाती है। इसी कारण सापेक्षित आर्द्रता के लिए भी मानक निर्धारित किया गया है। इसका निर्धारित मानक 45 % 5 % रखा गया है। अर्थात कुल मिलाकर आदर्शात्मक मानक 47 % है।

- **धूल और अन्य वातावरण सम्बन्धी गंदगी :** कोई भी वातावरण धूल और प्रदूषण से पूर्णतः रहित नहीं हो सकता। मानक मात्र कुछ समय के लिए इसके प्रभाव को रोक देती है। अतः यदि वातानुकूलन की व्यवस्था हो तो भी समय-समय पर धूल झाड़ना और सफाई का कार्य होना जरूरी है। अगर भंडारण खिड़की, दरवाजे के नजदीक हो तो प्रतिदिन उसकी सफ़ाई

ज़रूरी है।

- **प्रकाश :** प्रकाश का भी भौतिक वातावरण में एक खास स्थान है। सूर्य का प्रत्यक्ष प्रकाश अथवा किसी भी तरह का तेज प्रकाश अग्रन्थीय सामग्री को नुकसान पहुँचाता है। उदाहरण स्वरूप, यदि स्लाइड्स है तो उसके रंग को प्रभावित करता है और उसे मुड़ने पर बाध्य कर देता है, अगर फ्लापी है तो उसे भी रंगहीन कर देता है, यदि छाया चित्र है तो उसे भी रंगहीन कर देता है और कटने-फटने पर बाध्य कर देता है। इसी कारण इसे हमेशा ही मध्यम प्रकाश में रखना चाहिए।

  सूर्य के प्रकाश को प्रत्यक्ष रूप से कभी भी नहीं आने देना चाहिए। यदि इसे स्फूर्दाप्ति प्रकाश में रखना हो तो भी इसका प्रत्यक्ष प्रभाव सामग्री पर पड़ता है। इसी कारण इसे भी हमेशा सामग्री से दूर रखना चाहिए। जहाँ ग्रन्थेत्तर सामग्री रखी गयी हो वहाँ की खिड़की और दरवाजे को बंद रखना चाहिए। यदि खिड़की के नजदीक ही इसे रखना हो तो खिड़की के ऊपर ऐसे पर्दे लगे होने चाहिए जो सूर्य के प्रकाश से इसे हमेशा दूर रखे। खिड़की के पर्दे इसके महत्वपूर्ण सुरक्षा मानक हैं।

- **चुम्बकीय क्षेत्र :** बहुत सारी चीजें जैसे; श्रव्य टेप, ध्वनि तरंगें, दृश्य टेप इत्यादि चुम्बकीय फीतों पर विद्युत चुम्बकीय भंडारण के अन्तर्गत बने हुए होते हैं। इन चुम्बकीय प्रतिवेदनों में मुख्य परेशानी यही है कि ये चुम्बकीय संकेत अनैच्छिक अथवा गलत तरीके से मिट जाते हैं तथा इसके प्रमुख आधारित वस्तु के ऊपरी द्रवीय परत उससे पृथक हो जाता है। साथ ही मुद्रित टेप में भी टूटन आ जाती है। श्रव्य एवं दृश्य टेप चुम्बकीय क्षेत्र में कहीं भी रखे जा सकते हैं जो मिटाये भी जा सकते हैं तथा स्थैतिक आवेश द्वारा उन्नत भी किये जा सकते हैं। अतः ऐसी चीजों के भंडारण के लिए ऐसी जगह होनी चाहिए जो चुम्बकीय क्षेत्र से पूर्ण मुक्त हो या किसी भी विद्युत मोटर या मजबूत चुम्बक से दूर हो।

अधिकांश चुम्बकीय टेप के अपने कान्टेनर होते हैं जिसमें श्रव्य-दृश्य कैसेट को रखा जाता है। इस कान्टेनर का निर्माण ही ऐसे विधि से किया जाता है, जिससे सूर्य की रोशनी और धूल से स्वतः उसकी सुरक्षा हो जाय, किन्तु चुम्बकीय समस्या उस समय आती है जबकि भंडारण फलक लकड़ी के बने हुए होते हैं और उसके अन्तर्गत अचुम्बकीय धातु के अन्तर्गत इन कैसेट्स को रखा जाता है। इन रैकों में विद्युत धारा प्रवाहित की जाती है जो धातु के बने होते हैं और विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रानिक परिवेश में अवस्थित होते हैं। अतः इन ग्रन्थेत्तर चुम्बकीय सामग्रियों को इन धाराओं से दूर रखना आवश्यक है।

उपर्युक्त सावधानी ही सुरक्षा का सबसे अच्छा उपाय है।

3.2.2 सुरक्षा (Security)

उपरोक्त सामग्री की सुरक्षा के लिए इनके बचाव और संरक्षण माप को इस प्रकार निर्धारित किया गया है कि ये प्रकृति के स्वाभाविक क्षयन से हमेशा बच सकें किन्तु, वास्तविक संरक्षण और परिरक्षण पर ये सुरक्षा किरण अथवा व्यवस्था मानवीय समस्याओं के विपरीत हैं, जैसे - निष्ठुर होना, धीरे-धीरे चोरी करने वाला स्वभाव होना आदि। क्योंकि मानव स्वाभाविक रूप से अत्यन्त निष्ठुरता के साथ इसका उपयोग करता है जिससे सामग्री को प्रत्यक्ष हानि पहुँचती है दूसरी ओर स्वभाविक रूप से मनुष्य इन सामग्रियों को धीरे-धीरे चुराने का आदी हो जाता है। दोनों ही स्थिति ग्रन्थालय के लिए हानिकारक है। इसलिए इन सामग्रियों के भंडारण पर सुरक्षा की दृष्टि से भी गंभीर ध्यान दिया जाता है।

इसी कारण से इनके भंडारण का स्थान ही ऐसी जगह पर सुनिश्चित किया जाता है जहाँ पाठक प्रत्यक्ष रूप से नहीं पहुँच सके। पाठकों का प्रवेश कर्मचारी की उपस्थिति में हो और उसका उपयोग

भी वह कर्मचारी की सहायता से कर सके। इसी कारण से ग्रन्थालय के इस भाग में बंद प्रवेश प्रणाली की व्यवस्था अति आवश्यक है।

3.2.3 परिसंचरण नीति (Circulation Policy)

जहाँ तक ग्रन्थेत्तर सामग्री के एक समान क्षेत्र के बीच में संतुलन स्थापित करने के लिए सुरक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के अन्य कार्य भी सम्मिलित होते हैं। परिसंचरण नीति के प्राथमिक आवश्यकताओं के तहत यह भौतिक चिंतन के अन्तर्गत आता है। इस विधि में परिसंचरण नीति के अन्तर्गत बुनियादी विचार और सामयिक सूझ-बूझ भी अपना महत्व रखते हैं जो निम्नलिखित हैं :

- एक ग्रन्थालय में कोई विशेष ग्रन्थेत्तर सामग्री है या नहीं इसकी जानकारी के बाद ही सुरक्षा की व्यवस्था की जा सकती है। तभी वह ग्रन्थालय पूर्ण सुरक्षित हो सकता है।
- ग्रन्थालय में उपलब्ध ग्रन्थेत्तर सामग्री के संग्रहण के लिए विषय विशेषज्ञ की सलाह अति आवश्यक है।
- विशेषज्ञों के द्वारा पाठकों को भी परामर्श के लिए समय निर्धारित होना चाहिए।
- कुछ सामग्री ऐसी भी होती हैं, जिनको बाहरी परिसंचरण अर्थात-पाठक को निर्गत भी किया जा सकता है किन्तु अधिकांश सामग्री ऐसी होती हैं जिनका उपयोग मात्र ग्रन्थालय में ही किया जा सकता है। अतः विशेषज्ञ से परामर्श अति आवश्यक है।
- ग्रन्थालय में कार्यरत कर्मचारियों के लिए ग्रन्थेत्तार सामग्री के परिसंधरण के लिए समुचित प्रशिक्षण आवश्यक है। जिससे वे उसका सही निरीक्षण एवं परिसंचरण की व्यवस्था स्थापित कर सके।
- ग्रन्थालय के पास कुछ ऐसे विशेष उपयोगकर्ता भी होते हैं जो यह प्रयास करते हैं कि ग्रन्थालय से ग्रन्थेत्तर सामग्री को भी निर्गत करा सके। इस स्थिति में ग्रन्थालय कर्मचारी का यह काम है कि वह अपने उपयोगकर्ता के वास्तविक आवश्यकता की जानकारी ले और उसके आधार पर ग्रन्थेत्तर सामग्री का सही निरीक्षण कर उसे निर्गत करे तथा वापस लेते समय भी उसका निरीक्षण कर ले।

उपर्युक्त नीतियों के आधार पर ही एक ग्रन्थालयी अपनी ग्रन्थालय में विवाद रहित, तनाव रहित, स्वच्छ वातावरण में ग्रन्थेत्तर सामग्री के उपयोग की व्यवस्था को स्थापित कर सकता है। एक सख्त परिसंचरण नियम अपने वास्तविक लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकते हैं, लेकिन यदि यह नियम सख्त होने के साथ ही सामयिक मांग के अनुसार लचीला है तो ये नियम प्रमुख रूप से अपने पाठकों के पूर्ण मददगार हो सकते हैं। अतः सही तरह से निर्देशित नियम ही ग्रन्थेत्तर सामग्री के उपयोग के लिए स्थापित किया जाना चाहिए।

परिसंचरण एवं बचाव के बीच का संबंध केन्द्रीय है और एक ही समय में दोनों को स्थापित करना ही आवश्यक है। एक ग्रन्थालयी का मुख्य लक्ष्य ही होता है अपने पाठकों को अधिक-से-अधिक सेवा देना। अतः ग्रन्थेत्तर सामग्रियों का अधिक-से-अधिक उपयोग हो इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर ही परिसंचरण नियम आदर्शात्मक रूप ले सकता हैं। यह धारणा भी बिल्कुल गलत है कि यदि ग्रन्थेत्तर सामग्री को ग्रन्थालय से बाहर उपयोग किया जाय तो वह अधिक समय तक नहीं टिक सकेगा। ग्रन्थेत्तर किसी भी सामग्री की आयु उसकी सही सुरक्षा परिसंचरण नीति पर ही निर्भर करती है।

3.2.4 रख-रखाव से सम्बन्धित उपकरण

ग्रन्थेत्तर सामग्री जैसे दृश्य टेप, छाया चित्र, श्रव्य टेप, स्लाइड, फिल्म स्ट्रिप इत्यादि सभी विशिष्ट प्रकार के उपकरण की मांग करता है, जिसके अन्तर्गत इन्हें सुरक्षित रखा जा सके। क्योंकि ये सभी सामग्री सामान्य वातावरण में स्वतः क्षतिग्रस्त हो जायेंगे और यदि उनका उपयोग और रख-रखाव अवांछनीय तरीके से की गयी तो वे विनिष्ट भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि चुम्बकीय फीता, टेप प्लेयर का उपयोग गलत ढंग से किया गया उसके हेड की समय-समय पर ही सफाई नहीं की गई है और क्रमिक रूप से उसका परीक्षण नहीं किया गया तो वह काम करना ही बंद कर देता है और धीरे-धीरे उसमें अंकित सूचनायें स्वतः विनिष्ट हो जाती हैं। टेप पर भी खरोंच लग जाते हैं और संवाद ही समाप्त हो जाते हैं। ग्रामोफोन पर बजने वाले रिकार्ड पर यदि स्टाइल्स को सही तरीके से नहीं रखा गया तो वह भी काम नहीं करता है। उपर्युक्त सभी उदाहरण काफी है, जिससे यह सिद्ध होता है कि ग्रन्थेत्तर सामग्री के सही संचालन से ही वह काम कर सकता है और प्रत्येक सामग्री के लिए उसके उपयोग के अनुसार अलग-अलग विशिष्ट उपकरण की आवश्यकता है और उसके रख-रखाव के लिए भी अलग से विशिष्ट उपकरण आवश्यक है। ग्रामोफोन के लिए स्टाइल्स उन्नत श्रेणी के हों और टूटा-फूटा भी न हो और उसे रखने के लिए भी विशिष्ट प्रकार के डब्बे की जरूरत पड़ती है। डायमंड स्टाइल्स मँहगा पड़ता है और इसके संरक्षण के लिए भी ग्रन्थालय को अतिरिक्त आर्थिक भार पड़ जाता है। अतः सामान्य ग्रन्थालय इसे नहीं रखना चाहता। सामान्य ग्रन्थालय में इस प्रकार के रिकार्ड के लिए लेजर की व्यवस्था है। लेजर डिस्क सामने की ओर से किसी प्रकार का संपर्क नहीं रखता, किन्तु नीचे की ओर से संपर्क रखता है इसी कारण नीचे के भाग को सुरक्षित रखने के लिए एक विशेष प्रकार के बाक्स की आवश्यकता होती है जिसे स्टाइलस कहते हैं। लेजर प्रौद्योगिकी नयी और खर्चीली विधि है। इसी कारण एक ग्रन्थालयी को अभी भी सस्ती और सुविधाजनक प्रौद्योगिकी की आवश्यकता है जो इन ग्रन्थेत्तर सामग्री को कम खर्चे में अधिक समय तक सुरक्षित रख सके।

3.2.5 भंडारण

सामान्यतः यह देखा जा रहा है कि ग्रन्थेत्तर सामग्री जैसे फोनोग्राफ प्रतिवेदन टेप, छाया चित्र इत्यादि का संग्रह करना अति आवश्यक है। यदि ये भारयुक्त होते हैं तो उदग्र स्थिति में रखने पर इनके किनारे क्षतिग्रस्त हो जायेंगे। स्लाइड और छायाचित्र को भी क्षैतिज स्थिति में ही रखना श्रेयस्कर है। क्योंकि इससे आपस में घर्षण की सम्भावना नहीं रहती है और ये पूर्ण सुरक्षित रह सकती है। कुछ ऐसे भी ग्रन्थेत्तर विशिष्ट प्रकार के सामग्री हैं जैसे स्लाइड तथा मुद्रित टेप इत्यादि जो निजी कान्टेनर में आते हैं उनका निजी कान्टेनर में रहना आवश्यक है। छायाचित्र को भी आर्द्रता रहित लिफाफे में रखना आवश्यक है, जो लिफाफा प्लाटिक का बना होता है और जो खास तौर पर भण्डारण विधि के लिए ही आता है। प्लाटिक नमी और धूल से बचाता है। आर्द्रता रहित कागज में लिपटे होने के कारण ग्रन्थेत्तर सामग्री की अत्यधिक ताप से भी सुरक्षा हो जाती है।

कैबिनेट के अन्तर्गत स्लाइड, फिल्म प्रिन्ट निगेटिव तथा अन्य सामग्री को भी सुरक्षित तरीके से रखा जा सकता है। ये कैबिनेट भी आर्द्रता रहित तथा उपयोग में सुविधाजनक हो इसलिए सामग्री से एक इंच बड़ा होना आवश्यक है। एक इंच बड़ा होने पर इन्हें सुविधाजनक रूप से रखा जा सकता है।

3.2.6 उपयोग (Handling)

सही संचालन करना हो तो ग्रन्थेत्तर सामग्री की अच्छी देखभाल आवश्यक है क्योंकि ग्रन्थेत्तर सामग्री अत्यधिक संवेदनशील होती हैं। इसके संचालन में पाठक और कर्मचारी दोनों ही शामिल हैं। ऐसे ग्रन्थालयी के लिए यह अति आवश्यक है कि जो भी ग्रन्थेत्तर सामग्री उसके पास उपलब्ध है इसके

रख-रखाव तथा उपयोग की सही जानकारी होना भी आवश्यक है।

दूसरी ओर उपयोगकर्ता के लिए भी यह आवश्यक है कि वह ग्रन्थेत्तर सामग्री के उपयोग से पूर्व ग्रन्थालयी अथवा कर्मचारी से उसके रख-रखाव और उपयोग का सही तरीके का प्रशिक्षण ले लें और उसके बाद ही उसका उपयोग करें। तभी ग्रन्थालय में सही परिसंचरण व्यवस्था स्थापित की जा सकती है। अतः यह कहा जा सकता है कि उसके रख-रखाव और उपयोग के लिए समय-समय पर ग्रन्थालयी और पाठक दोनों के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता है क्योंकि यह दोनों ही एक दूसरे पर निर्भर हैं।

3.3 ग्रन्थेत्तर सामग्री के विभिन्न प्रकार और उसका परिरक्षण (Variety of Non-book Material and their Preservation)

यह एक विचारणीय प्रश्न है कि ग्रन्थेत्तर सामग्री का प्रारम्भिक संरक्षण सही तरीके से हो उसके लिए अलग-अलग प्रकार के ग्रन्थेत्तर सामग्री का विस्तृत विवेचन आवश्यक है जो निम्नलिखित हैं :

3.3.1 फिल्म मीडिया (Film Media)

आधुनिक मीडिया में ग्रन्थेत्तर सामग्री का सबसे पहला स्थान आता है। यह पोलिस्टर पर आधारित सामग्री से बना होता है जो एक विशेष प्रकार के एक रासायनिक द्रव के द्वारा आपस में चिपके होते हैं। पॉलिस्टर से बने कार्ड पर एक विशेष प्रकार का द्रव युक्त लेप लगा दिया जाता है और उसके ऊपर छवि को उभारा जाता है। यह लेप प्रकाशीय संवेदनशील होता है जो प्रकाश द्वारा उभारे गये छवि को आपने अन्तर्गत एकत्रित कर लेता है और बाद में अन्य रासायनिक द्रव्यों के द्वारा उन्हें साफ कर लिया जाता है और निष्कर्ष के तौर पर हमारे सामने वह छवि फिल्म मीडिया के रूप में दिखाई देती है। यह फिल्म मीडिया भी कई श्रेणियों के हैं जो निम्नलिखित हैं :-

- **फिल्म स्ट्रिप (Film Strip) :** यह विभिन्न प्रकार के छवियों का संग्रह है जो दो प्रकार के आकृति में पाया जाता है। एकल अथवा आधे फ्रेम का तथा द्वितीय अथवा पूरा फ्रेम का।

  एकल अथवा आधे फ्रेम का स्ट्रिप प्रोजेक्टर के माध्यम से क्षैतिज स्थिति में लगाकर पर्दे में देखा जाता है। जबकि द्वितीय अथवा पूर्ण फ्रेम फिल्म स्ट्रिप उदग्र स्थिति में रखकर पर्दे पर देखा जाता है।

  सामान्यतया फिल्म स्ट्रिप छोटे आकृति के कन्टेनर में आता है और उपयोग के बाद पुनः उसमें रख दिया जाता है जो इस फिल्म स्ट्रिप को ताप, धूप, प्रकाश, आर्द्रता और धूल इत्यादि से बचाता है। यह कन्टेनर अलग-अलग फिल्म स्ट्रिपों के लिए अलग-अलग होता है। यह कन्टेनर चक्रीय आकृति का होता है। जिसे छाया चित्र के द्वारा समझा जा सकता है।

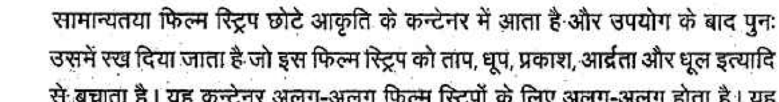

- **स्लाइड (Slide) :** आधुनिक जमाने में स्लाइड का ग्रन्थेत्तर सामग्री के रूप में भी महत्वपूर्ण स्थान है। स्लाइड प्लास्टिक सामग्री से बनता है जो पारदर्शी होता है। यह एकल फ्रेम कार्ड बोर्ड अथवा प्लास्टिक फ्रेम में लगा होता है। इसकी सुरक्षा के लिए शीशे का फ्रेम लगा दिया

53

जाता है जिसे माउंटिंग फ्रेम कहते हैं इसके अतिरिक्त इसके ऊपर प्रकाश संवेदनशील सामग्री का लेप लगा दिया जाता है और इसके ऊपर छवि को उभार दिया जाता है स्लाइड बहुत तरह के फार्मेट में पाया जाता है जो विभिन्न प्रकार के दिशा-निर्देश भी देते हैं। प्रारम्भ में यह 35 मिमी0 लम्बा बनाया गया जो आज 250 मिमी0 तक पहुँच गया है। इसका उपयोग भी हमेशा ओवर हेड प्रोजेक्टर के द्वारा ही किया जा सकता है। इसे भी निम्नलिखित चित्र के द्वारा समझ सकते हैं -

सिने फिल्म : सिने फिल्म भी एक क्रम में सजा हुआ छवि संग्रह है। इन छवियों को प्रोजेक्टर के माध्यम से द्रुत गति से पर्दे पर लाया जाता है जिसके कारण यह छवि पूर्ण गतिशील होती हैं। सिने फिल्म के कई फार्मेट होते हैं, जिसमें 35 मिमी से 16 मिमी का साउण्ड ट्रेक लगा होता है। 16 मिमी लम्बाई वाली ,फिल्म स्ट्रिप में ध्वनि नहीं रहती है। सबसे पहली फिल्म 8 मिमी की थी जो ध्वनि और रंगहीन थी।

- **माइक्रोफोर्म (Microform) (सूक्ष्म-आरूप)** : प्रारम्भिक रूप से कागज के आरूप की ओर ही इस का अर्थ निकलता था लेकिन अब इसका तात्पर्य फोटोग्राफी के द्वारा किसी प्रलेख का छोटा आकार कर देना ही माइक्रोफार्म कहलाता है। यह कई तरह का होता है जैसे 35 मिमी का रौल फिल्म, 16 मिमी0 का रौल फिल्म और ऐपरेचर कार्ड्स और माइक्रोफिश इत्यादि।

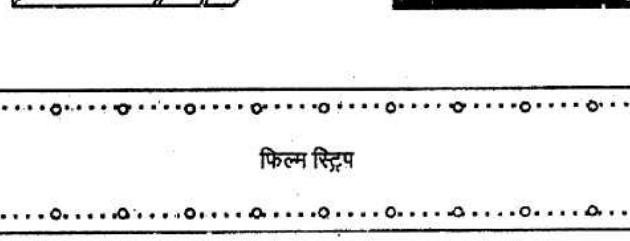

- **फिल्म मीडिया का परिसंचरण और उसका रख-रखाव :** फिल्म मीडिया की अच्छे तरीके से देख-रेख करने के लिए ग्रन्थालयी का इस संदर्भ में प्रशिक्षण जरूरी है जिससे वह निम्नलिखित बिन्दुओं पर सही तरीके से काम कर सकेगा क्योंकि ये बिन्दु लम्बी अवधि तक के लिए परिरक्षण को ध्यान में रखकर बनाये गये हैं।

(क) सावधानी :

- फिल्म उपयोग करने के बाद हमेशा बदल जाती है इसी वजह से इसे मुलायम ब्रश से साफ करके रखना चाहिए। जिस फिल्म को तुरन्त उपयोग नहीं करना हो तो ऐसे फिल्म को समय-समय पर चलाकर जरूर देखना चाहिए।
- स्क्रीन या प्रदर्शनी पट्ट को हमेशा साफ और धूल रहित रखना चाहिए।

(ख) उपयोग :

- फिल्म को कन्टेनर के अन्दर से बहुत सावधानी से निकालना चाहिए। उपयोग करते समय इसका ध्यान रखा जाता है अगर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो खरोंच लगने का डर रहता है।
- कन्टेनर को हमेशा साफ रखना चाहिए, यह धूल रहित होना चाहिए क्योंकि धूल रील को खराब कर देता है जिससे फिल्म क्षतिग्रस्त हो जाती है।
- फिल्म को हमेशा किनारे से पकड़ना चाहिए, इसे कभी भी मोड़ना नहीं चाहिए। फिल्म का प्रदर्शन हमेशा वातानुकूलित कमरे के अन्दर ही करना चाहिए। अगर वातानुकूलित कमरे से बाहर इसका उपयोग किया जा रहा है तो यथासंभव उस कमरे के ऊपर तापमान का नियंत्रण होना चाहिए।
- फिल्म को हमेशा सुरक्षित प्रोजेक्टर के अन्दर ही चलाना चाहिए।
- फिल्म के संचालन एवं रख-रखाव का भार हमेशा प्रशिक्षित कर्मचारियों पर होना चाहिए।

(ग) भंडारण :

- फिल्म का भंडारण हमेशा सूर्य के प्रकाश से दूर होना चाहिए, क्योंकि सूर्य के प्रकाश से इसका रंग खराब हो जाता है।
- फिल्म को हमेशा धूल रहित कनटेनर में होना चाहिए, क्योंकि पॉलिस्टर से बने आधार धूल को आकर्षित करते हैं जिससे इसका मूल भाग क्षतिग्रस्त हो जाता है।
- कनटेनर कभी भी फिल्म के विषय-वस्तु को प्रभावित नहीं करता, क्योंकि यह हमेशा ही आर्द्रता, सल्फर अम्ल, पेरोक्साइड इत्यादि से जुड़ा रहता है।
- फिल्म की सुरक्षा की दृष्टि से कन्टेनर के ऊपर शीशे का बना हुआ कवर अवश्य लगाना चाहिए।
- ज्यादा तापमान और ज्यादा आर्द्रता दोनों ही फिल्म के लिए हानिकारक है। इसी कारण फिल्म को दोनों से बचाना चाहिए।

3.3.2 चुम्बकीय सामग्री (Magnetic Materials)

चुम्बकीय सामग्री का भी ग्रन्थेत्तर सामग्री में महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित सामग्री आती है, जैसे टेप, डिस्क इत्यादि।

(अ) टेप : टेप पॉलिस्टर पर आधारित सीट के ऊपर ऑक्साइड तथा लोहा और क्रोमियम के लेप को लगाकर बनाया जाता है उसके बाद चुम्बकत्व के गुण के द्वारा पूर्ण किया जाता है जिसे चुम्बकीय

क्षेत्र कहते हैं। इस टेप में किसी भी प्रकार के संवाद को रिकार्ड किया जाता है। यह संवाद चाहे श्रव्य हो अथवा दृश्य किसी प्रकार का हो सकता है। इसे प्ले बैक मशीन से देखा या पढ़ा जा सकता है।

चुम्बकीय टेप का परिसंचरण और रख-रखाव

चुम्बकीय टेप भी ग्रन्थेत्तर सामग्री है इसके परिसंचरण और रख-रखाव के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना जरूरी है :

(क) सावधानी :

- चुम्बकीय टेप को क्रमिक रूप से रखना जरूरी है और यह भी ध्यान देना जरूरी है कि सामयिक रूप से संवादों का क्रम क्या है, जो क्रम संवादों का होगा उसी क्रम से टेप को रखना चाहिए।
- टेप को हमेशा रील के साथ चौड़े क्रम में रखना चाहिए। इसे खड़ा करके कभी नहीं रखना चाहिए। साथ ही इसका उपयोग हमेशा होना चाहिए। उपयोग नहीं होने पर यह काफी कड़ा हो जाता है, जिससे इसके टूटने का डर रहता है।

(ख) उपयोग :

- टेप को जहाँ तक संभव हो कम-से-कम छूना चाहिए।
- उपयोग करते समय वातावरण को हमेशा धूल रहित रखना चाहिए, जिससे टेप को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचे।

(ग) भंडारण :

- जहाँ तक भंडारण का प्रश्न है। हमेशा ही तापमान और आर्द्रता के क्रम में टेप को रखते समय निर्धारिति मानक को अपनाना चाहिए नहीं तो टेप का क्षतिग्रस्त होना लगभग तय है। कभी भी टेप को अधिक आर्द्रतापूर्ण वातावरण में नहीं रखना चाहिए। अगर वातावरण आर्द्रतापूर्ण होगा तो टेप आपस में चिपक जायेगी और इसका उपयोग नहीं हो पायेगा।
- टेप को जमा करते समय धूल रहित कन्टेनर का उपयोग करना जरूरी है जिससे इसकी तह सुरक्षित रह सके और उस पर किसी तरह की क्षतिग्रस्तता नहीं हो।
- टेप पर रिकार्डिंग करते वक्त चुम्बकीय प्रक्रिया अपनायी जाती है। अतः यह अति आवश्यक है कि भंडारण करते समय इसे उच्च स्तरीय चुम्बक से दूर रखना चाहिए।
- चुम्बकीय टेप हमेशा किनारे से खड़ा करके रखना चाहिए और उसे अपेक्षित सहारा भी देना चाहिए।
- चुम्बकीय टेप रखने की जगह को हमेशा वातानुकूलित रखने का प्रयास करना चाहिए।

(ब) डिस्क : चुम्बकीय डिस्क का उपयोग कम्प्यूटर में होता है। इसकी वैकल्पिक व्यवस्था कैसेट है। इसका उपयोग हमेशा प्रतिबंधित रूप में किया जाता है क्योंकि यह मिनी कम्प्यूटर के लिए आवश्यक होता है, जो काफी खर्चीला है।

मेनफ्रेम कम्प्यूटर में डिस्क पैक का उपयोग किया जाता है। इसी वजह से इसका भंडारण कम्प्यूटर सेवा क्षेत्र में किया जाता है। इसको हार्डडिस्क भी कहते हैं जो रीडिंग हेड में लगा हुआ रहता है। इसे विनचेस्टर डिस्क कहते हैं, इसे रखने के लिए धूल रहित कन्टेनर का उपयोग किया जाता है जो मुहर बन्द होता है। ऐसा कन्टेनर सामान्यतया व्यापारिक उपयोग में नहीं लाया जाता हैं। खास तौर पर यह कम्प्यूटर डिस्क के पैकिंग के लिए ही बनता है।

इस प्रकार उपर्युक्त सभी स्थितियाँ आधुनिक तकनीक अर्थात कम्प्यूटर तकनीक से जुड़ी हुई है। इसका तीसरा रूप भी है जो सबसे छोटा है उसे मिनी डिस्क अथवा फ्लॉपी कहते हैं। आधुनिक युग में यह सबसे सस्ता और उपयोगी है। इसका उपयोग किसी भी माइक्रो कम्प्यूटर पर किया जा

सकता है। वर्तनान समय में फ्लॉपी की निम्नलिखित तीन आकृतियों पाई जाती है।

- 203 मिसी0 (8") इसका उपयोग अत्यधिक प्रतिबंधित है।
- 132 मिमी0 (5")
- 90 मिमी0 (3.5")

इन दोनों आकृतियों का उपयोग ही सामान्यतया किया जाता है। कुछ मशीन में 76 मिमी0 (3") आकृति के फ्लॉपी का भी उपयेग किया जाता है, किन्तु यह सीमाओं में बंधा हुआ है और बहुत ही सीमित क्षेत्रों में कार्य करते हैं।

फ्लॉपी का उपयोग हमेशा अंक्रीय डाटा का रिकार्ड करने के लिए किया जाता है, जो पतली प्लास्टिक शीट की चक्रीय आकृति में होती है। यह हमेशा फेरिक आक्साइड के कवर से ढका होता है। इसकी भी व्यवस्था बिल्कुल मैग्नेटिक टेप के समान है। यह डिस्क कार्ड अथवा प्लास्टिक कवर में लिपटा हुआ होता है, जिससे फ्लॉपी कभी भी प्रभावित नहीं होती है। कुछ ऐसे भी फ्लापी हैं जो हमेशा मुहरबन्द कन्टेनर में ही आपूर्ति की जाती हैं। आज सूचना का क्षेत्र काफी फैल गया है इसी वजह से फ़्लॉपी की मात्रा भी ग्रन्थालयों में बढ़ गयी है इसका सबसे प्रारम्भिक उपाय वातानुकूलन की व्यवस्था करना है।

टेप और फ्लॉपी दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। मैग्नेटिक टेप कम्प्यूटर की हार्डडिस्क के रूप में आती हैं, तो फ्लॉपी साफ्ट डिस्क दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। इसी कारण एक ग्रन्थालयी को दोनों की सुरक्षा व्यवस्था का ज्ञान बहुत जरूरी है। किसी भी तरह की असावधानी पूरी व्यवस्था को बर्बाद कर देगी।

चुम्बकीय डिस्क का परिसंचरण और रख–रखाव

चुम्बकीय डिस्क का परिसंचरण और रख-रखाव करना बहुत जरूरी है जो निम्नलिखित है -

(क) सावधानी :

- डिस्क को हमेशा धूल और गंदगी से बचाना चाहिए और साफ वातावरण में रखना चाहिए।
- डिस्क को कन्टेनर में रखना चाहिए ताकि टूटने फटने से बचे तथा कन्टेनर को धूल रहित होना चाहिए।

(ख) भंडारण :

- उच्च स्तरीय आर्द्रता से बचाव करना चाहिए और प्रत्यक्ष सूर्य के प्रकाश से भी बचाना चाहिए। किसी भी चुम्बकीय सामग्री से बचाव जरूरी है।
- चुम्बकीय क्षेत्र से बचाने के लिए इसे हमेशा क्षैतिज अवस्था में रखना चाहिए।

3.3.3 प्लास्टिक सामग्री (Plastic Materials)

प्लास्टिक सामग्री के रूप में निम्नलिखित सामग्रियाँ आती हैं -

- पारदर्शी प्लास्टिक
- विनियल डिस्क
- ऑप्टिकल स्टोरेज सिस्टम

पारदर्शी प्लास्टिक (Transparent Plastics) : यह चौड़े आकृति की होती है तथा पतली होती है, सामान्यतया इसकी मोटाई 0.05 मिमी0 से 0.25 मिमी0 तक होती है। यह सामान्यतया दो प्रकार की होती है (1) एकल चादर के रूप में (2) रोल के रूप में। चौड़े आकृति की पारदर्शी शीट पालिस्टर की होती है।

इन शीटों का उपयोग ओवर हेड प्रोजेक्टर की मदद से किया जाता है। इनके ऊपर कोई भी संवाद एक विशेष प्रकार के तत्काल इंक सूखने वाले से लिखा जाता है उसके बाद उसे ओवर हेड प्रोजेक्टर में लगाकर पर्दे पर देखा जाता है। अगर कोई फिल्म या आवश्यक पत्र है तो उसे भी इसका थैला बनाकर अंदर रखा जाता है। अगर इनके ऊपर मुद्रण करना हो तो उसके लिए फोटो कॉपियर, लेजर प्रिंटर अथवा उच्च स्तरीय मुद्रण प्रक्रिया को अपनाना पड़ता है।

विनियल डिस्क (Vinyl Disc) : जब भी श्रव्य रिकार्डिंग करना होता है तो उसके लिए काफी मज़बूत प्लास्टिक का डिस्क बनायी जाती है। इस डिस्क की आकृति 17.83 सेमी0 (7") 25.4 सेंमी0 (10") और 30.5 सेंमी0 (12") तक की होती है। इस डिस्क के बीच में एक छेद होता है जिसे टेबल पर लगे स्पाइन्डल में लगा दिया जाता है। यह आन्तरिक टेबल प्रति मिनट 33, 45 और 78 की गति से घूमता है। इसे निम्नलिखित छाया चित्र से भी समझा जा सकता है :

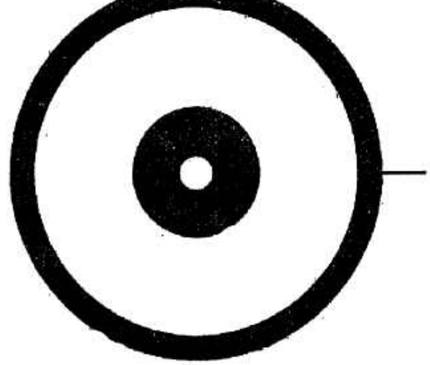

डिस्क

ऑप्टिकल (Optical) स्टोरेज सिस्टम : आधुनिक युग में कम्पैक्ट डिस्क के उत्पादन से सभी लोग परिचित हैं। यह डिस्क प्लास्टिक सामग्री से तैयार किया जाता है तथा इसके बीच में एक छेद रहता है जिसमें पिन लगी होती है और उसके ऊपर रोल चक्रीय आकृति में लिपटा रहता है इसके ऊपर एक मजबूत प्लास्टिक का पारदर्शी कवर भी लगा रहता है जिसे हमलोग कन्टेनर कहते हैं। इसमें संवाद तार्किक अथवा अंकीय दोनों ही रूप में रिकार्ड रहते हैं जिसे प्लास्टिक के बने हुए प्लेट पर फिट होते हैं और बाद में वही ध्वनि के रूप में सुनाई देते हैं। इसमें ध्वनि का आमने सामने का सम्बन्ध नहीं रहता है बल्कि यह प्रिटों के अन्दर रिफलैक्ट होकर पहुँचता है। इन डिस्कों के उपयोग से किसी भी तरह का नुकसान नहीं होता है।

जिस समय इसका उपयोग किया जाता है उस समय निश्चित ही धूल रहित डिस्क होती है। लेकिन रिकार्डिंग के वक्त जो स्थिति रहती है उसके बाद वह स्थिति नहीं रह जाती क्योंकि इसपर बाहरी प्रभाव भी पड़ता है परन्तु लॉकर जो लगा होता है उससे इसकी सुरक्षा होती है।

नये तकनीकी विधि के अनुसार यह स्वयं में काफी सुरक्षित रह सकती है। किन्तु इसके साथ भी समय एक प्रबल कारक के रूप में दिखायी देता है जिसकी वजह से इसके देख-रेख एवं परिरक्षण की जरूरत होती है।

प्लास्टिक सामग्री का परिसंचरण और रख-रखाव

प्लास्टिक सामग्री एक ग्रन्थेत्तर सामग्री है जिसके परिसंचरण और रख-रखाव के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना जरूरी है।

(क) सावधानी :

- प्लास्टिक शीट सामान्यतया अधिक समय तक काम में लाये जाने वाले संवादों के उपयोग में लाया जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि इस पर मुद्रित या लिखित संवाद पर किसी भी

तरह का प्रभाव न पड़े। इसके लिए शीटों को हमेशा चौड़े क्रम में रखना चाहिए जिससे इस पर किसी भी तरह का खरोंच न लगे।

- इसे हमेशा वातानुकूलित व्यवस्था में रखना चाहिए, जिससे इस पर न तो नमी का प्रभाव पड़े और न ही ताप का।
- घर्षण से बचाने के लिए प्रत्येक शीट के नीचे कागज का लगाना बहुत जरूरी है जिससे इसके संवाद की सुरक्षा हो सके। एक बात और ध्यान देने की है वह यह कि कागज धूल रहित और कीटाणु रहित हो।
- चूँकि यह प्लास्टिक सामग्री से बनी है इसलिए यह काफी मजबूत होती है फिर भी इसे धूल, गंदगी और आग से बचाना जरूरी है। इसके स्टाइलस को भी धूल रहित और कीटाणु रहित होना चाहिए। क्योंकि स्टाइलस के माध्यम से ही उसमें संवाद सुनाई देती है। यह स्टाइलस ग्रूम पर लगा होता है और यह ग्रूम पुराना और धूल युक्त होता है। इस ग्रूम को भी सामान्य प्रक्रिया के अनुसार साफ करते रहना चाहिए।
- इसके भंडारण के वक्त जो ध्यान रखना चाहिए वह यह है वातानुकूलित, धूल रहित और कीटाणु रहित हो।

(ख) उपयोग :

यदि इन डिस्कों का उपयोग पूर्ण सावधानी से नहीं किया गया तो कभी भी इसके ऊपर से संवाद उड़ जाते हैं। इन डिस्कों को हमेशा घूमने वाले टेबल पर रखना चाहिए जिससे आवश्यकतानुसार इसका उपयोग किया जा सके।

(ग) भंडारण :

- सबसे पहले इन डिस्कों को वातानुकूलित वातावरण में रखना चाहिए ताकि इसके ऊपर ताप और नमी का प्रभाव न पड़े।
- धूल इसका सबसे बड़ा दुश्मन है क्योंकि यह इसके संवाद को ही उड़ा देती है। अतः धूल से इसका बचाव जरूरी है।
- घर्षण से बचाने के लिए भी कीटाणु रहित कागज का उपयोग आवश्यक है।
- डिस्क को हमेशा क्षैतिज रूप में हमेशा रखना चाहिए, जिससे इसके किनारे सुरक्षित रहते हैं।
- कभी भी एक रैक में कई डिस्क एक साथ नहीं रखना चाहिए और न इसे एक दूसरे पर ही रखना चाहिए।

3.4 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में ग्रन्थेत्तर सामग्री के परिरक्षण और संरक्षण की व्यवस्था को बताया गया है। ये सामग्री हैं चुम्बकीय टेप, अंकीय रिकार्ड, फिल्म, स्लाइड, श्रव्य-दृश्य कैसेट इत्यादि।

ग्रन्थेत्तर सामग्री के परिरक्षण के लिए प्रारम्भिक तथ्यों का विस्तृत विवेचन किया गया है यथा भौतिक वातावरण, परिसंचरण और सुरक्षा इत्यादि। अन्त में यह कहा जा सकता है कि इन ग्रन्थेत्तर सामग्री का निजी रूप से भी सावधानी पूर्वक परिसंचरण एवं भंडारण के विभिन्न पक्षों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

59

इकाई 4 : ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व : पर्यावरण

Hazards to Library Materials : Environmental

संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 परिरक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ

4.3 ग्रन्थालय सामग्री के स्वभाव : भौतिक चरित्र

4.3.1 कागज : ग्रन्थ का अभिन्न भौतिक पक्ष

4.3.2 ग्रन्थ के अन्य भौतिक पक्ष

4.3.3 श्रव्य-दृश्य टेप एवं डिस्क

4.3.4 फिल्म एवं छायाचित्र

4.4 श्रव्य-दृश्य सामग्री से सम्बन्धित समस्याएँ

4.5 भौतिक अतिग्रस्तता के मुख्य कारक

4.5.1 भौतिक क्षतिग्रस्तता के प्रमुख कारक : चित्र

4.6 ताप

4.7 प्रकाश एवं अंधकार

4.8 आर्द्रता एवं शीलन

4.9 पानी

4.10 धूम्रपान

4.11 धूल एवं गन्दगी

4.12 वायु प्रदूषण

4.13 पर्यावरण नियन्त्रण

4.13.1 भवन

4.13.2 प्रकाश

4.13.3 आर्द्रता एवं शीलन

4.13.4 ताप

4.13.5 घरेलू रख-रखाव

4.14 निष्कर्ष

60

4.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

ग्रन्थालय में ग्रन्थों के संरक्षण और परिरक्षण के लिए सामान्यतः ऐसी व्यवस्था का होना जरूरी है जो उपयोगकर्ता को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचाए। इनका भंडारण करते समय ही इस बात पर पूरा ध्यान देना चाहिए कि न तो उपयोगकर्ता को किसी प्रकार की हानि हो और न ही ग्रन्थालय सामग्री को अर्थात ग्रन्थालय में संग्रहित सामग्री लम्बे समय तक चल सके इसकी व्यवस्था होनी चाहिए। ग्रन्थालय सामान्यतः कागज पर आधारित ग्रन्थीय और ग्रन्थेत्तर सामग्रियों का भंडार है। इसका संरक्षण और परिरक्षण करना एक ग्रन्थालयी का नैतिक और सामाजिक दायित्व है क्योंकि इसमें अतीत का आधार, वर्तमान की समस्याओं का समाधान तथा भूत के नव निर्माण छुपे हैं। इस इकाई में एक ग्रन्थालयी और ग्रन्थालय सामग्री के भौतिक पक्ष के बारे में जानकारी प्राप्त होगी। इसके अतिरिक्त इस इकाई में भौतिक सामग्री, उनके स्वभाव, उनकी सहनशीलता तथा उनके सही उपयोग का विस्तृत विवेचन किया गया है। ग्रन्थालय में अधिकांशतः प्रलेख संवेदनशील होते हैं, क्योंकि यह कार्बनिक पदार्थो से बने होते हैं। इसलिए इन पर पर्यावरण का भी असर पड़ता है और इनमें स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता आती है। पर्यावरण से जो क्षति पहुँचती है सामग्री को उससे बचाने के लिए ग्रन्थालय के भंडारण पर नियंत्रण जरूरी है। जिससे इस तरह की क्षतिग्रस्तता से सामग्री को बचाया जा सके। इस इकाई के अन्तर्गत पर्यावरण सम्बन्धी मुख्य हानिकारक तत्वों के बारे में भी विवेचन किया गया है। अतः इससे पाठक को निम्नलिखित बातों की जानकारी प्राप्त होगी :

- सामान्य क्षतिग्रस्तता जो ग्रन्थालय में होती है उसकी जानकारी
- ग्रन्थालय सामग्री के स्वभाव और विभिन्न भौतिक पक्षों की जानकारी
- पर्यावरण सम्बन्धी विभिन्न कारकों से बचने की जानकारी
- पर्यावरण सम्बन्धी कारकों पर कैसे नियन्त्रण किया जाए इसकी जानकारी
- प्राथमिक उपचार सम्बन्धी निर्देश की जानकारी
- विशेष उपचार सम्बन्धी निर्देश की जानकारी
- भंडारण के लिए सामान्य निर्देश की जानकारी

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

इस इकाई में ग्रन्थालय सामग्री के विभिन्न तत्वों को हानि पहुँचाने वाले कारकों के बारे में विचार किया गया है। पर्यावरण सम्बन्धित कारक जिससे ग्रन्थालय सामग्री को हानि पहुँचती है उसमें तापमान, जल, आर्द्रता, प्रकाश, वायु-प्रदूषण, धुआँ गन्दगी इत्यादि आते हैं। इसके अतिरिक्त और भी कई कारक हैं जो प्रत्यक्ष रूप से ग्रन्थालय सामग्री को नुकसान पहुँचाते हैं। ये सभी कारक सामान्यतः ग्रन्थालय सामग्री के विभिन्न भौतिक संरचनाओं को प्रत्यक्ष और लगातार प्रभावित करते हैं, इसी वजह से इसे स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता भी कहा जाता है। एक ग्रन्थालयी के लिए यह वर्षो से परेशानी का विषय बना हुआ है कि वे इन शत्रुओं के विरुद्ध अपनी सामग्री को कैसे संरक्षित करें तथा सभी तरह के क्षय तथा क्षतिग्रस्तता को रोकने के लिए मापक पैमाने का निर्धारण कैसे करें।

ग्रन्थ में जो आन्तरिक तत्व और सूचना होते हैं उसे कार्बनिक पदार्थ स्याही के द्वारा अंकित किया जाता है। स्याही और कागज दोनों ही पर्यावरण की एक भौतिक इकाई है, जो निश्चित रूप से सभी तरह के भौतिक गुणों को अपने में समाहित करती है। ग्रन्थ का प्रमुख भौतिक तत्व कागज अथवा आर्ट पेपर है जो मुद्रण के लिए, कठोर जिल्दसाजी के बोर्ड के लिए, जिल्दबन्दी के लिए, कपड़े के टुकड़े के लिए, सिलाई के लिए, सूती धागे के लिए, चिपकाने वाले गोंद के लिए और अन्य पदार्थों के

लिए जो ग्रन्थों के भौतिक संरचना के लिए प्रयुक्त होते हैं। यह सब उनके ऐसे घटक हैं जिन पर प्राकृतिक कारकों का सीधा प्रभाव पड़ता है चूँकि ये खुद प्राकृतिक घटक हैं और इन्हें रखना भी प्राकृतिक वातावरण में ही है। अतः पर्यावरण के जो तत्व इनकी प्राथमिक स्थितियों का निर्माण करते हैं।

आधुनिक युग में ग्रन्थालय में मुद्रित और अमुद्रित दोनों तरह की सामग्री होती हैं, जो कागज पर आधारित सामग्री होती है उसे मुद्रित सामग्री कहते हैं जैसे : ग्रन्थ, पत्रिका, समाचार -पत्र, शोध प्रबन्ध सम्मेलन और सेमिनार प्रतिवेदन, पम्फलेट, अन्य प्रतिवेदन इत्यादि। ग्रन्थालय में कुछ खास तरह की सामग्री भी होती है जैसे मानचित्र, चित्रमय सामग्री, श्रव्य-दृश्य सामग्री और विभिन्न अन्य प्रकार की सामग्री। विभिन्न प्रकार की सामग्री और तत्वों की विशिष्टताएँ जो ग्रन्थालय सामग्री की भौतिक संरचना के लिए उपयोग में लाये जाते हैं उन्हें विभिन्न प्रकार की संरक्षण समस्याओं वाली स्थितियों का सामना करना पड़ता है।

यह सभी सामग्रियों का अर्जन और रख-रखाव एक लम्बे समय के लिए किया जाता है। यहाँ एक विचार करने की बात है कि हर प्रदेश की जलवायु एक तरह की नहीं होती है। भारत मौलिक रूप से एक विषुवतीय देश है। विषुवतीय देश होने से इसकी अपनी ही जलवायु सम्बन्धी समस्याएं हैं, जिनमें आर्द्रता का प्रमुख स्थान है। आज के युग में औद्योगीकरण, भारी उद्योगों, ग्रामीण क्षेत्रों की वृद्धि यातायात के लिए प्राकृतिक तेल का दहन, ग्रामीण क्षेत्रों में खाद्य सामग्री और ऐसी अन्य समस्या लगातार पर्यावरण को प्रभावित कर रही है। अतः स्वाभाविक रूप से इन पर्यावरण और जलवायु सम्बन्धी स्थितियों का ग्रन्थालय सामग्री के भौतिक पक्षों पर गहरा प्रभाव पड़ता है, जो सामग्री के लम्बी आयु को घटा देता है। ऐसी स्थितियाँ ग्रन्थालय सामग्री के लिए सीधे नुकसान देह होता है। इनके कारण उत्पन्न क्षतिग्रस्तता की सीमा, आदर्श वातावरण बनाने के लिए मानक का ज्ञान जो एक ग्रन्थालयी के लिए बहुत जरूरी है। इसका विस्तृत विवेचन इस इकाई में किया गया है।

4.2 परिरक्षण से सम्बन्धित समस्याएँ

जहाँ ग्रन्थों का विशाल भंडार होता है उसे ग्रन्थालय कहते हैं। जिसमें इनके भौतिक पक्ष भी निहित हैं। ये विभिन्न भौतिक पक्ष, प्राकृतिक तत्वों और अंशों से निर्मित हैं। ये सभी प्राकृतिक विशिष्टताएँ एक दूसरे से मिलकर स्वयं भी एक भौतिक वातावरण बनाती हैं जिनका सामान्य पर्यावरण से प्रति क्षण बचाव के लिए संघर्ष चलता रहता है। जब तक ये सामान्य पर्यावरण के तत्वों से जीतते हैं तब तक संरक्षित रहते हैं और जहाँ से हारना शुरू करते हैं वहीं से क्षतिग्रस्तता शुरू हो जाती है। ग्रन्थालयी के लिए पर्यावरण सम्बन्धी समस्या हमेशा से रही है क्योंकि जब से ग्रन्थालय में ग्रन्थों ओर प्रलेखों को जमा करना शुरू हुआ तभी से उनके परिरक्षण की कला उतनी ही पुरानी है जितनी की मानव संस्कृति। पुराने जमाने में विभिन्न भौतिक तत्वों से बने प्रलेखों में प्रयुक्त भौतिक तत्वों के आधार पर परिरक्षण के लिए प्रयास किये जाते थे। इन्हें मूलतः दो भागों में बाँटा जाता था कार्बनिक तथा अकार्बनिक। अकार्बनिक पदार्थों में जैसे: पत्थर, धातु, क्ले टेबलेट इत्यादि। ये सभी पदार्थ पर्यावरण सम्बन्धी कारकों से बहुत कम मात्रा में और बहुत लम्बी अवधि के बाद प्रभावित होते थे। कार्बनिक पदार्थ जैसे : पेपिरस, भोजपत्र, तालपत्र, कागज इत्यादि। ये सभी पदार्थ सीधे पर्यावरण सम्बन्धित कारकों से प्रभावित होते हैं। खास तौर से आर्द्रता, तापमान, कीट सभी इन पर प्रभाव डालते थे। अतः शुरू से ही यह पाया गया कि ग्रन्थालय सामग्री का क्षय पर्यावरण सम्बन्धी कारकों में हुई वृद्धि और विपरीत पर्यावरण सम्बन्धी कारक ग्रन्थालय सामग्री को क्षयग्रस्त करते रहे हैं। इससे भी अधिक प्रबल स्थिति यह है कि अगर ग्रन्थालय सामग्री को विपरीत पर्यावरण सम्बन्धी स्थिति का सामना करना पड़ता है तो न केवल ग्रन्थालय सामग्री को भौतिक रूप से ही हानि पहुँचाती है बल्कि ये रासायनिक कारकों तथा आधार भूत क्षयग्रस्तता के कारकों को भी अति तीव्र कर देती है और जैवीय कारकों को पूर्ण बढ़ावा देती हैं जिससे सम्पूर्ण ग्रन्थालय भंडार ही प्रभावित होते रहते हैं।

मध्ययुग के दौरान अच्छी और टिकाऊ किस्म के भौतिक तत्वों का उपयोग, उत्पादन के समय ही हानिकारक तत्वों पर नियन्त्रण के लिए रासायनिक द्रव्यों का उपयोग, प्राथमिक और परिरक्षणात्मक सामग्री के निर्माण सम्बन्धित देखभाल और दस्तकार, पदार्थों की क्षयग्रस्तता को रोकना इत्यादि बातों पर ध्यान देने के कारण पर्यावरण सम्बन्धी क्षतिग्रस्तता को काफी हद तक रोकने का प्रयास किया गया है। इसी युग में विपरीत पर्यावरण सम्बन्धी कारकों के विरुद्ध भी पदार्थों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ इसके लिए भी प्रयास किया गया। आधुनिक युग में पर्याप्त रक्षात्मक मापक ग्रन्थालय सामग्री के रक्षार्थ खोज लिये गये हैं क्योंकि इस समय कागज ग्रन्थालय सामग्री का प्रमुख घटक बन गया है जो पूरे विश्व में प्राकृतिकसंरक्षण की समस्या के लिए स्वयं में एक जटिल समस्या है। कागज दो परिस्थितियों के उत्पन्न होने पर टिकाऊ नहीं होते । पहला चूँकि कागज खुद ही मौलिक रूप से एक प्राकृतिक संघटक और रासायनिक प्रकृति का है जिसके स्वभाव में ही क्षतिग्रस्तता होती है और दूसरा कागज निर्माण की प्रक्रिया ही स्वनाश की सम्भावना से सम्बन्धित है जो विपरीत पर्यावरण मिलने पर स्वतः ही विनाश की ओर तीव्र गति से चला जाता है।

आधुनिक समय में संरक्षण की समस्याएँ भयानक स्थिति में विभिन्न कारणों से पहुँच चुकी हैं। इनमें प्रमुख हैं कागज निर्माण और निर्माण प्रक्रियाओं में उपयोग होने वाले आधारभूत घटक। कागज तथा श्रव्य-दृश्य सामग्री ग्रन्थालय संग्रह के प्रमुख भाग हैं। इन पदार्थों के निर्माण के लिए उपयोग में लाये जाने वाले कच्चे पदार्थों और उनको संघटित करने की प्रक्रियाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। परन्तु दुर्भाग्यवश आधुनिक समय में प्रचुर मात्रा में इनके उत्पादन की मांग होने के कारण निम्न स्तरीय घटकों का प्रयोग और दोषपूर्ण निर्माण प्रक्रियाएं देखी जा रही हैं जो इनके भविष्य को स्वयं ही क्षतिग्रस्तता की ओर ढकेल देता है। सामान्यतः लोगों का इस परिस्थिति की ओर व्यापक स्तर पर ध्यान नहीं जा रहा है। सामान्यतः एक ग्रन्थालयी भी एक समुदाय के महत्वपूर्ण सदस्य होने के क्रम में इन समस्याओं के प्रति जागरूक और सचेत नहीं हैं। ऐतिहासिक तौर पर यह कहा जा सकता है कि पूर्व में यह कुछ ही व्यक्तियों का कार्य था जो संरक्षण और अविस्कृत देशी पद्धतियों में रुचि रखते थे। 19 वीं शताब्दी के अन्त में लोग संरक्षण और ग्रन्थालय सामग्री के पुर्नसंग्रहण से सम्बन्धित समस्याओं के प्रति जागरूक हुए और इन समस्याओं का सामना करने का प्रयास भी करते रहे। आधुनिक शताब्दी के प्रारम्भिक तीन दशकों के दौरान कई व्यक्तियों और संस्थानों ने आगे आकर विभिन्न प्रकार के ग्रन्थालय सामग्री के क्षतिग्रस्त होने और उनके कारणों को पहचानने का प्रयास किया है। प्रभावित सामग्री के पुनः संग्रहण, संरक्षण और क्षतिग्रस्तता रोकने के लिए विभिन्न प्रकार के मापकों को ढूंढा जिससे वैज्ञानिकों का सीधा ध्यान इस ओर गया। उन्होंने इस पर शोध किया और मानदंड निर्धारित किये। इनमें से प्रमुख हैं, यू0 एस0 ए0, यू0 के0, इटली, फ्रांस, जर्मनी, रशिया, स्वीडन और भारत। परिरक्षण प्रक्रियाओं और विधियों में शोध के लिए राष्ट्रीय ग्रन्थालय, राष्ट्रीय संग्रहालय एवं निजी प्रयोगशालायें बनी है। शोध कार्यों को संपादित करने के लिए विभिन्न निजी संस्थाएँ भी स्थापित की गयी थी जैसे यू0 एस0 ए0 में डब्लू0 जे0 बैरो रिसर्च प्रयोगशाला। ग्रन्थालय सामग्री के क्षतिग्रस्त होने के कारणों और स्थितियों की पहचान की गयी और इनकी उचित तकनीकी विधि से रख-रखाव के लिए संरक्षण और परिरक्षण की व्यवस्था भी विकसित की गयी है।

मूलभूत तत्वों से उत्पन्न गुणों और ग्रन्थ के भौतिक इकाई के निर्माण में उनकी संरचना एवं अन्य ग्रन्थालय सामग्रियों के संरक्षण की समस्याएँ भी उत्पन्न होती रही हैं। यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि ये सभी स्वाभाविक हैं। एक ग्रन्थ की भौतिक इकाई विभिन्न प्रकार के कागज, बोर्ड, कपड़े चमड़े, धागा, स्याही, एडहेसिव इत्यादि हैं। इनमें से प्रत्येक सामग्री समय के साथ स्वयं ही क्षतिग्रस्तता की ओर स्वभाविक रूप से बढ़ जाती है जिसका कारण विभिन्न भौतिक, रासायनिक और जैवीय होते हैं। निश्चित रूप से इनमें अधिकांशतः वातावरण एवं पर्यावरण से सम्बन्धित घटकों के कारण निर्मित होते हैं।

4.3 ग्रन्थालय सामग्री के स्वभाव : भौतिक चरित्र

ग्रंन्थ, ग्रन्थालय संग्रह का सबसे बड़ा एकल घटक है। इसमे कागज के अतिरिक्त भी विभिन्न प्रकार के ग्रन्थेत्तर सामग्री होती हैं। यह सभी अध्ययन सामग्री चाहे ग्रन्थीय हो अथवा अग्रन्थीय दोने ही रूपों में कागज से बनी होती है। कागज स्वयं ही और ग्रन्थ के अन्य घटक भी संरक्षण में सर्वकालिक समस्याएँ उत्पन्न करते रहे हैं, क्योंकि प्राथमिक रूप से ही ये समस्याएँ पर्यावरण सम्बन्धी कारकों द्वारा उत्पन्न होती है। इसका विस्तृत विवेचन जरूरी है।

4.3.1 कागज : ग्रन्थ का अभिन्न भौतिक पक्ष

कागज किसी ग्रन्थ का एक खास घटक है, जिसका एक खास घटक सेल्यूलोज फाइबर है। यह सेल्यूलोज फाइबर विभिन्न प्रकार के कच्चे पदार्थों को जमा करके बनाया जाता है। कागज का स्तर भी इन्ही कच्चे पदार्थों पर निर्भर करता है। कागज के निर्माण में प्रयुक्त होने वाले कच्चे पदार्थ सामान्यतः कपास, घास, बाँस, पुआल, चिथड़े इत्यादि हैं। कागज की आन्तरिक मजबूती और लम्बाई सेल्यूलोज फाइबर की एक जुटता पर निर्भर करती है। कच्चे सेल्यूलोज फाइबर फैट्स, वेक्सेस, रेजीन, लिगनिन और अन्य बहुत सी अशुद्धियों से युक्त होते हैं जिनके कारण ही कागज का क्षय होता है। कुछ तत्वों और प्रतिरोधक का उपयोग कागज की लुगदी की अशुद्धियों को दूर करने के लिए किया जाता है, किन्तु, इसके लिए की गयी प्रक्रिया फाइबर के विखंडन का कारण बनती है।

कागज का निर्माण कच्चे पदार्थों को बनाने और अशुद्धियों को दूर करने के उपरान्त संपूर्ण लुगदी की घुलनशीलता के द्वारा होता है। जब कच्चे पदार्थों को दाब के अन्तर्गत संशोधित किया जाता है और ताप का प्रयोग कागज की लुगदी बनाने के लिए, रसायन जैसे कैल्सियम बाई -सल्फेट और कास्टिक सोडा और सोडियम सल्फाइट इत्यादि कागज को उचित संशोधन के लिए उसमें डाले जाते हैं, क्योंकि यह जरूरी है। परन्तु अघुलनशील रसायनों के बचे-कुचे अंश अथवा कच्चे सामग्रियों की अशुद्धियाँ बाद में छति का कारण बनती है। जब भी इन्हें विपरीत पर्यावरण मिलता है तो ये अपनी प्रतिक्रिया प्रारम्भ कर देती है। लुगदी के ब्लीचिंग का कार्य क्लोरीन के द्वारा होता है। क्लोरीन और इसके बचे कुचे अंशों का न्यूनाधिक प्रयोग कागज के स्थायित्व को प्रभावित करता हैं। कूटने की प्रक्रियाएँ भी लुगदी के निर्माण में महत्वपूर्ण हैं। यदि ये प्रक्रियाएँ सही ढंग से न की जाएँ तो कागज स्वयं ही क्षतिग्रस्तता की ओर अग्रसर होगा। सायजिंग सामग्रियाँ जैसे लेई, गोंद, रेजीन, स्टार्च इत्यादि सेल्यूलोज फाइबरों को बांधने के लिए उपयोग में लाये जाते हैं। सामान्यतः यह रेजिन के पहले घोल और उसके साथ मिश्रण से बनता है। ब्लीचिंग के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले क्लोरीन और फिटकरी का मिलान खास कर विपरीत पर्यावरण की स्थिति में कागज में आर्द्रता को बढ़ाता है और कागज के स्थायित्व को घटाता है। लोडिंग सामग्री जैसे, क्ले चॉक, टेलकम पाउडर, जिप्सम इत्यादि कागज को मुलायम बनाने के लिए लुगदी में मिलाया जाता है। ये सभी विपरीत पर्यावरण में कागज के क्षयग्रस्तता में ही अपना योगदान देते हैं। कागज को तैयार करने में अधिक पानी की जरूरत पड़ती है। शुद्ध पानी का मिलना आसान नहीं है। अगर उपयोग में लाये जाने वाले पानी लोहे और अन्य खनिज अशुद्धियों से रहित न हो तो कागज जल्द ही बर्बाद हो जाता है। कागज बनाने के समय की गलती और इस प्रक्रिया में कागज के बर्बाद होने के स्वाभाविक कारणों को ग्रन्थ देखकर नहीं जाना जा सकता है। इसके लिए गहन अध्ययन की जरूरत है।

4.3.2 ग्रन्थ के अन्य भौतिक पक्ष

बोर्ड (Board) :- बोर्ड का प्रयोग जिल्दबन्दी के लिए किया जाता है। आज कल दो तरह के बोर्ड का प्रयोग जिल्दबन्दी के लिए किया जा रहा है (1) मशीन बोर्ड (2) स्ट्रा बोर्ड।

मशीन बोर्ड लकड़ी की लुगदी या अच्छे किस्म के चिप्स से बनता है। स्ट्रा बोर्ड पुआल अथवा अन्य

कच्चे शाकीय उत्पादों से बनता है।

बोर्ड का प्रयोग जिल्दबन्दी के लिए कठोर आवरण के निर्माण के लिए किया जाता है, साथ ही इसका प्रयोग दोनों प्रकार की जिल्दबन्दी के लिए किया जाता है चाहे नयी हो या पुरानी।

जब इन बोर्डों को विपरीत पर्यावरण सम्बन्धी स्थिति में रखा जाता है तो ये तेजी से क्षयग्रस्तता की ओर अग्रसर होते हैं। ये खासकर स्टार्च ग्लू से युक्त होते हैं जो कीटों के आकर्षक भोजन, छिपने का स्थान और प्रजनन स्थल के रूप में कार्य करते हैं।

कपड़ा (Cloth) : जिल्दबन्दी के लिए सामान्यतः दो तरह के कपड़े का प्रयोग किया जाता है सूती या रेशमी। सूती कपड़े को कपास से तैयार किया जाता है, कपास में 90 प्रतिशत से भी ज्यादा सेल्यूलोज का भाग होता है। सेल्यूलोज फाइबर अम्ल और सबल आक्सीकारक तत्वों से आसानी से प्रभावित होते हैं। नमी और आर्द्रता की स्थिति में फाइबर विखंडित हो जाते हैं। स्टार्च युक्त कपड़े का जिल्द मजबूत होता है लेकिन यह कीटों और फफूंदों के लिए अत्यधिक आकर्षक होता है। रेशम पर्यावरण का ही एक अंश है जो विपरीत पर्यावरण मिलने पर स्वतः ही क्षतिग्रस्त होने लगता है।

चमड़ा (Leather) : कपड़े की तरह चमड़े का भी प्रयोग जिल्दबन्दी के लिए किया जाता है। यह एक अच्छी आवरण सामग्री है, लेकिन चमड़े की किस्म टैनिंग की प्रक्रिया और प्रयोग किये जाने वाले तत्व इत्यादि पूरी तरह से पर्यावरण पर निर्भर करती हैं। निम्नस्तरीय तत्व और अनुचित तरीके चमड़े को तत्काल कमजोर बनाता है। गलत तरीके से टैंड किया हुआ चमड़ा नमी की वजह से विघटित हो जाता है

धागा (Chord) : जिल्दबन्दी के लिए धागा का भी प्रयोग होता है। इसके लिए अधिकतर सूती धागे सिलाई सामग्री के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। जिल्दबन्दी किसी भी तरह का हो मगर उसमें धागे का प्रयोग होगा ही। धागा सूती और कोटेड सामग्री से तैयार होता है। पन्नों के समूह को एक साथ जोड़ना ही इसका मुख्य काम है। यदि निम्नस्तर के धागे का प्रयोग किया जाता है तो यह स्वाभाविक रूप से क्षतिग्रस्त होता है या कीटों का भोजन बन जाता है। धागे पर भी आर्द्रता का प्रभाव पड़ता है।

स्याही (Ink) : ग्रन्थ अथवा प्रलेख के ऊपर जो सूचनाएँ अंकित की जातीं हैं उन्हें स्याही कहते हैं। स्याही में डाई अथवा रंग का महत्वपूर्ण स्थान है। स्याही स्थाई रूप से कागज के ऊपर टिकी रहती है। डाई और रंग के द्वारा कागज के ऊपर विभिन्न प्रकार के चित्र भी बनाये जाते हैं। इससे कोटेड कागज के ऊपर भी काम किया जाता है। अगर वातावरण में आर्द्रता बनी हुयी हो तो स्याही प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है। क्योंकि लेई के समान ही यह चिपचिपी हो जाती है और पृष्ठ एक दूसरे में चिपक जाते हैं। कोटेड कागज के ऊपरी भाग कागज से अलग हो जाते हैं। आर्द्रता और शीलन दोनों के प्रभाव से रंग भी बदल सकता है अथवा स्याही हमेशा के लिए मिट भी सकती है। दोनों ही परिस्थितियों में ग्रन्थालय सामग्री क्षतिग्रस्त तो होगी ही।

एडहेसिव (Adhesive) : इस तरह की जिल्दबन्दी का प्रयोग तेजी से इन दिनों हो रहा है। यह ग्रन्थालय जिल्दबन्दी का एक प्रकार है जिसमें सिलाई का प्रयोग नहीं किया जाता है, केवल सांट दिया जाता है। इस जिल्दबन्दी में पृष्ठों को एक दूसरे से चिपका दिया जाता है। चिपकाने वाली सामग्री बहुत सारी हैं जैसे, लेई, स्टार्च, ग्लू इत्यादि। ग्लू और जिलेटिन जानवरों से प्राप्त पदार्थ हैं। स्टार्च और डेक्स्ट्राइन सब्जी से प्राप्त पदार्थ हैं। इस तरह की जिल्दबन्दी काफी कम खर्च में सुलभ हैं। इनका उपयोग वृहद पैमाने पर किया जा रहा है। यदि इनमें रासायनिक द्रव्यों का प्रयोग हो अथवा ये निम्नस्तर के हों तो स्वयं भी कागज को क्षतिग्रस्त करते हैं तथा कीटों के लिए आकर्षक भोजन का काम करते हैं। विपरीत पर्यावरण होने पर यह खुद भी क्षतिग्रस्तता की तरफ बढ़ जाते हैं। खासतौर पर ग्लू और स्टार्च यदि आर्द्रतापूर्ण वातावरण में आते हैं तो पिघलने लगते हैं और इनमें शीलन उत्पन्न हो जाती है और यह कागज को क्षतिग्रस्त कर देते हैं। जिल्दबन्दी बहुत महत्वपूर्ण काम है क्योंकि यह ग्रन्थ को लम्बी आयु प्रदान करती है। पर्यावरण सम्बन्धी कारक प्रत्यक्ष रूप से

65

जिल्दबन्दी के विभिन्न तत्वों को प्रभावित करते हैं जिससे सामग्री स्वयं ही क्षतिग्रस्त हो जाती हैं।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि किसी भी ग्रन्थ का भौतिक स्वरूप विभिन्न तत्वों से मिलकर बनता है। परिरक्षण के सम्बन्ध में समस्याएँ दो पक्षों पर आधारित हैं, पहला ग्रन्थ के भौतिक पक्षों के विभिन्न अवयवों की जानकारी एक ग्रन्थालयी को होना चाहिए क्योंकि यह पर्यावरण से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं और दूसरा ग्रन्थ का रख-रखाव अथवा भंडारण मानक या यूँ कहें कि समानुपातिक पर्यावरण में रखना जिससे उसमें किसी प्रकार की क्षतिग्रस्तता न हो। जहाँ तक पर्यावरण सम्बन्धी कारक का सवाल है तो यहाँ यह ध्यान देने योग्य पक्ष है कि यह सबसे प्रबल कारक है जो अन्य *कारकों को भी बढ़ावा देता है।*

4.3.3 श्रव्य-दृश्य टेप और डिस्क

इसकी निम्नलिखित तीन विधि हैं जिनके द्वारा रिकार्डिंग का काम पूरा किया जाता है।

- चुम्बकीय विधि
- फिल्मांकन विधि
- ग्रूम्ड विधि

श्रव्य टेप चुम्बकीय विधि से बनती है। श्रव्य-दृश्य टेप में चुम्बकीय विधि और फिल्मांकन को विधि अपनाया जाता है। फोनोग्राफ्स पैटर्न ग्रूम्ड विधि से बनता है।

जब आधारित सामग्री के रूप में चुम्बकीय टेप लिया जाता है तो यह पोलिविनाइल क्लोराइड, सेल्यूलोज एसिटेट, माइलर और लाइफ इत्यादि से बनता है। फिल्मांकन भी इन्हीं विधियों से बनता है, अन्तर सिर्फ इतना है कि इसमें आधार सामग्री के रूप में प्लास्टिक लिया जाता है। यह काफी मजबूत और वजनी होती है और एक लम्बे समय तक ताप, आर्द्रता अथवा प्रकाश से प्रभावित नहीं होता है लेकिन यह अति संवेदनशील होता है और यदि पर्यावरण सम्बन्धी मापक का ध्यान नहीं रखा गया तो तुरंत क्षतिग्रस्त हो जाता है। चूँकि यह थर्मोप्लास्टिक से बना होता है, इसी वजह से यह मुलायम होता है और एक सीमा तक ही ताप को सहन कर सकता है। इन सबों के ऊपर एक विशेष द्रव्य से लेप लगाया जाता है।

छाया चित्र प्रतिवेदन सेल्यूलोज नाइट्रेट अथवा एसिटेट, पोलिफिनाइल क्लोराइड, स्टेरिन अथवा वास्क इत्यादि से तैयार होता है। इसके ऊपर आवाज के ग्रूम्ड सिस्टम से लिया जाता है। यह सिर्फ दिखाने के लिए बनाया जाता है। चूँकि इसमें खर्च अधिक बैठता है इसलिए उत्पादक कम-से-कम खर्च करना चाहता है। इसका जीवन बहुत छोटा होता है क्योंकि जैसे ही विपरीत वातावरण में आता है वैसे ही यह अपनी उपादेयता खो देता है। ठीक यही स्थिति ग्रूम विधि की भी है। ग्रूम विधि में भी यदि निम्न स्तर के साधनों का उपयोग होता है तो विपरीत पर्यावरण में आते ही यह समाप्त हो जाते हैं। श्रव्य-दृश्य के स्तर हमेशा ही मानक पदार्थों से युक्त होने चाहिए। यदि इसके उत्पादन के समय ही मानक का उपयोग नहीं किया जाता तो क्षतिग्रस्तता स्वयं चली आती है। इसके बनाने की भी अपनी सुनिश्चित विधि हैं। इन विधियों के लिए भी मानक सुनिश्चित है और उनके लिए एक निर्धारित समय भी है। कहीं भी लापरवाही से सामग्री के स्तर और मजबूती दोनों प्रभावित होता है। निम्नस्तर की सामग्री निम्नस्तरीय जिंदगी भी लेकर आते हैं। अतः मानक का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

4.3.4 फिल्म एवं छाया चित्र

ग्रन्थालय में विभिन्न प्रकार के छाया चित्र, चलचित्र, फिल्म स्ट्रिप, स्लाइड इत्यादि आते हैं। जो पतले फिसलने वाली पारदर्शी शीट होती हैं जिनका निर्माण सेल्यूलोज एसिटेट, सेल्यूलोज नाइट्रेट तथा प्रकाश संश्लेषण वाले पदार्थों के लेप से होता हैं। ये सभी एक सीमा तक इस पर नियंत्रण रखते

66

हैं तथा एक सुनिश्चित विधि से काम करने पर अपने ऊपर छवि अंकित कर लेते हैं। चाहे किसी भी प्रकार की फिल्म या छाया चित्र क्यों न हो। यह अति संवेदनशील होते हैं। ये ताप और प्रकाश से प्रतिक्रिया कर स्वयं क्षतिग्रस्त हो जाते हैं, इसलिए इन्हें मानक ताप ठंडे वातावरण और अंधेरे में रखना पड़ता है। सभी तरह के पर्यावरण से सम्बन्धित कारक फिल्मों पर अपना प्रभाव डालते हैं। ये निश्चित रूप से अवैधानिक ढंग से इनके भंडारण को प्रभावित करते हैं। पर्यावरण सम्बन्धी कारकों पर नियन्त्रण करने से इसे एक लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

छायाचित्र से सम्बन्धित कागज एक उच्च स्तरीय कोटेड कागज है, जिसके ऊपर **सिल्वर हेलाइड** पार्टिकल जिलेटिन में मिलाकर अथवा रंग संश्लेषण द्रव जिलेटिन में मिलाकर लेप लगाया जाता है उसके बाद निश्चित विधि के तहत छायांकन का कार्य किया जाता है। इन्हें भी धूल रहित कन्टेनर के अन्तर्गत रखना जरूरी है। इनके लिए भी एक मानक तापमान और मानक आर्द्रता का होना बहुत जरूरी है तभी इन्हें लम्बे समय तक बचाया जा सकता है। यदि छाया चित्रकार सही और मानक पदार्थों का उपयोग नहीं करता है तो छवि आती ही नहीं है और अगर आती भी है तो जल्दी समाप्त हो जाती है। अतः परिरक्षण की दृष्टि से ग्रन्थालयी को इनका ज्ञान होना भी बहुत जरूरी है।

4.4 श्रव्य-दृश्य सामग्री से सम्बन्धित समस्याएँ

जहाँ तक श्रव्य-दृश्य सामग्री का सवाल है, चूँकि इसके आधारित सामग्री के रूप में प्लास्टिक या पॉलीथिन का उपयोग किया जाता है। जो ट्रॉपिकल जोन में खुद ही बर्बाद होने लगता है। जब भी पर्यावरण में बदलाव आता है तो इसके भौतिक और रासायनिक दोनों गुणों में बदलाव आ जाता है जिससे इनके विभिन्न पक्षों में क्षतिग्रस्तता स्वाभाविक रूप से होता है। इसको साबित करने की जरूरत नहीं है कि जब भी इनमें क्षतिग्रस्तता आती है या तो आवाज समाप्त हो जाती हैं या छवि, क्योंकि रासायनिक प्रतिक्रिया इनके सभी पक्षों अर्थात आवाज, फिल्म, अथवा छाया चित्र सभी को प्रभावित करती हैं। ये सभी आर्द्रता, शीलन, उच्च तापमान, उच्च स्तरीय प्रकाश सबों से अपनी प्रतिक्रिया करते हैं। धूल भी उपरोक्त सभी सामग्रियों के लिए बहुत नुकसानदेह है। इन सबसे बचाव ही इनकी सुरक्षा है। ये सभी सामग्री जब क्षतिग्रस्त होने लगती हैं तो अपना मूलभूत स्वभाव ही छोड़ देती हैं। ये थोड़ी देर भी विपरीत पर्यावरण सहन नहीं कर सकती। इसी कारण इनकी सुरक्षा प्रत्येक ग्रन्थालयी के लिए मूलभूत समस्या बनकर खड़ी है। अगर ग्रन्थालयी शुरू से ही इनके प्रति सावधान नहीं रहे, इनके कारणों का सही पहचान नहीं कर पाये और उनकी क्षतिग्रस्तता को बचाने का समुचित उपाय नहीं कर पाये तो यह सामग्री तत्काल विनष्ट हो जायेगी। इसी कारण इन्हें लम्बी आयु देने के लिए उत्पादन, भंडारण, रख-रखाव तथा उपयोग सभी में मानक का ध्यान रखना जरूरी है।

4.5 भौतिक क्षतिग्रस्तता के मुख्य कारक

ग्रन्थालय के सभी सामग्री के भौतिक और अभौतिक दोनों पक्ष पर्यावरण सम्बन्धी कारक से क्षतिग्रस्त होते हैं क्योंकि इनके दो मूल रास्ते हैं। पहला यदि पर्यावरण का एक पक्ष भी स्तर से ऊपर या बहुत नीचे हो तो यह क्षतिग्रस्तता की स्थिति उत्पन्न करेगा ही। दूसरा अगर मानक पर्यावरण हो लेकिन सामग्री में उपयोग किये गये पदार्थ मानक के नीचे हो तो भी क्षतिग्रस्तता आयेगी ही। दोनों ही स्थितियाँ बहुत भयंकर हैं। अगर पर्यावरण सम्बन्धी कारक को नियंत्रित रखा जाय और किसी भी स्थिति को उच्चतम स्थिति तक पहुँचने से बचाया जाय तो उच्च स्तरीय रख-रखाव और देख-रेख संभव हो सकती है तथा एक निश्चित सीमा तक ग्रन्थालय सामग्री को क्षतिग्रस्त होने से बचाया जा सकता है।

ग्रन्थालय सामग्री के क्षतिग्रस्तता के विभिन्न कारक और विभिन्न स्थितियाँ हैं। ठीक उसी तरह इनके विभिन्न माध्यम भी हैं जो इन्हें सुनिश्चित क्षति पहुँचाते हैं। विस्तृत रूप से यह कहा जा सकता है कि ग्रन्थालय सामग्री के क्षय और क्षतिग्रस्तता के लिए मुख्य तौर पर पर्यावरण सम्बन्धी समस्याएँ ही

जिम्मेदार हैं जिसके अन्तर्गत मौसमी प्रभाव, वातावरण, प्रदूषण, आर्द्रतापूर्ण स्थिति, अशुद्ध रासायनिक तथा अन्य सामयिक कारण, कागज के रंग में बदलाव होना या उसमें छेद होना बाहरी और आन्तरिक दोनों वजह से हो सकता है। ठीक इसी तरह श्रव्य-दृश्य टेप में भी टूटन, शीलन, आवाज का खत्म हो जाना, छाया चित्र का मिट जाना अथवा अन्य सभी भी आन्तरिक और बाहरी दोनों वजह से होते हैं। अगर ध्यान देकर देखा जाय तो और भी बहुत सारी वजह हैं जिसकी वजह से सामग्रियाँ बर्बाद होती हैं। क्षतिग्रस्तता के कारण अत्यन्त जटिल और सम्मिश्रित हैं जिनकी पहचान भी उतना ही कठिन है। खास परिस्थिति में ही और विशेषज्ञों के द्वारा ही क्षय अथवा क्षतिग्रस्तता के कारणों का सही पहचान किया जा सकता है।

क्षय और क्षतिग्रस्तता को पहुँचाने वाले मुख्य कारक निम्नलिखित हैं जो प्रत्यक्ष और क्रमिक रूप से इसे करते हैं :

- कागज को बनाने वाले मुख्य तत्वों में क्षयग्रस्ततापूर्ण स्वभाव का होना।
- कागज के उत्पादन के वक्त मानक सामग्रियों का प्रयोग नहीं करना अथवा गलत तरीके से कागज का उत्पादन
- साइजिंग करते वक्त तथा रासायनिकों का सम्मिश्रण बनाते वक्त समुचित मात्रा पर ध्यान नहीं देना
- अशुद्ध रासायनिकों का प्रयोग करना
- कागज के साइजिंग के वक्त बहुत ज्यादा मात्रा में अम्लीय पदार्थ का रहना जैसे, एल्यूम, रोजिन इत्यादि। ये सभी कागज को कमजोर करते हैं यह सभी अम्लीयता उत्पन्न कर देते हैं जिससे क्षय अथवा क्षतिग्रस्तता आती है।
- ऑक्सीकरण माध्यम भी अगर अधिक मात्रा में रह जाती है तो यह मशीन से बने कागज के लिए हानिकारक होती है क्योंकि इसके अन्तर्गत मैटेलिक ट्रैक तथा एसिलिरेट्स आक्सीडाइजेशन के बीच प्रतिक्रिया होती है जो इसे रंगहीन बना देता है अथवा इसके रंग में परिवर्तन कर देता है।
- जब कागज अच्छे किस्म का तैयार किया जाता है तो उसमें अल्कलाइन्स का प्रयोग होता है। यह कवक के लिए प्रिय भोजन है।
- चूँकि फिल्म अत्यधिक सावधानी से तथा खास परिस्थिति में विशेष विधि द्वारा ही तैयार किया जाता है इसी कारण यह पर्यावरण से बहुत ही संवेदनशील होता है। विपरीत पर्यावरण मिलने से स्वतः क्षतिग्रस्त भी होने लगता है।
- चूँकि श्रव्य-दृश्य टेपों में कोटिंग के लिए जिस रासायनिक द्रव्य का प्रयोग किया जाता है, वह अत्यधिक संवेदनशील होता है, तथा एक अति विशेष स्थिति में ही कार्य कर सकता है। विपरीत स्थिति बिल्कुल ही सहन नहीं करता है। अतः इसका उत्पादन मानक नियम तथा सामग्री के अनुकूल ही होना चाहिए।
- आधारभूत सामग्री के चरित्र और स्वभाव ही विशिष्ट वातावरण की मांग करती है, जिसके कारण यह प्रतिक्षण विशिष्ट पर्यावरण की मांग भी करती है। अन्यथा क्षतिग्रस्तता स्वतः आ जाती है।

ग्रन्थालय सामग्री के क्षतिग्रस्त होने के प्रमुख कारकों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में बाँटा गया है :

1. सामान्य क्षय
2. आन्तरिक और अति विशिष्ट कारक
3. बाहरी और अन्य कारक

सामान्य क्षतिग्रस्तता क्रमिक क्षतिग्रस्तता को स्पष्ट करता है। यह सामग्रियों में धीरे-धीरे क्रमिक रूप

से क्षति पहुँचाते हैं। सामान्यतः यह सामग्री के मजबूती को प्रभावित करता है यह भी एक विचारणीय स्थिति है कि बहुत सी सामग्री स्वयं भी क्षतिग्रस्त होने लगती है। इसी कारण विशिष्ट उपयोग और विशिष्ट परिस्थिति के मध्य अन्योन्याश्रय सम्बन्ध को देखते हुए उत्पादन के समय ही उच्च और उपयोगी श्रेणी का ध्यान रखना अति आवश्यक है। इसके विभिन्न पक्षों के लिए उत्पादन की प्रक्रिया भी मानक के तहत सही और पूर्ण, सुचारु तथा तकनीक भी पूर्ण सही तथा मानक के अधीन ही होना चाहिए। कच्चे माल का उपयोग भी शुद्धतापूर्ण होना चाहिए। जब भी सामान्य क्षति प्रारम्भ होती है तो उसका मूल कारण समय का अधिक लगना है। आधारित विशेषताएँ यदि निम्न श्रेणी की हों तो क्षतिग्रस्तता के कारण स्वमेव उत्पन्न हो जाते हैं और उत्पादन का काम भी सही ढंग से नहीं हो पाता। सामग्री अधिक देर तक नहीं टिक सकती और वह जल्द-से-जल्द समाप्त हो जाती है। किसी भी बाहरी दबाव से यह प्रारम्भ नहीं होता है।

कागज का निर्माण ही वनस्पति के रेशों से होता है, जिनको बनाने के क्रम में ही क्षय के तत्व सम्मिलित हो जाते हैं। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता है इसके मशीनीकरण टूटते जाते हैं और स्वतः ही क्षय हो जाता है। स्वतः क्षय का क्रम क्या होगा, यह कच्चे माल के श्रेणी पर निर्भर करता है। अगर कच्चा माल मानक किस्म का है तो लम्बे समय के बाद ही उसमें स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता आयेगी। इसके भंडारण की समस्या भी स्वतः दूर हो जायेगी और पर्यावरण सम्बन्धी स्थिति भी उसे प्रभावित नहीं करेगी। कागज के उत्पादन में जैसे ही निम्न स्तर के कच्चे माल का प्रयोग किया जाता है जैसे, लकड़ी का लुगदी या रासायनिक द्रव्यों का सम्मिश्रण को वैसे ही भंडारण और पर्यावरण दोनों ही आवश्यक हो जाते हैं। क्योंकि इन्हीं कारणों से नमी और शीलन इसे तत्काल क्षतिग्रस्त कर देता है।

सेल्यूलोज की लुगदी भी कागजं आधारित सामग्री में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है यह कागज ही नहीं बल्कि प्लास्टिक अथवा अन्य सिंथेटिक सामग्री के लिए भी आधारभूत सामग्री है। इसके लिए भी मानक कच्चे माल का प्रयोग जरूरी है क्योंकि यह कागज से कहीं अधिक संवेदनशील है और पर्यावरण के साथ तुरन्त ही प्रतिक्रिया कर आर्द्रता और शीलन को अपने में समा लेता है जिससे इसका क्षयग्रस्त होना भी स्वभाविक है इसमें अल्कलाइन की मात्रा अधिक होती है जो ऑक्सीजन से प्रतिक्रिया कर आर्द्रता तथा शीलन बहुत ज्यादा मात्रा में पैदा कर लेता है, और जैसे ही इसे विपरीत पर्यावरण मिलती है यह क्षतिग्रस्तता की ओर अग्रसर हो जाता है। अम्लीयता के बढ़ जाने की वजह से कागज का रंग बदल जाता है और फिल्म के ऊपर से सूचनाएँ और छवि समाप्त हो जाती है जो सेल्यूलोज के रेशों को भी कमजोर कर देती है। यह सामग्री को अधिक दिन तक टिकने नहीं देती और उसे कचड़े का ढेर बना देती है। इसमें छोटे-छोटे छिद्र कर देती है तथा इसके ऊपर धब्बे भी पड़ जाते हैं और टूटन भी आ जाती है। अतः यह एक ग्रन्थालयी के लिए जरूरी है कि हमेशा ही मानक कच्चे मालों की पहचान करे और उसका ही उपयोग करने दे। इसकी सुरक्षा के लिए पर्यावरण सम्बन्धी नियन्त्रण भी स्थापित करे।

विशिष्ट तथा निहित गुणों से बने कारक भौतिक पक्षों के आधारभूत कच्चे माल की ओर ले जाता है और यह भी संदेश देता है कि उत्पादन हमेशा मानक पद्धति से ही होना चाहिए। दोनों में यदि कहीं भी त्रुटि रह जाती है तो क्षय और क्षतिग्रस्तता स्वाभाविक रूप से आती है। चाहे वह कागज हो या अन्य सामग्री कागज के लिए तो खास तौर पर लुगदी बनाने तक से लेकर साइजिंग, लोडिंग, मुद्रण, जिल्दबन्दी सभी मानक का ध्यान रखना जरूरी है। ये सभी वस्तुएं भौतिक तथा रासायनिक क्षतिग्रस्तता के आधारभूत कारण हैं, जिससे कि कागज अधिक समय तक पर्यावरण के प्रकोप को नहीं सह सकता है। ये सभी कारक विशिष्ट तो हैं ही पूर्णतः पर्यावरण के अधीन हैं।

बाहरी परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के तत्व आते हैं जैसे : भौतिक, रासायनिक, जैवीय कारक। ये सभी कारक बाहरी रूप से भी सामग्री को क्षतिग्रस्त करते हैं। प्राथमिक बाहरी कारक कागज के भौतिक क्षतिग्रस्तता के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी होते हैं जो रासायनिक तथा जैवीय क्षतिग्रस्तता को भी बढ़ावा देते हैं।

पर्यावरण सम्बन्धी कारक किस प्रकार से ग्रन्थालय सामग्री के भौतिक पक्षों को क्षतिग्रस्त कर देता है इसका विस्तृत विवरण नीचे के भाग में दिया गया है।

4.5.1 भौतिक क्षतिग्रस्तता के मुख्य कारक : चित्र के माध्यम से

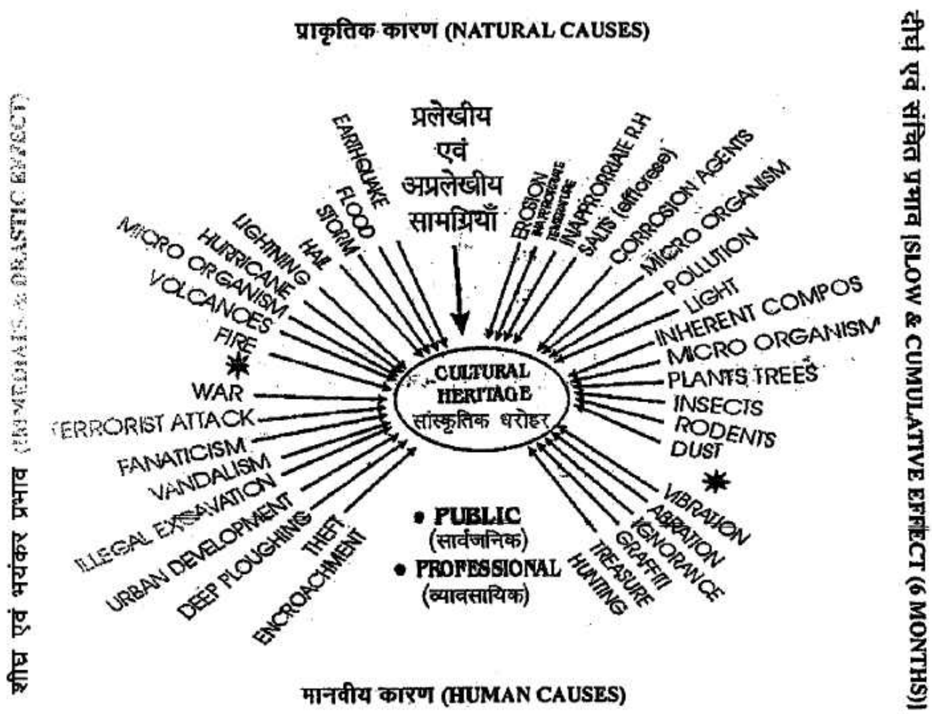

LACK OF :

- AWARENESS
- PLANNING
- TRAINING
- MOTIVATION
- SECURITY
- COMMUNICATION

IMPROPER EXECUTION :

– TRANSPORT	– STORAGE	– LIGHTING
– BUILDING	– EXHIBITION	– INTERVENTION
– DISTRIBUTION	– SAPORT	– HANDLING
– DOCUMENTATION	– CLIMATE	– MAINTENANCE

(Deteriorator)

4.6 ताप

विषुवतीय रेखा के अन्तर्गत आने वाले देशों में भारत का स्थान सबसे प्रमुख है। हमारे देश का तापमान बदलता रहता है कभी-कभी यह अधिकतम सीमा रेखा को भी पार कर देता है। यह स्थिति सापेक्षित आर्द्रता की भी है। मात्र कुछ ही महीने को छोड़कर अन्य महीने में पानी बरसता रहता है तथा लम्बे समय तक कुछ प्रदेशों में गर्मी बनी रहती है। हमारे देश में कुछ ही प्रदेश ऐसे हैं जहाँ मौसम में परिवर्तन नहीं के बराबर होता है। यहाँ ताप का उच्चतम माप लेने पर 45 डिग्री से0 गर्मी में तथा न्यूनतम 5 डिग्री से0 जाड़े में चला जाता है। यह कम और ज्यादा ताप ग्रन्थालय सामग्री के भौतिक पक्षों को प्रभावित करता है। प्रत्यक्ष रूप से तापमान के बढ़ते क्रम के वजह से ही ग्रन्थालय में क्षतिग्रस्तता भी उसी क्रम में बढ़ती चली जाती है।

तापमान का सीधा सम्बन्ध सापेक्षित आर्द्रता से है। तापमान जितने ऊँचे स्तर पर होती है आर्द्रता उतनी ही नीचे चली जाती है जिसके वजह से सेल्यूलोज की रेशाएँ विखंडित होने लगती हैं। कागज पीले पड़ जाते हैं तथा उसमें छिद्र हो जाता है। ठीक इसके विपरीत तापमान निम्नतम है और आर्द्रता उच्चतम है तो सेल्यूलोज के रेशे में शीलन आ जाती है और उसके रेशे आपस में चिपकने लगते हैं। दोनों ही परिस्थितियों में कागज की मजबूती घटने लगती है। जब भी तापमान 35 डिग्री से0 से ऊपर जाता है तो इसकी वजह से कागज में कड़ापन और छिद्र होना स्वाभाविक है। यही कागज, कपड़े, लीनियन अथवा चमड़े की भौतिक क्षतिग्रस्तता है इससे एड्हेसिव भी प्रभावित होती है। जिसकी वजह से जिल्दबन्दी की क्षमता भी घट जाती है। उच्च स्तरीय तापमान निम्न प्रकार के हानिकारक रसायनों को उत्पन्न करता है। फोटो लेशिश, हाइड्रोलाइसिस और ऑक्सीडेशन इत्यादि। ये सभी कागज की क्षमता को तो घटाते ही हैं फिल्म तथा अन्य ग्रन्थेत्तर सामग्री की क्षमता को भी घटा देते हैं। यदि इन्हें सही पर्यावरण में नहीं रखा गया तो इनसे बनी सामग्री का उपयोग नहीं हो सकता है। ताप का मुख्य स्रोत जलवायु ही है, लेकिन दूसरे स्रोत के रूप में विद्युत भी है। अगर बल्ब को बहुत हाई बोल्ट पर उपयोग किया जाता है तो तापमान बढ़ जाता है। तापमान के बढ़ने से ग्रन्थालय सामग्रियों में गर्मी और ताप दोनों ही क्षति पहुँचायेंगे।

मशीनीकरण की वजह से भी तापमान बढ़ता है। जब भी कागज को मशीन के द्वारा तैयार किया जाता है तो सेल्यूलोज के रेशों पर, अकारण दबाव बढ़ जाता है, जिससे वह अपनी मजबूती खो देता है। जब भी इनके ऊपर तापमान का दबाव बढ़ता है तो इनके रेशे अलग-अलग हो जाते हैं क्योंकि इसमें हाइड्रोलाइसिस की मात्रा बहुत बढ़ जाती है, जिससे ऑक्सीडेशन और फोटो सिंथेसिस स्वयं उत्पन्न हो जाती है। उत्पादन के समय भी ताप के बढ़ने से गन्धक, तूतिया इत्यादि में वृद्धि हो जाती है जिससे ग्रन्थालय सामग्री को प्रत्यक्ष क्षति पहुँचती है। खासतौर पर फिल्म, टेप और प्रतिवेदन का निर्माण थर्मोप्लास्टिक से किया जाता है। इन्हें जब भी उच्चतम तापमान में रखा जाता है तो ये पिघलने लगते हैं और स्वाभाविक रूप से ही इनकी भौतिक क्षमता घट जाती है। यदि ये मानक क्षमता को पार कर जाते हैं तो पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं। चूँकि इसमें किसी प्रकार का पुनरुद्धार सम्भव नहीं है। इसी कारण इसका उपयोग भी निर्देशों के तहत ही है। तापमान का प्रभाव थर्मोप्लास्टिक पर सीधा पड़ता है। इसके विपरीत यदि तापमान और आर्द्रता दोनों में से एक भी निम्नस्तरीय है तो यह थर्मोप्लास्टिक में सिकुड़न पैदा हो जाती है जिसकी वजह से भी यह क्षतिग्रस्त हो जाता है।

4.7 प्रकाश एवं अन्धकार

प्रकाश दो तरह का होता है प्राकृतिक एवं कृत्रिम। दोनों में से कोई भी प्रकाश अगर ग्रन्थालय सामग्री पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है तो यह ग्रन्थालय सामग्री को प्रभावित करता है। प्राकृतिक प्रकाश किरणों के रूप में दिखायी देता है तथा यह पारदर्शी होता है और यह सामग्री के अन्दर तक चला जाता है। दूसरी ओर कृत्रिम किरणें हैं जैसे, कोस्मिक रे, गामा रे, एक्सरे इत्यादि। ये सभी अल्ट्रावायलेट रे

(Ultraviolet) हैं। किरणें चाहे अल्ट्रावायलेट हो या इनफ्रा रे सभी हानिकारक नहीं होती । यह परिस्थितियों के अनुसार ही हानि पहुँचाती हैं जब इनका दुरुपयोग होता है। अल्ट्रावायलेट रे इनफ्रा रे की तुलना में अत्यधिक हानिकारक हैं क्योंकि जब भी यह सीधे सामग्री पर पड़ती है तो उसमें क्षतिग्रस्तता आयेगी ही। इसी वजह से ग्रन्थालय सामग्री को प्रत्यक्ष धूप में नहीं रखना चाहिए। प्रत्यक्ष धूप में रखने से सेल्यूलोज के रेशे कड़े हो जाते हैं जिससे उसमें टूटन आ जाती है, जिसके वजह से यह कमजोर हो जाता है। कागज का रंग बदलने लगता है और उसमें छेद हो जाता है।

प्राकृतिक या कृत्रिम प्रकाश स्याही पर भी प्रत्यक्ष प्रभाव डालता है। चाहे वह डाई हो या रंग उसे समाप्त कर देते हैं। ये फोटोकेमिकल के साथ प्रतिक्रिया करते हैं जिसके कारण लिगनिन अम्ल, रेजिन, ग्लू, स्टार्च इत्यादि क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। इन प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप सेल्यूलोज के रेशे भी प्रभावित हो ही जाते हैं, जिससे कागज भी कमजोर हो जाते हैं। सेल्यूलोज के रेशे के ऊपर जब भी प्रत्यक्ष प्रकाश पड़ता है तो लिगनिन तथा अन्य असेल्यूलोज पदार्थ उत्पन्न हो जाते हैं जिससे कागज पीले पड़ जाते हैं। रेजिन, ग्लू, लिगनिन, आयरन एलम इत्यादि का प्रयोग कागज के साइजिंग तथा लोडिंग के क्रम में होता है। जब भी इन पर प्रत्यक्ष प्रकाश पड़ता है तो ये सभी पिघलने लगते हैं जिससे स्वाभाविक क्षतिग्रस्तता आती है।

सूर्य का प्रकाश अथवा कृत्रिम प्रकाश किसी का भी अल्ट्रा वायलेट किरण को कभी भी सामग्री पर प्रत्यक्ष नहीं पड़ने देना चाहिए। जरूरत पड़ने पर साधारण ट्यूब लाइट का प्रयोग करना चाहिए। विद्युत बल्ब लाइट का प्रयोग करना चाहिए। विद्युत बल्ब भी इसके लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। उच्च स्तरीय प्रकाश के कारण ही उच्च तापमान उत्पन्न होता है जो ग्रन्थालय सामग्री को तत्काल क्षति पहुँचाता है और इस क्षति से बचाव भी संभव नहीं होता है।

इसलिए यह कहा जा सकता है कि प्रकाश भी पर्यावरण सम्बन्धी क्षतिग्रस्तता का एक प्रमुख प्रतिनिधि है। यह सत्य है कि भंडारण क्षेत्र में प्रकाश की आवश्यकता है लेकिन प्रत्यक्ष सूर्य का प्रकाश कभी भी भंडारण कक्ष में नहीं जाना चाहिए। कृत्रिम प्रकाश का उपयोग भी मानक के अनुसार होना चाहिए।

अंधेरा भी भंडारण के लिए बहुत ज्यादा हानिकारक तत्व है। अंधेरे के कारण शीलन उत्पन्न होती है, जिससे कवक का जन्म और पालन होता है। कीट भी इसी के कारण उत्पन्न होते हैं। अंधेरा जैवीय कारकों को जन्म देने का प्रत्यक्ष साधन है और ये कीट ग्रन्थालय सामग्री को बहुत ही कम समय में क्षतिग्रस्त कर देते हैं। आर्द्रता और शीलन अंधेरे में ही बढ़ते हैं जो ग्रन्थालय सामग्री के भौतिक, रासायनिक और जैवीय क्षतिग्रस्तता को बढ़ाते हैं। इसी कारण ग्रन्थालय के प्रत्येक कोने में मानक प्रकाश की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए तभी भंडारण पूर्ण सुरक्षित होगा।

4.8 आर्द्रता एवं सीलन

ताप या प्रकाश दोनों के निम्नस्तरीय होने पर आर्द्रता और सीलन आ जाती है जो ग्रन्थालय सामग्री को हमेशा प्रभावित करता है और परिरक्षण सम्बन्धित समस्याओं को पैदा कर देता है। यह सही है कि मानक सीमा के अन्तर्गत ग्रन्थालय में सामग्री के फिसलने के लिए उपयोग की दृष्टि से आर्द्रता का होना आवश्यक है, लेकिन यह मानक सीमा को पार कर देता है तो चाहे वह निम्न स्तर का हो या उच्च स्तर का दोनों ही स्थितियों में ग्रन्थालय सामग्री का क्षतिग्रस्त होना स्वभाविक है। गर्मी के दिनों में मानसून के कारण वायु में आर्द्रता की मात्रा बहुत बढ़ जाती है, जो प्रत्यक्ष रूप से सामग्री के ऊपर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। मौसम सम्बन्धी आर्द्रता अत्यन्त ही घातक है क्योंकि यह हवा के साथ ही अन्दर आती है। ग्रन्थालय में, यह सामग्री के भौतिक पक्षों को प्रभावित करती है, जिससे पूरा वातावरण ही प्रभावित हो जाता है और विभिन्न प्रकार के जैवीय प्रतिनिधि कार्य करने लगते हैं, जिससे क्षतिग्रस्तता दोनों ही सुनिश्चित है।

सीलन कागज को नरम कर देती है जिसके वजह से कागज कमजोर हो जाता है। सेल्यूलोज के रेशे

अपनी शक्ति खो देते हैं और वे बिखर जाते हैं तथा उपयोग के क्रम में टूट-फूट जाते हैं। आर्द्रता की वजह से एडहेसिव भी कमजोर हो जाता है जिससे जिल्दबन्दी भी कमजोर हो जाती है। इससे सम्बन्धित जो पदार्थ हैं जैसे साइजिंग एवं लोडिंग वे ढीले पड़ जाते हैं। इसका प्रभाव स्याही पर भी पड़ता है जिसके कारण वह फैलने लगती है। यह आर्ट पेपर में भी ढीलापन ला देती है जिससे उसकी चमक खत्म हो जाती है। शीलन स्याही, डाई, रंग तथा पिग्मेंट सभी को प्रभावित करती है। शीलन की वजह से सभी पृष्ठ आपस में चिपक जाते हैं जिससे उसमें दिये गये नक्शे, चित्र सारणी इत्यादि को मूल रूप में नहीं रखा जाता है। फिल्म तथा ऑडियो टेप में भी आर्द्रता का प्रकोप होता है क्योंकि इसके जिलेटिन घुल जाते हैं। रौल फिल्म, टेप तथा माइक्रोफिश भी आपस में एक दूसरे से चिपक जाते हैं जिसकी वजह से वे क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

आर्द्रता की वजह से भी बहुत सारी रासायनिक क्षतिग्रस्तता दिखाई देती है। सीलन से कागज में मौजूद बहुत तरह के अम्ल आपस में ही प्रतिक्रिया करने लगते हैं जिससे इसका रंग पीला या धब्बा पड़ जाता है। इन द्रव्यों के अशुद्ध होने की वजह से ही इनमें बहुत तरह की प्रतिक्रिया शुरू होती है, जिससे सामग्री तो क्षतिग्रस्त होती है, ग्रन्थालय का वातावरण भी अस्वस्थ हो जाता है। इसी से बहुत तरह के कीटों तथा कवक का जन्म और पोषण होता है। वायु में जो कीजाणु हैं वो स्थान ग्रहण कर लेते हैं और फैलने लगते हैं। आर्द्रता की अधिक मात्रा ही इनका पोषक है। ये कागज को तो क्षति पहुँचाते ही हैं जिल्दबन्दी के सामग्री को भी उतना ही नुकसान पहुँचाते हैं। शीलन के साथ धूल के मिलने से भौतिक और रासायनिक दोनों में क्षतिग्रस्तता पैदा होती है। उपरोक्त सभी क्षतिग्रस्तता ग्रन्थालय सामग्री के लिए बहुत ज्यादा नुकसान पहुँचाती है।

4.9 पानी

पानी दो तरह से ग्रन्थों को नुकसान पहुँचाता है। प्रथम तो यह वायुमंडल में आर्द्रता पैदा करके ग्रन्थ के कई शत्रु पैदा करता है जैसे : फंगस, कीड़े आदि। ये लोहे की आलमारी, कुर्सियों आदि को जंग लगाकर बर्बाद कर देता है।

दूसरे तरह से यह वर्षा के पानी द्वारा ग्रन्थालय की पाठ्य सामग्रियों और अन्य सामानों को नुकसान पहुँचाता है। पानी खिड़की के द्वारा या छत के चूने से ग्रन्थालय में प्रवेश कर जाता है। बाढ़ का पानी भी ग्रन्थालय में प्रवेश कर ग्रन्थालय की पाठ्य सामग्री तथा अन्य सामानों को नुकसान पहुँचा सकता है। इन सब के पीछे मानवीय लापरवाही ही होती है। पानी के प्रकोप से सभी सामग्री विनष्ट हो जाती हैं इसी वजह से इन्हें रोकना बहुत जरूरी है।

4.10 धूम्रपान

धूम्रपान भी पानी की तरह ग्रन्थालय सामग्रियों का एक प्रबल शत्रु है। चाहे धुआँ दिखाई दे या नहीं इसका अंश वायु में रह जाता है और उसी के साथ धूल-गर्द मिलकर रासायनिक प्रतिक्रिया शुरू कर देते हैं। खास तौर पर शहरों में जहाँ हजारों की संख्या में लोग धूम्र पान करते हैं और बहुत तरह के उद्योग भी चलते हैं वहाँ वायु में कार्बन की मात्रा बहुत ज्यादा हो जाती है। यह सेल्यूलोज के रेशे पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है और दूसरे पक्ष भी प्रभावित होते हैं। ये सभी कागज में फूलन ला देते हैं जिससे भी वह कमजोर पड़ जाता है। अतः धूम्रपान को भी हमेशा वर्जित करना चाहिए।

धूम्रपान खासतौर पर रासायनिक प्रतिक्रिया करते हैं जिसके कारण ग्रन्थालय सामग्री क्षतिग्रस्त होती है। धुआँ की एक वृहद मात्रा कोयला अथवा किरोसन के जलने से उत्पन्न होता है। कल कारखानों के चलने से भी भयंकर धुआँ उत्पन्न होता है जिसकी वजह से वातावरण में रासायनिक प्रदूषण फैल जाता है। कार्बन की मात्रा बहुत बढ़ जाती है और नाइट्रोजन की मात्रा बहुत घट जाती है। सल्फर डाईऑक्साइड भी कोयले एवं फ्यूल के जलने से वृहद मात्रा में उत्पन्न हो जाती है जो

कागज का प्रत्यक्ष शत्रु है। लोहे, ताँबे, सल्फर डाई-ऑक्साइड अम्ल इत्यादि की मात्रा भी भयंकर रूप से बढ़ जाती है जिसके कारण मानवीय स्वास्थ को भी भयंकर हानिं पहुँचाती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि धूम्रपान मानवीय भूल का परिणाम है इसी कारण ग्रन्थालयों में धूम्रपान वर्जित है।

4.11 धूल एवं गंदगी

धूल सबसे बड़ा दुश्मन है जो अपने साथ बहुत प्रकार के क्षतिग्रस्तता के कारणों को भी लाता है। धूल का जन्म हवा में होता है। यह हवा के निचले तह में बैठ जाता है और वहाँ से ग्रन्थालय में प्रवेश करता है। धूलकण ग्रन्थों पर या उसके अन्दर बैठ जाते हैं और कागज के जीवन को कम कर देता है। धूलकण की वजह से बहुत से कीड़े ग्रन्थ की ओर आकर्षित होते हैं और उन्हें क्षति पहुँचाते हैं। धूल और गंदगी में सल्फर की मात्रा बहुत अधिक होती है जिसके वजह से यह ग्रन्थालय सामग्री को रासायनिक एवं भौतिक दोनों प्रकार की क्षति पहुँचाते हैं। धूल की वजह से अम्ल की मात्रा भी बढ़ जाती है जो शीलन को पैदा करती है। धूल और गंदगी की वजह से ग्रन्थों के पृष्ठ रंगहीन होने लगते हैं। उनके ऊपर कवक का प्रकोप भी हो जाता है। सेल्यूलोज के रेशे कमजोर पड़ने लगते हैं। इस तरह धूल और गंदगी के द्वारा जो क्षतिग्रस्तता आती है वह स्पष्ट दिखायी देती है। धूल श्रव्य-दृश्य पदार्थों के लिए तो प्रत्यक्ष दुश्मन है। धूल की वजह से इनके आवाज और छाया चित्र दोनों ही समाप्त हो जाते हैं। अगर यह कहें कि धूल और गंदगी श्रव्य-दृश्य सामग्री के सभी पक्षों को समाप्त करने की क्षमता रखते हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अतः धूल से इनका सीधा बचाव प्रत्येक ग्रन्थालयी के लिए आवश्यक है।

4.12 वायु प्रदूषण

साफ वायु का ग्रन्थालय में आना जरूरी है क्योंकि यह मानव स्वास्थ्य से लेकर ग्रन्थालय सामग्री तक के लिए महत्वपूर्ण है। वायु के अंदर नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, आर्गन, वाष्प एवं कार्बन डाई-ऑक्साइड इत्यादि सभी मिली रहती है। कुछ मात्रा में नियॉन, क्रिप्टॉन, हाइड्रोजन इत्यादि भी मिली रहती है। इसके अतिरिक्त और बहुत सारे अशुद्ध रासायनिक भी मिले रहते हैं जैसे सल्फर, कार्बन इत्यादि। ये सभी प्रदूषण के प्रमुख तत्व हैं। जब भी बहुत तरह की अशुद्धता मानक को पार कर जाती है, तब वायु प्रदूषण जैसे समस्या पैदा होती है। यह भी सत्य है कि क्षतिग्रस्तता के प्रत्यक्ष कारणों का रूप भी ले लेती हैं। ऑक्सीजन वाष्प में मिल जाता है जिससे वह अपना गुण ही खो देता है और हाइड्रोलाइसिस तथा ऑक्सीडेशन जैसी अशुद्धियों को उत्पन्न करता है। ग्रन्थालय सामग्री को किसी भी हालत में इससे परिरक्षित नहीं किया जा सकता है। ग्रन्थालय सामग्री भी मनुष्य की तरह ही प्रदूषित वायु में लम्बी अवधि तक जीवित नहीं रह सकते हैं। ग्रन्थालय सामग्री के प्रत्यक्ष दुश्मन हैं अशुद्धता एवं अशुद्ध वायु।

वायु की अशुद्धता तथा प्रदूषण के मुख्य स्रोत औद्योगीकरण हैं जिसके कारण सल्फर डाई-ऑक्साइड, अमोनिया, नाइट्रोजन डाई-ऑक्साइड, कार्बन डाई ऑक्साइड, ओजोन और एरोसलस इत्यादि उत्पन्न होते हैं जो ग्रन्थालय सामग्री को प्रत्यक्ष क्षति पहुँचाते हैं।

हाइड्रोजन सल्फाइड जो औद्योगीकरण, औद्योगिक गैस, कूड़े-कचड़े तथा अन्य अवांछित जैवीय प्राणियों की प्रतिक्रिया स्वरूप वायु में प्रदूषण का एक चक्र सा बन जाता है। यही क्षतिग्रस्तता का मूल कारण है किन्तु यह दिखायी नहीं देता। इसकी गति बहुत धीमी होती है। यह कागज पर प्रभाव डालता है जिससे उसके रेशे कमजोर हो जाते हैं। अमोनिया का प्रभाव जिल्दबन्दी के सामग्रियों पर पड़ता है जिससे जिल्दबन्दी ढीली पड़ जाती है और पृष्ठ बिखर जाते हैं। ओजोन, ऑक्सीजन और

ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व :पर्यावरण

अल्ट्रा वायलेट किरण से प्रतिक्रिया करता है जिसके कारण वातावरण प्रदूषित हो उठता है। वातावरण प्रदूषणः नाइट्रोजन डाई-ऑक्साइड, कार्बन डाईआक्साइड तथा कार्बन मोनोक्साइड का भी महत्वपूर्ण स्थान है। ऑटो मोबाइल बाह्य निष्कासन पंखों के कारण भी यह प्रदूषण फैलता है। सूर्य की रोशनी में जब यह आते हैं तो इससे नाइट्रोजन डाई-ऑक्साइड प्रचुर मात्रा में बनती है जिससे भी वातावरण प्रदूषित होता है। ओजोन कार्बनिक पदार्थों को तोड़ देता है और कार्बन उसमें सिकुड़न लाता है तथा उसकी सुरक्षात्मक शक्ति को घटा देता है। यह शीलन को भी पैदा करता है। शीलन के द्वारा कपड़े भी प्रभावित होते हैं तथा अन्य सभी सामग्री भी। वायु प्रदूषण की वजह से चमड़े, जिलेटिन, ग्लू, पेस्ट सभी बर्बाद हो जाते हैं।

वायु प्रदूषण हमेशा से एक भयंकर समस्या रही है जिसका मुख्य कारण इसके अन्तर्गत कार्बन का होना है। कार्बन, कोयले, फ्यूल, डीजल इत्यादि के जलने से बनते हैं। इनसे बचाव करना बहुत जरूरी है क्योंकि ये विभिन्न प्रकार के अन्य कारक को भी जगा देते हैं। जैसे धूल, गन्दगी, रासायनिक द्रव्य, कीट इत्यादि। औद्योगिक पक्ष विभिन्न प्रकार के गैसों को उत्पन्न करते हैं जैसे सल्फर डाई-ऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, लोहे इत्यादि। ये सभी मिलकर विभिन्न प्रकार की रासायनिक प्रतिक्रियाएँ करते हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव कागज और अन्य सामग्रियों पर पड़ता है। इसी वजह से प्रत्येक ग्रन्थालय के लिए शुद्ध और साफ वायु का आगमन जरूरी है।

4.13 पर्यावरण नियन्त्रण

पर्यावरण पर नियन्त्रण कैसे हो इसके लिए विभिन्न विद्वानों ने शोध किया है। ग्रन्थालय के अन्दर यह स हो सके इसका भी समय-समय पर प्रयास किया गया है। सामान्यतया यह पाया गया है कि प के कारण ही भौतिक और रासायनिक कारक क्षतिग्रस्तता उत्पन्न करते हैं। ये सभी क्षतिग्रस्तता के कारण कारकों के निवारण के लिए नियन्त्रण आवश्यक है।

ग . परिरक्षण के लिए दो खास पक्ष हैं : पहला प्राथमिक मानदण्ड और दूसरा उपचारात्मक म । प्राथमिक मानदण्ड उत्तम रख-रखाव के लिए बनाये गये हैं जिसके अन्तर्गत निरीक्षण ध । सफाई, सामयिक निरीक्षण, भंडारण इत्यादि रखे गये हैं, जिससे क्षतिग्रस्तता चाहे अ रासायनिक हो, जैवीय हो अथवा अन्य हो, उनके मूलभूत श्रोत को समाप्त किया जाय अ क्षतिग्रस्तता को अधिक से अधिक बचाया जाय। रासायनिकों का प्रयोग कर कीटाणुओं को स किया जाय तथा ग्रन्थालय भंडारण को पूरी तरह से सुरक्षित रखा जाय। दूसरी ओर सुरक्षात्मक म के तहत यह देखा गया है कि जब ग्रन्थालय सामग्री क्षतिग्रस्त हो जाय तो उसके कारणों का पता लगाया जाय, उसे समाप्त किया जाय तथा क्षतिग्रस्त सामग्री का सही उपचार किया जाय। इसी कारण से इस मानदंड के अन्दर सफाई, मरम्मत, पुनरुद्धार, निराम्लीकरण लेमिनेशन तथा धूमन आदि आते हैं। इस कार्य के लिए अलग-अलग सामग्री के उपचार की आवश्यकता पड़ती है। क्षतिग्रस्त सामग्री का पुनरुद्धार कर उन्हें पुनः उपयोग के योग्य बनाया जाता है।

4.13.1 भवन

ग्रन्थालय भवन का निर्माण एक तकनीकी कार्य है। इसका निर्माण ग्रन्थालय के कार्यों को सफलतापूर्वक एवं सुचारु रूप से सम्पन्न करने हेतु किया जाता है। ग्रन्थालय भवन का स्थान पर्यावरण नियन्त्रण में सबसे पहला है। यदि ग्रन्थालय भवन ग्रन्थालयी की देख-रेख में बना हो तो यह सब बात पर ध्यान देना जरूरी है जैसे भवन का स्थान कैसा है, यहाँ की मिट्टी कैसी है तथा उसमें जो सामग्री लगी वह कैसी है, उसके बाद अंदरूनी हिस्से पर भी ध्यान देना जरूरी है। भंडारण कक्ष को भी मानक के आधार पर बनाया जाना चाहिए। अगर ग्रन्थालय भवन पुराना हो तो ऐसी

स्थिति में ग्रन्थालयी अपनी इच्छानुसार परिवर्तन करवा सकता है या उसकी मरम्मत भी करवा सकता है। वह रंगाई, पुताई तथा मरम्मत के द्वारा शीलन इत्यादि को रोक सकता है।

4.13.2 प्रकाश

ग्रन्थालय में प्रकाश का आना बहुत जरूरी है लेकिन इसका प्रत्यक्ष प्रवेश ग्रन्थालय सामग्रियों को नुकसान पहुँचाता है। इसी वजह से ग्रन्थालय की खिड़कियों पर रंगयुक्त शीशों का प्रयोग करना चाहिए। सामान्यतया यह पीले या हरे रंग का हो। पर्दे भी इन्हीं रंगों के लगाने चाहिए, जिससे अल्ट्रा वायलेट किरण, सूर्य का प्रकाश, धूल, वर्षा इत्यादि का ग्रन्थालय में प्रत्यक्ष प्रवेश न हो सके। वेंटिलेटर के ऊपर भी रंगीन शीशे हों जगह-जगह मानकों के अनुकूल ही बल्ब की व्यवस्था होनी चाहिए। जिस प्रकार प्रकाश ग्रन्थालय का दुश्मन है ठीक उसी तरह अंधकार भी। इसी वजह से ग्रन्थों के भंडारण कक्ष में मानक रोशनी तथा अंधेरा दोनों की नियंत्रित व्यवस्था हो।

4.13.3 आर्द्रता एवं सीलन

पर्यावरण में आर्द्रता कितनी मात्रा में उपलब्ध है इसे हाइग्रोमीटर के द्वारा माप लिया जाता है। हाइग्रोमीटर के अन्दर दो थर्मोमीटर लगे होते हैं। एक में सूखे बल्ब लगे होते हैं और एक में भीगे बल्ब। आर्द्रता की माप दोनों बल्बों के सहारे की जाती है। इस थर्मोमीटर के द्वारा माप लेने से ताप और आर्द्रता दोनों का ही प्रतिशत पता चल जाता है। अगर आर्द्रता 70 % या उससे अधिक होती है तो उन्हें 55 % तक लाने का प्रयास किया जाता है। इसके लिए निराद्रीकरण की प्रक्रिया अपनायी जाती है। निराद्रीकरण के लिए निम्नलिखित रसायनों का उपयोग किया जाता है :- सिलिका जेल या एनिहाईड्रोयस कैल्शियम क्लोराइड ये प्रयोग में काफी संतोषजनक परिणाम देते रहे हैं। एक कक्ष में दो से तीन किलोग्राम सिलिका जेल का प्रयोग किया जाता है। छोटे-छोटे प्लेट में 20-25 इंच की दूरी पर इन्हें रख दिया जाता है जिससे आर्द्रता पर नियन्त्रण हो जाता है। खास कर बरसात या पुराने मकान में इसकी आवश्यकता होती है।

4.13.4 ताप

ग्रन्थालय कक्षों में एक आदर्श तापमान के रूप में 20 डिग्री से0 से 25 डिग्री से0 तथा सापेक्षित आर्द्रता 5+55 % माना गया है। इसे हमेशा बनाये रखना वातानुकूलन से ही सम्भव है लेकिन हमारे देश में यह सम्भव नहीं है कि प्रत्येक ग्रन्थालय में वातानुकूलन की व्यवस्था की जाय। यहाँ के ग्रन्थालयों में ताप और नमी पर नियन्त्रण अन्य विभिन्न प्रकार के प्रायोगिक विधियों से किया जाता है। गर्मी में जब तापमान बहुत बढ़ जाता है तो खिड़कियों को बन्द कर दिया जाता है और इनके ऊपर रंगीन शीशा चढ़ा दिया जाता है और इनमें खस के पर्दे या भारी सूती पर्दे लगा दिये जाते हैं। वायु निष्कासन पंखे का उपयोग किया जाता है तथा अन्दर के पंखों की गति बढ़ा दी जाती है। शाम के वक्त ग्रन्थालय बन्द होने से पहले कुछ देर के लिए खिड़की और दरवाजों को खोल दिया जाता है, जिससे साफ वायु प्रवेश कर सके।

4.13.5 घरेलू रख-रखाव

आदर्श रख-रखाव के लिए पर्यावरण पर नियन्त्रण बहुत जरूरी है। भौतिक संरक्षण के लिए हर भाग का रोजाना देखभाल जरूरी है कहा भी गया है कि बचाव ही सुरक्षा है। इससे प्रतिदिन होने वाले क्षतिग्रस्तता का पता तो चलता ही है तथा क्षतिग्रस्तता के कारकों का पता भी चलता है, जिसका

तत्काल निवारण भी सम्भव होता है। धूल और गंदगी मिलकर ग्रन्थालय के वातावरण को प्रदूषित कर देते हैं। अतः रोजाना धूल झाड़ने का काम भी होना चाहिए, सफाई का काम भी नियमित रूप से होना चाहिए। इसका एक साप्ताहिक रुटीन बना दिया जाना चाहिए। कोनों, सेल्फों, कैबिनेट डेस्क, टेबल इत्यादि पर पड़े धूलों को झाड़ने के लिए विशिष्ट निर्देश दिया जाना चाहिए। धूल झाड़ना सूचीबद्ध तथा रुटीन कार्य के रूप में लगातार किया जाना चाहिए। इसके लिए वैक्यूम क्लीनर का उपयोग सर्वोत्तम है क्योंकि यह ग्रन्थ के कोने-कोने से धूल खींच लेता है। यदि यह उपलब्ध नहीं है तो डस्टर से इसकी सफाई करना चाहिए। फर्श पर रोजाना पोंछा लगवाना चाहिए।

निरीक्षण के क्रम में यदि किसी तरह की गंदगी पर निगाह पड़े अथवा कवक के चिन्ह दिखायी दें तो तुरन्त उसे मिटाने का प्रयास करना चाहिए। ग्रन्थों के निधानियों पर यदि दीमक अथवा कीटाणु दिख जाएँ तो उनकी सफाई भी जरूरी है। यदि कीटाणुओं की सफाई प्रतिदिन किया जाय तो वह स्वयं ही निधानियों से हट जाते हैं। अतः वर्ष में कम-से-कम दो या तीन बार इन निधानियों की पूर्ण सफाई होनी चाहिए।

उत्तम रख-रखाव तथा प्राथमिक मापदंड ग्रन्थालय सामग्रियों को सभी प्रकार के पर्यावरण सम्बन्धी कारक से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

4.5 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में ग्रन्थालयी सामग्री के प्रमुख क्षतिग्रस्तता के कारणों का वर्णन किया गया है। जहाँ तक संभव हो पर्यावरण सम्बन्धी कारकों की विवेचना तथा उन्हें निराकरण करने के उपायों का वर्णन किया गया है। इसके अन्तर्गत ताप, आर्द्रता, पानी, प्रकाश, वायु प्रदूषण, धूम्रपान, धूलकण गंदगी इत्यादि सभी को रखा गया है। जिसके तहत यह पाया गया है कि पर्यावरण एवं वातावरण सम्बन्धी परिस्थितियाँ मनुष्य के ऊपर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है तो ग्रन्थालय सामग्री इससे अछूती कैसे रह सकती है। ग्रन्थालय सामग्री में अधिकांश क्षय पर्यावरणों के कारण ही होता है। इन्हें लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए एक आदर्श पर्यावरण स्थापित करने की आवश्यकता है। प्राथमिक मानदण्डों को स्थापित करके इन्हें क्षतिग्रस्त होने से बचाया जा सकता है तथा उपचारात्मक मानदंड स्थापित करके इनका पुनरुद्धार किया जा सकता है। ग्रन्थालय सामग्री के पर्यावरण सम्बन्धी कारणों के क्षतिग्रस्तता को बचाने के लिए प्रकाश, आर्द्रता, शीलन, वायु प्रदूषण इत्यादि पर नियंत्रण किया जाये तो यह काफी लम्बे समय तक प्रदूषित होने से बच सकेंगे। इन्हीं कारणों से सभी निर्धारित मानदंडों को दो भागों में बाँटा गया है : पहला प्राथमिक मानदण्ड और दूसरा उपचारात्मक मानदण्ड। दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं तथा ग्रन्थालय सामग्री के परिरक्षक हैं।

इकाई 5 : ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व : जैवीय
HAZARDS TO LIBRARY MATERIALS : BIOLOGICAL

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 सामान्य ग्रन्थ कीट

5.2.1 जैवकीय प्राणी

5.2.2 कीट

5.2.3 जीव

5.3 क्षतिग्रस्तता की पहचान

5.4 नियन्त्रक माप दंड

5.4.1 उत्तम रख-रखाव तथा स्वस्थ वातावरण

5.4.2. प्राथमिक उपचार

5.4.3 रासायनिक पदार्थों का उपयोग

5.4.5 कीटनाशक द्रव्यों तथा जहरीले चूर्णों का प्रयोग

5.4.6 रसायनों द्वारा धुआँ दिखाना

5.5 सफाई एवं धब्बे को दूर करना

5.6 निष्कर्ष

5.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई में ग्रन्थालय सामग्री को जैवीय क्षति और उससे बचने के उपाय के सम्बन्ध में जानकारी प्रस्तुत की गई है। इसे पढने के बाद निम्नलिखित तथ्यों की जानकारी प्राप्त होगी :

- सामान्य ग्रन्थ कीटों की पहचान।
- ग्रन्थों और अन्य सामाग्रियों की क्षतिग्रस्तता के पहचान का निर्धारण।
- जैवीय क्षतिग्रस्तता कीट, पशु अथवा जैवीय प्राणी के द्वारा की गई है इसकी पहचान।
- क्षतिग्रस्त सामग्री का अलग-अलग समूहीकरण।
- ग्रन्थालय सामग्री का प्राथमिक उपचार।
- ग्रन्थालय सामग्री के क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए सुरक्षात्मक मापदंड का निर्धारण।

- उत्तम रख-रखाव तथा स्वस्थ्य वातावरण प्रदान करने में सक्षम।
- सही समय पर सही मापदंड का प्रयोग करने में दक्षता की प्राप्ति।
- जैवीय प्रतिनिधियों को अधिक से अधिक घटाने में दक्ष होना।

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

हमारे दैनिक जीवन में कागज का एक खास स्थान है। ग्रन्थालय सामग्री के रूप में हमारे सामने जो ग्रन्थ कुटी आते हैं उनमें कागज का प्रयोग किया जाता है चाहे अखबार के रूप में या ग्रन्थों के रूप में हो। ग्रन्थों का तो ज्यादातर हिस्सा कागज, लुगदी अथवा कूट के स्ट्रा बोर्ड से बना होता हैं। जिल्दबन्दी के लिए प्रमुख रूप से स्ट्रा बोर्ड, कागज, कपड़ा, चमडा इत्यादि का उपयोग किया जाता है। ग्रन्थ के आवरण के लिए भी इसी तरह की सामग्री का प्रयोग किया जाता है। ये सभी कार्बनिक पदार्थ हैं जो जैवीय प्राणी, कीट या पशु के भोजन होते हैं। इसी वजह से उन्हें अपनी तरफ आक्रमण करने के लिए आकर्षित करते हैं। ग्रन्थालय भंडार इन्हीं कीटों द्वारा नियमित रूप से क्षतिग्रस्त होते रहते है, जिन्हें ग्रन्थालय विज्ञान की भाषा में जैवीय हानिकारक तत्व (हेजार्टस ऑफ लाइब्रेरी मटेरियलस: या बैलोजिकल) कहते हैं। दूसरे शब्दों में ग्रन्थालय भण्डार को जब जैवीय प्रतिनिधियों द्वारा नुकसान पहुँचता है तो इसे जैवीय हानिकारक क्षतिग्रस्तता कहा जाता है।

जैवीय प्राणियों के जन्म और विकास में प्राकृतिक पर्यावरण काफी हद तक मदद करता हैं, जैसे एक खास तरह की जलवायु जो आर्द्रतापूर्ण और गर्म हो तो यह कवक (फंगस), कीट या अन्य प्राणियों के जन्म और विकास के लिए पूर्ण अनुरूपक होते हैं। यदि यह जलवायु मिल जाय तो यह सार्वजनिक विशिष्ट अथवा संस्थागत किसी भी तरह के ग्रन्थालय के भवन में पैदा हो सकते हैं तथा वहाँ के भन्डार को क्षतिग्रस्त कर सकते हैं। कोई भी ऐसा ग्रन्थालय नहीं है जहाँ पर इनके प्रतिनिधियों को जाना मना हो। इसी वजह से यह समस्या प्रत्येक ग्रन्थालय के लिए सामान्य रूप से उत्पन्न होती है और उसका निवारण भी जरूरी हो जाता है। यह तभी संभव हो सकता है जब एक ग्रन्थालयी को ग्रन्थ के विभिन्न पक्षों की स्पष्ट जानकारी हो, क्षतिग्रस्तता को निरूपित करने की क्षमता हो तथा उसे रोकने के मापदंड की भी सही जानकारी हो। इसके लिए गहन अध्ययन बहुत जरूरी है। गहन अध्ययन के तहत जैवीय प्रतिनिधियों के जन्म और विकास के कार्यकर्त्ता को जानना और उसका सही परीक्षण करना, उत्तम रख-रखाव के तहत पर्यावरण के लिए सही मापदंड की जानकारी होना, समय-समय पर ग्रन्थालय सामग्री के प्राथमिक उपचार का ज्ञान होना। परिक्षात्मक मापदंड का वक्त के अनुसार प्रयोग का ज्ञान होना जरूरी है, तभी एक ग्रन्थालयी अपने ग्रन्थालय भंडार पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण स्थापित करने में सक्षम हो सकता है तथा ग्रन्थालय भंडार को भी प्राथमिक सुरक्षा प्रदान कर सकता है।

5.2 सामान्य ग्रन्थ कीट

जैवीय हानिकारक तत्वों के प्रतिनिधि के रूप में कवक, कीट और पशु इत्यादि आते हैं। अगर रख-रखाव की व्यवस्था ठीक नहीं हो अथवा अति साधारण हो तो ये अतिसक्रियता के साथ आक्रमण करते हैं, क्योंकि ग्रन्थालय में अधिकतर सामग्री कागज, कपड़े , चमड़े इत्यादि की बनी होती है तथा इनकी सिलाई के लिए धागा, गत्ते, गोंद, लेई लुगदी इत्यादि से बने होते हैं जिनसे इन जीवों को प्रचुर मात्रा में भोजन मिलता है, जो इनके जीवन चक्र को आगे बढ़ने में पूरी तरह सहायक होते हैं।

5.2.1 जैवकीय प्राणी (कवक)

जैवीय प्रतिनिधि में सबसे सुक्ष्मतम प्राणी के रूप में कवक का नाम आता है जिसे कागज के ऊपर एक विस्तृत समूह के रूप मे देखा जाता है। इसका प्रभाव प्रायः सभी सामग्री पर देखा जा सकता है। जैसे पौधे, फल, सब्जियाँ, आचार, मुरब्बे, कपड़े, लकड़ी का समान, प्लास्टिक, ईमारत यहाँ तक कि

मनुष्य, जानवर, पक्षियों तक का शरीर अछूता रह सकता है। कवक शब्द का उदभव लैटिन भाषा के फंगस शब्द से हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ मशरूम है। इसकी लगभग एक लाख से भी अधिक जातियाँ ज्ञात हैं जिसमें से प्रमुख अल्टरमारिया, पेनिसिलिया, प्राइलिगस, मुकोड़, फ्यूयिरियम इत्यादि हैं। जिस विज्ञान में इसका गहन अध्ययन किया जाता है उसका नाम कवक विज्ञान अथवा माइक्रोलॉजी है।

कवक वास्तव में एक पूर्ण हरीत क्लोरीफिल होते हैं जिसके कारण ये स्वपोषी नहीं हो सकते, बल्कि परपोषी होते हैं। पोषण प्राप्ति के आधार पर इन्हें निम्नलिखित तीन प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है :

(i) मृतजीवी (सेक्रोफाइट)

(ii) परजीवी (पेरासाइट) तथा

(iii) सहजीवी (सिमबायोटिक)

पोषण के आधार पर

मृतजीवी | परजीवी | सहजीवी

ये जैवीय प्राणी वर्तमान वातावरण के बिल्कुल अभ्यस्त होते हैं। ये पूर्ण पोषण के लिए काफी लम्बा समय लेते हैं तथा जीवित भी रहते हैं। ये भूरे अथवा काले रंग के चिन्ह के रूप में कागज, चमड़ा अथवा जिल्दबंदी पर दिखायी देते हैं जो समयानुकूल मौसम पाते ही विकासोन्मुख होते हैं। उच्चस्तरीय आर्द्रता (65% से ऊपर) अथवा उच्चस्तरीय तापमान (27 डिग्री सें0 से 35डिग्री सें0) की स्थिति इसके उत्पादन और विकास में पूर्ण सहायक होते हैं। वैसे यह धूल, गन्दगी प्रदूषित वायु सड़ी - गली पदार्थों तथा उपलब्ध भोजन से भी अपने जीवन चक्र को आगे बढ़ाता है। ग्रन्थालय में अधिकांश ग्रन्थ जिन पर गत्ते, कपड़े, चमड़े, कागज इत्यादि की जिल्दसाजी चढ़ी होती है,कहीं-कहीं ग्रन्थ में कागज के स्थान पर पार्चमेंन्ट, ताड़-पत्र, भोज-पत्र इत्यादि भी पायी जाती है जो मृत और कार्बनिक पदार्थों से बनी होती है जो मृत और कार्बनिक पदार्थों से बनी होती है, ये सभी कवक के भोजन है। इसी कारण इस पर कवक का प्रकोप आसानी से होता है।

कवक के शरीर की रचना अनेक पतले धागे जैसी रचनाओं से बनी होती है। इन्हें तन्तु(हाइफा) कहते हैं। जब यह तन्तु प्रचुर मात्रा में इकट्ठे हो जाते हैं तथा एक दूसरे से मिल जाते हैं तब यह एक जाल जैसे रचना बनाते हैं। तब इसे ही कवक जाल (मांइसेलियम) कहते हैं। यह दो तरह के होते हैं (i) पुनरूत्पादक कवक जाल तथा (ii) वनस्पतिक कवक जाल। इसका जीवाणु हवा में तैरता रहता है तथा उपयुक्त वातावरण मिलने पर अपना स्थान बना लेता है। जब यह परिपक्व हो जाते हैं तो यह फैलता चला जाता है। जिस क्रम मे प्रजनन की प्रक्रिया होती है। प्रजनन से यह बीजाणु बनाती है, जिसे स्पोर कहते हैं। इसे भी जब उपयुक्त वातारण (तापमान, हवा, नमी और भोजन) मिलता है तब यह भी एक नया कवक जाल बनाता है। इस प्रकार यह अपना जीवन चक्र पूरा करता है। इन विजाणुओं की बाहरी त्वचा अधिक प्रतिरोधक होती है। ये 10-80 डिग्री सें0 तापमान अथवा कभी-कभी इससे भी कम तापमान सहन कर सकते हैं परन्तु इनकी सक्रिय वृद्धि 22-35 डिग्री सें0 तक होती है। तापक्रम के अतिरिक्त नमी का भी बहुत महत्व है। 70-80 % नमी विजाणुओं की वृद्धि के लिए बहुत ही उपयुक्त है। कवक के विजाणु जब किसी ग्रन्थ पर आक्रमण करते हैं तो शुरू में ये कई तरह के रंगों के धब्बे डाल देते हैं और उसके अतिरिक्त यह एक खास तरह के एन्जाइम को जना करती है। यह जटिल कार्बनिक पदार्थों को अपघटित कर सरल ग्लूकोज और अम्ल बनाती है जिससे कागज में अम्लीयता बढ़ जाती है जिसकी वजह से कागज गलने लगता है। कवक सिर्फ सतह पर ही नहीं लगता है बल्कि यह अपने जन्तुओं द्वारा कागज और कपड़े के रेशे के अन्दर चला

जाता है जिससे वह कमजोर हो जाता है। कई जगह जाल काठनुमा आकार का बना लेता है कवक, जो कि बहुत सख्त होता है और यह वस्तु के साथ चिपक जाता है तथा उसे निकालना आसान नहीं होता है।

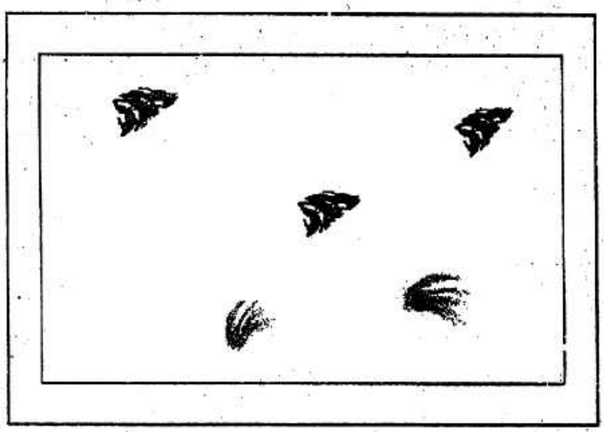

चित्र : फफूंदी कवक

फाक्सिंग : यह कागज के ऊपर भूरे या जंग के रंग का गोल, लेकिन किनारे से फैला हुआ धब्बा दिखायी देता है, जो हर जगह दिखायी देता है। खास तौर पर यह पुराने ग्रन्थों के किनारों पर दिखाई पड़ता है, जो इस बात की पुष्टि करता है कि कवक के बीजाणु वायु में उपस्थित हैं और उपयुक्त भोजन और वातावरण मिलते ही विकसित हो जाते हैं।

अतः कवक के बीजाणु के द्वारा ग्रन्थालय में उपलब्ध कागजीय प्रलेख, चमड़े और धागे के सैल्यूलोज को कमजोर बना देती है और सामग्री क्षतिग्रस्त हो जाती है। इसके भी कई प्रकार हैं जिसमें से कुछ खास का नाम सायटोफेज, सेलमाइब्रियो, सेलफैसिनेला तथा नाइक्रो बैक्टिरिया इत्यादि हैं। इसको निम्नलिखित चित्रों द्वारा पहचाना जा सकता है :

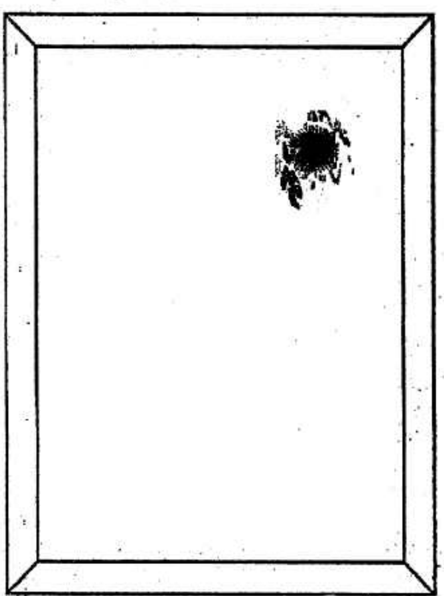

चित्र : फाक्सिंग

चित्र : 1 कवक द्वारा क्षतिग्रस्तता

5.2.2 कीट

ग्रन्थालय सामग्री के विनाश का मुख्य कारण कीट होता है वैसे तो संसार में लगभग इनकी छः लाख से ज्यादा जातियाँ फैली हुई हैं लेकिन ग्रन्थालय सामग्री पर इनकी कुछ गिनी-चुनी जातियाँ ही प्रकोप करती हैं, जैसे : चाँदी मछली, तिलचट्टा, दीमक, किताबी जूं, क्लोथ मॉथ, बिटलस, उरमेस्टिड, बुक बोउर, किताबी कीड़ा इत्यादि। ये ऐसे सन्धिवाद जीव हैं, जिनका शरीर तीन भागों में बँटा रहता है - सिर, बदन और उदर।

सिर :- इस भाग में दो पार्श्व सूत्र (Antina) चिमटे की आकृति में होते हैं। वास्तव में ये इन कीटों के हाथ का काम करते हैं।

वक्ष :- यह तीन खण्डों के एकीकरण से बनता है, जैसे तीन जोड़े टाँग तथा दो जोड़े पंख भी इस पर लगे होते हैं।

उदर :- यह भाग दस या ग्यारह खण्डों का होता है। उन्हें इनके पंख ढके रहते हैं। इसी भाग में इनका जनन छिद्र और गुदा द्वारा पीछे होते हैं।

इनका सम्पूर्ण शरीर कड़े खोल द्वारा ढका रहता है, जिससे इसके कोमल अंग ढके एवं सुरक्षित रहते हैं।

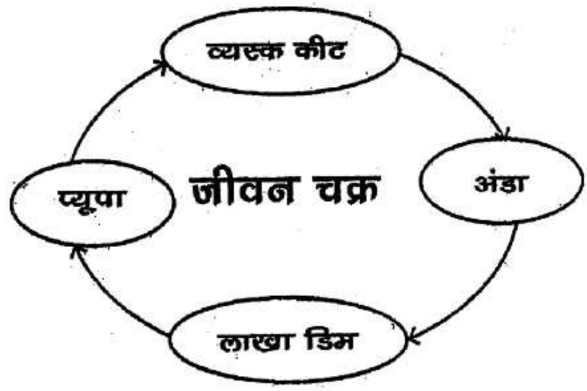

चित्र 2 : कीट का जीवन चक्र

1. चाँदी मछली (Silver fish) अथवा लेपिस्मा स्क्रेचरिना

यह पंखविहीन, चाँदी के रंग वाली अथवा ग्रे रंग की आकृति वाली कीट है। यह एक आश्चर्य जनक कीड़ा है, जो दिन में छिपा रहता है। ये रात में बाइडिंग कागज और स्टार्च को अपना शिकार बनाती है। ये ग्रन्थों के रंगीन आवरण, उसकी चमक-दमक को नष्ट कर देता है। यह मुख्यतः ग्लू, स्टार्च,

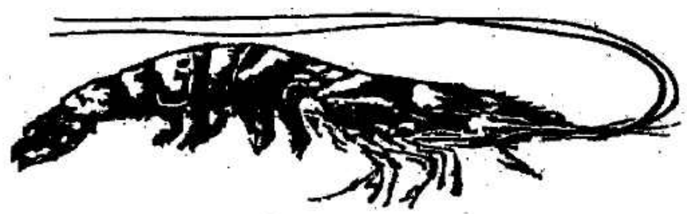

चित्र 3 : चाँदी मछली

लेई, धागा तथा वानस्पतिक जन्तुओं को खाती है। यह भीगी हुई दीवार अंधेरे अथवा नमी युक्त कोना इत्यादि जगहों में जन्म लेती है तथा विकसित भी होती है। इसकी मादा एक दिन में दस से पचास अण्डे तक देती है। यह दस से पन्द्रह दिनों में छोटे-छोटे बच्चे बन जाते हैं तथा कुछ समय बाद वयस्क कीटों में परिवर्तित हो जाते हैं। इसकी वृद्धि के लिए 18 डिग्री सें0-25 डिग्री सें0 तापमान तथा 55 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता की आवश्यकता होती है। यह कीट ग्रन्थालय सामग्री के लिए अत्यन्त हानिकारक है।

बचाव के उपाय :

(क) ग्रन्थालय की अच्छी तरह सफाई करना।

(ख) निधानी पर फिनाइल एवं कपूर की गोली रखना।

(ग) सोडियम फ्लोराइड और आटा 12 : 100 के मिश्रण का उपयोग करना।

2. तिलचट्टा (Cockroach) अथवा ब्लाटा ओरियेन्टेड

चित्र 4 : तिलचट्आ

यह भूरे या कालापन लिये हुए भूरे रंगों वाला चिमटे की आकृति का गंध युक्त कीट है। इसके सिर पर दो लम्बे स्पर्श सूत्र होते हैं, जो इनकी सुरक्षा के साथ वस्तुगत अनुभव में मदद करते हैं। ये ग्रन्थों पर रात में आक्रमण करते हैं तथा दिन में नमी पूर्ण या अंधेरे कोने में छिपा रहता है तथा दीवार की दरारों, आलमारी के पीछे, फर्श के दरारों तथा लकड़ी के बने निधानी तथा कार्डबोर्ड के अन्दर पाये जाते हैं। यह एक अत्यन्त घरेलू कीट है जो रसोई के दरारों तथा कुण्डों में जन्म लेते हैं एवं बढ़ते हैं। यह ग्रन्थों के कागज को खाते हैं तथा वहीं मल-मूत्र त्याग करते हैं, जिसके कारण कागज पर गन्दा व पीलापन भी आ जाता है। ये कूट के बोर्ड को, धागा, चमड़ा तथा ग्लू को भी खाते हैं। ये खासतौर पर सर्वाधिक हानि, जिल्द पर लगे कपड़ों को पहुँचाते हैं। इसकी मादा एक दिन में 6-10 अण्डे दिया करती है,

जिन्हें निम्फ कहते हैं जो अप्रैल-मई से अक्टूबर माह तक के बीच की अवधि का होता है। यह कैप्सूल, निम्फ से होते हुए वयस्क होते हैं। नमी युक्त हवा गर्म और अंधेरापूर्ण वातावरण इसके जन्म और विकास के लिए अति सहायक परिस्थितियाँ हैं।

बचाव के साधन :

(क) डी0डी0टी0 पाउडर का छिड़काव करना।

(ख) सुहागा के पाउडर का उपयोग करना।

(ग) सोडियम क्लोराइड तथा आटा के मिश्रण का समानुपात में प्रयोग करना।

3. ग्रन्थ जूँ (बुक लाइस अथवा पेसोसाइड)

यह सामान्य जूँ की आकृति धारण करने वाले कीट हैं, जिसका रंग ग्रे युक्त भूरा होता है। इसके सिर पर भी 1 mm से 2.5 mm के दो स्पर्श सूत्र होते हैं जो चिमटा की तरह दिखायी देता है, साथ ही मुख

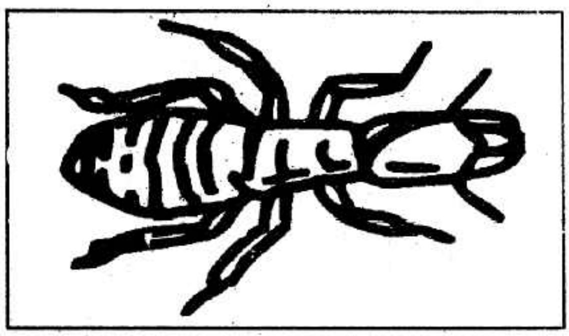

चित्र 5 : ग्रन्थ जूँ

भाग में दो बड़े धागे के समान स्पर्श सूत्र होते हैं। यह कवक और कागज की सतह को खाते हैं। इसके क्रमिक विकास के लिए नमीपूर्ण या भींगा वातावरण काफी सहायक परिस्थितियाँ हैं।

बचाव के उपाय :

(क) ग्रन्थालय की अच्छी तरह सफाई करना।

(ख) नीम की पत्तियों का प्रयोग करना।

4. दीमक (Termite)

दीमक सर्वव्यापी कीट है जो चींटी के समान होता है। यह पीलापन लिए हुए सफेद रंग का कीट होता है इसीलिए इसे सफेद चींटी (White ant) भी कहते हैं। वास्तव में यह बड़े चींटी के समान ही दिखायी पड़ता है जो प्रायः नमी वाले क्षेत्रों, कटिबंधीय रेखा के आस-पास के क्षेत्रों में ज्यादा पाये जाते हैं। इसे इसके वास स्थान के आधार पर दो समूहों में विभाजित किया जाता है। यथा :

(1) **Subterranean termite (भूमिगत दीमक)** - यह मिट्टी के आधार पर जिन्दा रहती है।

(2) **Non-Subterranean termite (भूमि के ऊपर पाये जाने वाले दीमक)** भूमि के ऊपर पाये जाने वाली दीमक उष्णीय कटिबंध क्षेत्र में अधिक पाई जाती हैं।

चित्र 6 : मजदूर दीमक

बचाव के उपाय :

- दीमक से बचने के लिए भवन निर्माण के समय ही नींव में दीमक उन्मूलन हेतु व्यापक प्रबन्ध करना चाहिए।
- अगर दीमक का आक्रमण हो गया हो तो सतह खोदकर रानी दीमक समेत उन्हें नष्ट कर देना चाहिए।
- इसके उद्गम स्थान पर जहरीले रसायनों जैसे - कॉल्टर क्राइबोस्ट तेल आदि डालकर बन्द कर देना चाहिए।
- भवन के अन्दर जहाँ कहीं भी दरार हो उसे सीमेन्ट छड़ से बन्द कर देना चाहिए। लकड़ी की आलमारी को दीवार से कम से कम 6 इंच अलग हटा कर रखना चाहिए।
- स्टील के फर्नीचर उपयोग में लाना चाहिए।
- अगर लकड़ी का प्रयोग करना हो तो दीमक विरोधी किस्त जैसे- शीशम, सखुआ, नीम का प्रयोग करना चाहिए।
- दीमक नष्ट करने वाले कुछ दवाओं के नाम निम्नलिखित हैं -

  (1) 24 प्रतिशत जिंक क्लोराइड को मिलाकर आलमारियों में लगा देना चाहिए।

  (2) तारमेक्स जो कि टाटा कम्पनी द्वारा तैयार किया गया है काफी उपयोगी साबित हुआ है।

  (3) सफेद सर सैनिक में पानी मिलाकर तैयार किया गया घोल का छिड़काव किया जाना चाहिए।

चित्र 7 : दीमक द्वारा क्षतिग्रस्त सामग्री

ग्रन्थ कीट (Book worm) अथवा बुक बिटिल अथवा सिलियोप्ट्रा

यह कीड़े शीलन और धूलकण जमने से ग्रन्थों में उत्पन्न हो जाते हैं। ये ग्रन्थ के अन्दर रहकर कागज में छोटे-छोटे छेद कर देते हैं। ग्रन्थालय में इस कीट का प्रकोप भी भयानक ढंग से होता है। यह भी दीमक के तरह की खतरनाक और आक्रामक है। इसे गैट्रोलियस इन्डीकस रीटर के नाम से भी जाना जाता है। यह छोटे टब की आकृति वाला भूरे रंग का होता है। इसकी लम्बाई 2-3 mm तथा चौड़ाई लगभग 1 mm की होती है। ये अपने अण्डे जिल्दसाजी बोर्डो के बीच में देती है जो गर्मी के दिनों में 5 से 10 दिनों में लाखा में बदल जाता है। यह लाखा उजले रंग का होता है जो टब के समान आकृति का अथवा कभी गोलाकार अथवा कभी अर्द्ध गोलाकर आकृति का होता है। सामने से मात्र सिर का भाग ही दिखायी देता है। यह 15 दिनों के बाद प्यूला में बदल जाता है। कुछ दिनों के बाद ये पूर्ण कीट में बदल जाता है। खासतौर पर लाखा ग्रन्थ को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचाता है। इसी वजह से ग्रन्थ कीट के इस स्तर को सबसे क्षतिग्रस्तता पहुँचाने वाला स्तर माना गया है। वयस्क ग्रन्थ कीट के पंख बहुत विकसित होते हैं जो उड़कर अन्य सामग्री तक पहुँच जाते हैं। ये एक ऐसा कीट है जो दूसरे कीट को भी नुकसान पहुँचाता है उसकी खोपड़ी और बालों को खा जाता है।

बचाव के उपाय

- विष और फ्यूमीगेशन इसके विनाश के लिए प्रभावकारी होते हैं। फ्यूमीगेशन चैम्बर - यह एक तरह का आलमीरा बॉक्स होता है जिसमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। ये छेद एक खाने से दूसरे खाने तक गैस को ले जाते हैं। इस चैम्बर के चारों तरफ प्रत्येक खाने में छिद्र क्रम के अनुसार ग्रन्थ को रख दिया जाता है। इसमें पैरा-डिकलोरोबेंजीन थइमल तथा कार्बन डाइ ऑक्साइड आदि गैसों के फ्यूमीगेशन किए जाते हैं जिससे सभी कीड़े नष्ट हो जाते हैं।
- प्रतिदिन सफाई से भी इसे दूर किया जाता है।

चित्र 8 : ग्रन्थ कीट

5.2.3 जीव (रोडेन्टस)

चूहे भी ग्रन्थालय के ग्रन्थों और लकड़ी के सामानों के एक खतरनाक शत्रु हैं। इसका शरीर मुलायम, रोयेंदार, भूरे या सफेद रंग का होता है। यह एक घरेलू जीव है जिसका प्रकोप खिड़की, रोशनदान, दरवाजा, इत्यादि के द्वारा ग्रन्थालय के भंडार कक्ष में होता है। यह कागज, लकड़ी चमड़े, तथा अन्य सामग्री को काटकर बेकार बना देते हैं।

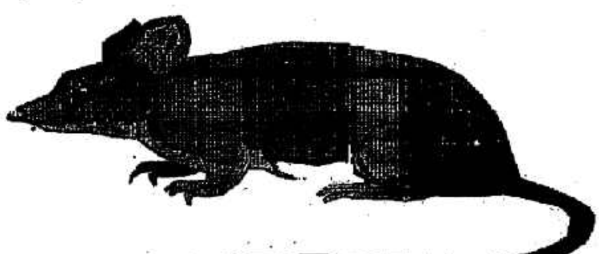

चित्र 9 : चूंहा

बचाव के उपाय

- चूहे को जहर देकर समाप्त किया जा सकता है।
- तूतिया को आटा में मिलाकर छोटी-छोटी गोलियाँ बनाकर रात में चूहे के बिल के पास गिनकर छोड़ देनी चाहिए। दूसरे दिन गोली गिन लेनी चाहिए। अगर गोली कम हो तो समझ लेना चाहिए कि गोली चूहा ने खा ली है अतः मरे हुए चूहे को ढूँढ़कर निकाल लेना चाहिए।
- चूहे मारने की दवा भी प्रयोग किया जा सकता है।
- चूहेदानी द्वारा भी चूहे को फँसाकर मार देना चाहिए
- चूहे को भगाने के लिए कपूर की गोली का प्रयोग किया जा सकता है।
- मिट्टी के तेल और त्रियोसोट ऑयल 1 : 10 के अनुसार मिलाकर फर्श पर छिड़कने से चूहे भाग जाते हैं।

4.0 क्षतिग्रस्तता की पहचान

ग्रन्थालय सामग्री को किस माध्यम से क्षति पहुँच रही है, इसकी जानकारी बहुत जरूरी है जैसेः कवक, कीट या जीव, इसकी पहचान के बाद ही समुचित उपचार सम्भव है। प्रत्येक के क्षतिग्रस्तता के चिन्ह और पहचान अलग-अलग होते हैं। यदि यह साबित हो जाता है कि क्षति जैवीय प्राणियों द्वारा ही पहुँचाये जा रहे हैं तो उसके सन्दर्भ में नियंत्रित मापदंड स्थापित करना भी सरल हो जाता है। अब इसका अलग-अलग विस्तृत विवेचन जरूरी है जो निम्नलिखित है -

कवक के द्वारा की गयी क्षतिग्रस्तता की पहचान :

कवक सूक्ष्मतम जैवीय प्राणी है, जिसके द्वारा की गयी क्षति की पहचान निम्नलिखित है

- ग्रन्थों पर काले तथा भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखायी देता है जो कागज, चमड़ा और धागा को खा जाता है।
- सामग्री से दुर्गन्ध आने लगती है।
- कागज के रंग बदल जाते हैं।
- कागज के ऊपर जाला लग जाता है जिससे लिखावट भी धुँधली पड़ जाती है।
- ग्रन्थ पर एक तरह का इन्जाइम को जमा करते हैं जिससे कागज में अम्लीयता बढ़ जाती है, जिससे कागज गलने लगते हैं।

कीटों द्वारा क्षतिग्रस्तता की पहचान

ग्रन्थालय सामग्री को कीटों की विभिन्न श्रेणियों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से हानि पहुँचती है, जिसकी पहचान निम्नांकित रूप से की जा सकती है :

- कीटों द्वारा क्षतिग्रस्त किये गये कागज से दुर्गन्ध आने लगती है।
- कागज के रंग में बदलाव आ जाता है।
- कागज के बीच-बीच में क्रमिक रूप से छेद हो जाते हैं।
- कागज मुड़ने लगते हैं।
- क्षतिग्रस्त सामग्री दूसरे सामग्री पर भी अपना प्रभाव डालने लगती है, जिससे पुस्तकालय का सम्पूर्ण वातावरण प्रभावित होता है।

दीमक द्वारा क्षतिग्रस्तता की पहचान :

दीमक सबसे खतरनाक और आक्रामक शत्रु है जिसके द्वारा क्षतिग्रस्त किये गये सामग्री की पहचान निम्नलिखित तरीके से की जाती है :

- मिट्टी के रंग का चिन्ह बन जाता है।
- चिन्हित जगहों पर छेद हो जाता है।
- आकस्मिक रूप से चिन्हित अंश हट जाते हैं।
- सामग्री के ऊपर धूलों की बौछार सी दिखायी पड़ती है।
- कागज के रंग में बदलाव आ जाता है।
- क्षतिग्रस्त सामग्री के अन्दर से दुर्गन्ध आने लगती है जिसकी वजह से ग्रन्थालय का पूरा वातावरण दूषित हो जाता है।

जीवों द्वारा क्षतिग्रस्तता की पहचान :

ग्रन्थालय सामग्री को जैवीय प्राणियों द्वारा क्षति पहुँचाने वाले शत्रुओं में जीव या चूहे का मुख्य स्थान आता है, जिसकी पहचान निम्नलिखित तरीके से की जाती है :

- सामग्री का कतरन के ढेर के रूप में बदल जाना।
- सामग्री के ऊपर चूहे का मल-मूत्र दिखाई देना।
- क्षतिग्रस्त सामग्री में से दुर्गन्ध आना।
- एक तरह का शब्द जिसे काटने का शब्द कहते हैं, का सुनाई देते रहने से।
- सामग्री का कूड़े के ढेर के रूप में बदल जाना।

5.4 नियन्त्रक मापदंड

"सुरक्षा उपचार से बेहतर है"। यह कहावत बिल्कुल सही है। ग्रन्थालय में ऐसा वातावरण ही रखा जाय जिसमें जैवीय प्राणी या तो पैदा ही नहीं हो सके या पैदा होने की वजह से आसानी से पता लग जायें। अस्वस्थ तथा अव्यवस्थित व्यवस्था जैवीय प्राणियों को उत्पन्न होने तथा उसे विकसित होने के लिए आमंत्रित करती है, जिससे ग्रन्थालय सामग्री को जैवीय क्षति पहुँचती है। स्वच्छ अथवा व्यवस्थित वातावरण में ये कीट न तो जन्म ले सकते हैं और न तो इनकी वृद्धि होगी क्योंकि ये इसके अभ्यस्थ नहीं होते हैं। इसी कारण सामान्य भाषा में यह कहा जाता है कि ग्रन्थालय भंडार का प्रतिदिन अवलोकन या देख-रेख करना चाहिए। इस कार्य के लिए बहुत तरह के मापदंड स्थापित किये जाते हैं, जिनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं -

5.4.1 उत्तम रख-रखाव तथा स्वस्थ वातावरण

उत्तम गृह व्यवस्था तथा स्वच्छ व्यवस्था प्रदान करना बहुत जरूरी है। ग्रन्थालय सामग्री के संग्रहण के तहत उत्तम गृह व्यवस्था का अर्थ उत्तम रख-रखाव है, जिसके तहत सीलन का न होना, स्वच्छ एवं अपेच्छित मात्रा में वायु का आगमन होना, उच्च तापमान से बचाव करना तथा उच्च सापेक्षिक नमी से बचाव पूर्ण वातावरण बनाये रखना है वैसे तो अलग-अलग स्वभाव के अलग-अलग ग्रन्थालय सामग्री के लिए अलग-अलग वातावरण निर्धारित हैं फिर भी एक सामान्य वातावरण के लिए तापमान का मापदंड 20 डिग्री सें0-25 डिग्री सें0 है तथा सापेक्षित नमी का मापदंड 45-55 प्रतिशत है।

ग्रन्थालय के सामान्य सामग्री के लिए एक आदर्श वातावरण हेतु ताप और नमी का यही मापदंड रखा गया है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब 24 घंटे ग्रन्थालय हेतु वातानुकूलन की व्यवस्था सम्भव हो, लेकिन भारत जैसे देश के लिए आर्थिक कारणों से यह सम्भव नहीं है।

फिर भी यदि वातानुकूलित व्यवस्था सम्भव हो तो उसे नियोजित करने से पूर्व निम्नांकित तथ्यों पर ध्यान देना अति आवश्यक है :

- वातानुकूलित यन्त्रों के रख-रखाव की समुचित व्यवस्था होना।
- उपरोक्त यंत्र को क्रय करते समय उच्चश्रेणी पर ध्यान देना।
- यह लम्बे समय तक चल सके इसकी व्यवस्था सुनियोजित करना।
- यन्त्र को चलाने हेतु लागत व्यय उपलब्ध होना।
- यन्त्र को चलाने वाले कर्मचारी का प्रशिक्षित होना, क्योंकि अव्यवस्थित या बीच-बीच में रुक-रुक कर चलने वाले वातानुकूलन की व्यवस्था अधिक नुकसान देह होती हैं।

जैवीय प्राणियों से क्षतिग्रस्तता की सुरक्षा के दृष्टिकोण से ग्रन्थालय सामग्री हेतु शीतल तथा स्वस्थ मौसम, साफ और स्वच्छ वायु का सीमित मात्रा में ग्रन्थालय भंडार कक्ष में आवागमन और प्रकाश का सीमित मात्रा में प्रवेश आवश्यक है। इसी कारण ग्रन्थालय भंडार कक्ष हवादार तथा रोशनी युक्त होना अति आवश्यक है। वायु को प्रदूषित होने से बचाव के लिए तथा आवागमन की सही व्यवस्था के लिए प्रचुर मात्रा में हवा मापक यन्त्र एवं निष्काशन पंखे की भी पूर्ण व्यवस्था होना चाहिए। पंक्तियों तथा निधानियों का व्यवस्थापन भी इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि वह वायु तथा रोशनी के आवागमन में बाधक न हो। शीलन को बचाने के लिए दीवारों पर तैलीय पौत तथा ऐरीकि का पोत देना चाहिए। शीलन वाली जमीन की सतह पर जूट की चटाई का उपयोग करना चाहिए। इन चटाइयों को भी समय-समय पर धूप दिखाना चाहिए। जिससे इसके अन्दर छिपी हुई नमी खत्म हो जाये।

जमीन के दरार और दरवाजे के छिद्रों को अच्छी तरह से सीमेन्ट से बन्द कर देना चाहिए, जिससे कीट अथवा पशु का प्रवेश नहीं हो सके। खिड़कियों के दरवाजे और बरसाती में भी वांछित आकृति के लोहे के ग्रिल का उपयोग करना चाहिए। प्रवेश द्वार भी स्प्रिंगदार लगवाना चाहिए, जिससे पशु का प्रवेश न हो सके।

ग्रन्थालय में उपयोग किये जाने वाले सभी उपस्कर और अन्य उपकरण "ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैण्डर्ड" द्वारा मान्य होना चाहिए।

धूल जमने से भी ग्रन्थालय का वातावरण प्रदूषित हो जाता है तथा जैवीय प्राणी के जन्म और विकास में सहायक होता है। अतः ग्रन्थालय में नियमित रूप से धूल झाड़ने का काम होना चाहिए। आधुनिक युग में इस काम के लिए विद्युत वाष्पीय धूल झाड़न यन्त्र का आविष्कार हो चुका है, जिसका उपयोग आसानी से किया जा सकता है। इसके द्वारा आसानी से निधानी आलमारी तथा दिवालों पर पड़े धूल को हटाया जा सकता है।

अन्त में इस बात पर भी ध्यान रखना चाहिए कि ग्रन्थ को कभी भी कसकर या ठूँसकर नहीं रखा जाय। सामान्यतया इन्हीं मापदण्डों के सहारे ग्रन्थालय वातावरण को बेहतर बनाया जा सकता है।

5.4.2 प्राथमिक उपचार

प्राथमिक उपचार का अर्थ होता है कि शुरू से ही ऐसी व्यवस्था करना, जिससे क्षतिग्रस्तता आये ही नहीं और अगर आ भी जाये तो छोटा-मोटा बचाव का कार्य खुद ग्रन्थालयी कर लें। यह ठीक उसी तरह से है जिस तरह से छोटी-मोटी दुर्घटना के समय अथवा मामूली बीमारी के समय घर के लोग

करते हैं।

ग्रन्थालय सामग्रियों का प्राथमिक उपचार निम्नलिखित तरीके से किया जा सकता है :

- ग्रन्थालय और ग्रन्थों की सफाई पर पूरा ध्यान देना चाहिए, क्योंकि धूल ही सभी तरह के क्षतिग्रस्तता का आधार है।
- समय-समय पर सम्पूर्ण ग्रन्थालय भण्डार का निरीक्षण करना चाहिए।
- हवा की नमी (आर.एच.) एवं तापक्रम पर नियन्त्रण रखना चाहिए।
- बन्द आलमारियों जिनका प्रयोग अधिक न किया जाता हो उसे समय-समय पर खोलना चाहिए और उसके अन्दर पैराडाई क्लोरोबेन्जीन या नैपथलीन या ओडोनिल रख कर उसे बन्द कर देना चाहिए।
- जिन ग्रन्थों के ऊपर ग्रन्थ कीट या कवक का प्रकोप हो गया हो उसे अलग रखकर सफाई करनी चाहिए तथा सफाई से पहले उन पर सफेद स्प्रिट का फव्वारा डालना चाहिए, जिससे ग्रन्थ रोगमुक्त हो जाए।
- थाइमोल, पैराडाइक्लोरो बेंजीन अथवा फारमल्डीहाइड द्वारा या नीम की पत्ती जलाकर फ्यूमीगेशन किया जा सकता है।
- ग्रन्थों की मरम्मत के लिए प्रयोग किया गया कागज, कपड़ा, लेई इत्यादि में कीटनाशक अथवा कवक नाशक दवाओं या रसायनों का प्रयोग करना चाहिए।
- ऐसे कागज का प्रयोग करना चाहिए जो कवक और कीट प्रतिरोधक हो।
- अगर लकड़ी की आलमारी में दरारें इत्यादि हो तो उसे मोम से भर दिया जाना चाहिए, जिससे कीड़े घुसने न पायें।
- आलमारियों में बोरिक एसिड व बोरेक्स की मात्रा 1:1 में मिश्रित कर छिड़काव करना चाहिए या इनके स्थान पर बोरिक एसिड के साथ पाइरीथ्रम पाउडर के मिश्रण का छिड़काव करना चाहिए जिससे कीट या कवक सामग्री को क्षतिग्रस्त न कर पायें।
- कीट प्रतिरोधक लकड़ी जैसे- टीक, नीम, देवदार इत्यादि से बने उपस्कर का ही उपयोग करना चाहिए।

5.4.3 रासायनिक पदार्थों का उपयोग

कीट या कवक को ग्रन्थालय से खत्म करने के लिए बहुत तरह के रासायनिक पदार्थों का उपयोग समय-समय पर करना चाहिए जैसे नेप्थोलिन की गोली, कपूर की गोली, पैराडाइक्लोरो बेंजीन, आण्विक और अल्ट्रासोनिक उपकरण इत्यादि। नेप्थलिन तथा कपूर एक सुरक्षित तथा घरेलू दवा है, जो कभी भी नुकसानदेह नहीं होती। पैराडाईक्लोरो बेंजीन में एक प्रकार की गन्ध होती है। व्यावसायिक दृष्टि से पैराडाईक्लोरो बेंजीन तथा फेमनेंस को मिलाकर एक रसायन तैयार किया जाता है जो ग्रन्थालय के वातावरण के लिए बहुत उपयोगी है क्योंकि यह मानव स्वास्थ के दृष्टिकोण से भी हानिकारक नहीं है। मानव स्वास्थ के लिए यह ध्यान देना जरूरी है।

इसे निम्नलिखित क्रम से भी देखा जा सकता है :

- 1.2: पैराडाईक्लोरो बैंजीन का प्रयोग करना चाहिए।
- 0.1: अर्थोफिनाइल सफेद स्प्रिट में घोल कर प्रयोग करना चाहिए।

- 2.4: पैरा फौरमेल्डीहाइड का प्रयोग पानी में किया जा सकता है जहाँ ग्रन्थ की स्याही और रंग इत्यादि घुलनशील न हो, इसके अतिरिक्त लकड़ी की आलमारी में भी प्रयोग किया जा सकता है।
- 2: पेन्टाक्लोरो फिनोल का प्रयोग लकड़ी पर एवं 1: का प्रयोग कागज पर किया जा सकता है जहाँ यह अति आवश्यक है।
- पैराडाईक्लोरो बैंजीन, क्रियोजोट ऑयल तथा बैंजीन का घोल 1:1:1 में बनाकर चीनी मिट्टी के प्यालें में फलकों के किनारे अथवा ग्रन्थालय के कोने-कोने में रखा जा सकता है।
- टिशू पेपर में भी नेप्थोलिन का पैकेट बनाकर ग्रन्थों के बीच रखा जा सकता है, जिससे कीट खुद भाग जाते हैं।
- सबसे सरल और सुलभ रसायन नीम की पत्तियाँ हैं जिसे सभी ग्रन्थालय टिशू पेपर में सुखाकर कीटों को भगाने के लिए फलकों पर अथवा ग्रन्थों के बीच में रखते हैं। यह बहुत प्रभावशाली होते हैं फिर भी यह एक लम्बी अवधि तक ग्रन्थालय भण्डार को सुरक्षा नहीं दे सकते हैं।
- 4 क्लोरो -3 क्रीसोल - 1.5: सफेद स्प्रिट में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए ।
- आर्थोफिनाइल फिनाइल 0.05-2: सफेद स्प्रिट में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।
- पेन्टाक्लोरो फिनाइल लोरेट - 1.3: सफेद स्प्रिट में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।
- बेगान, पाइरेथ्रम, मिलाथियान इत्यादि रसायनों का प्रयोग कीटों को भगाने के लिए किया जाता है।

5.4.4 कीटनाशक द्रव्यों तथा जहरीले चूर्णों का प्रयोग

सामान्यताया किसी भी ग्रन्थालय में सामान्य स्थिति में कभी भी जहरीले चूर्ण जेसे डी0डी0टी0 पाउडर, गेमेक्सिन इत्यादि के प्रयोग का निर्देश नहीं दिया जाता है। इसी तरह द्रव्यों में भी स्प्रे, पीप, बेगैन लिनडे इत्यादि के प्रयोग की भी सलाह नहीं दी जाती है। फिर भी यदि चाँदी मछली अथवा तिलचट्टा जैसे ग्रन्थालय सामग्रियों के दुश्मन दिख जायें तभी इसके प्रयोग की सलाह दी जाती है। इसके प्रयोग से पहले निम्नलिखित सावधानी बरत्तना आवश्यक है।

- जहरीले रसायनों अथवा कीटनाशक दवाओं पर उनका ठीक से नाम लिखना चाहिए।
- जहाँ ये दवायें रखी हों, वहाँ खाने-पीने की वस्तुओं को नहीं रखना चाहिए।
- ग्रन्थालयकर्मी को कार्य करते समय आँख में हाथ, मुँह में उँगली इत्यादि नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि इससे उनका अपना स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है।
- ग्रन्थालयकर्मी जब इन दवाओं का प्रयोग कर रहा हो तो हाथों में दस्ताने, आँखों में चश्मा, शरीर पर एप्रोन का कोट और नाक के ऊपर भी साफी का प्रयोग करना चाहिए।
- ग्रन्थालयकर्मी को कार्य पूर्ण करने पर डिटाल, लाइफबॉय इत्यादि से अपने हाथ-मुँह को धोना नहीं भूलना चाहिए।
- समय-समय पर निरीक्षण करते रहना चाहिए कि कहीं कुछ गिरा तो नहीं।
- प्राथमिक चिकित्सा के लिए कुछ आवश्यक सामान अवश्य रखना चाहिए।

यदि स्प्रे करना हो तो इसे सीधे-सीधे ग्रन्थों पर नहीं करके कीटों के छिपने के स्थान पर करना चाहिए। अगर चूहे दिख जाएं तो चूहेदानी का प्रयोग करना चाहिए। खास परिस्थिति में ही दवा का

प्रयोग करना चाहिए।

दीमक के आक्रमण को रोकने के लिए तत्काल इसके विषय विशेषज्ञ को बुलाना चाहिए। यह कोई आवश्यक नहीं है कि इन छोटे-छोटे उपचार हेतु सभी ग्रन्थों के विशाल भण्डार का ही उपयोग किया जाये इसकी रोकथाम प्रवेश स्थल को बन्द करके भी किया जा सकता है। यदि जमीन, दीवार अथवा दरवाजें से दीमक का प्रवेश हो रहा हो तो इसे अवलोकित कर तत्काल रोक देना चाहिए। दीमक के प्रवेश के लिए भवन निर्माण करने वाले मुख्य अभियन्ता तथा मुख्य ग्रन्थालयी दोनों समान रूप से उत्तरदायी है। अतःरोकथाम के लिए ही सम्मिलित प्रयास सार्थक होगा।

5.4.5 रसायनों द्वारा धुआँ दिखाना

साधारण बोलचाल की भाषा में इसे धूमन (Fumigation) कहते हैं। धूमन की प्रक्रिया को तीन तरह से सम्पादित किया जा सकता है। वायु प्रदूषण, कवक अथवा कीटों के नाश के लिए यह बहुत उपयोगी है। हमारे देश के ग्रन्थालय में नीम के पत्तों को सुखाकर और उसे जलाकर धूमन की प्रक्रिया को पूरा किया जाता है। रासायनिक पदार्थों यथा पेराडाइक्लोरो बेंजीन, कार्बन डाईसल्फाइट, कार्बन टेट्राक्लोराइड, मिथाईल ब्रोमाइड इत्यादि के वाष्पीकरण से भी धूमन किया जाता है, जिससे जैवीय शत्रु का नाश होता है। आधुनिक ग्रन्थालय में एक धूमन प्रकोष्ठ होता है, जहाँ यह क्रिया संपादित की जाती है। कीटों तथा कवक की रोकथाम के लिए यह कारगर विधि है।

धूमन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा सभी सक्रिय जैवीय प्रतिनिधियों का तत्काल विनाश किया जाता है जिस ग्रन्थ पर कवक अथवा कीट का आक्रमण हो गया हो, उसका धूमन अति आवश्यक है। इस कार्य को संपादित करने के लिए निम्नलिखित प्रक्रियाएँ अपनानी पड़ती हैं -

- प्रथम चरण में क्षतिग्रस्त ग्रन्थों को छाँटकर हवा से दूर कर दिया जाता है, जिससे यह अन्य ग्रन्थों को प्रदूषित न कर सके।
- दूसरे चरण में ऐसे रासायनिक द्रव्यों को धूमन हेतु निर्देशित किया गया है जो न तो ग्रन्थ के लिखित पक्ष को क्षति पहुँचाते हैं और न कागज के रंग को बदलते हैं। इनका नाम निम्नलिखित है -

  (क) थाइमोल : 100-150 ग्राम प्रति कि0मी0 स्थान हेतु

  (ख) कार्बोटेट्रा क्लोराइड तथा इथेलिन डाइक्लोराइड का मिश्रण (:3) 225 एम एल प्रति कि0मी0 स्थान हेतु

  (ग) पैराडाइक्लोरो बेन्जीन : 400-500 ग्राम प्रति किलो भीतर स्थान हेतु ।

उपर्युक्त वर्णन में यह स्पष्ट हो चुका है कि आजकल फ्यूमीगेशन चेम्बर का उपयोग किया जाता है। यह एक तरह की आलमारी या बाक्स होता है, जो काष्ठ अथवा स्टील से बनाया जाता है। इसमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं ये छेद अथवा छिद्र ही धुआँ को एक खाने-से-दूसरे खाने में ले जाते हैं। इसमें चार से छः खाने होते हैं जिसके दोनों ओर ग्रन्थ को छिद्र क्रम से रख दिया जाता हैं। अब इसके भीतर धूमन या फ्यूमीगेशन की क्रिया की जाती है। दरवाजे को कसकर बन्द कर दिया जाता है। निर्वात पम्प के द्वारा अन्दर के हवा को बाहर खींच लिया जाता है, जिससे चेम्बर वायु रहित हो जाता है। आवश्यक निर्वातम की स्थिति आ जाने पर निकास द्वार को बन्द कर दिया जाता है। अब गैस को सुनिश्चित मात्रा में चेम्बर में भेज दिया जाता है। पुनः इसके प्रवेश द्वार को भी बन्द कर दिया जाता है। 24 घंटे के बाद निष्कासन पम्प के द्वारा गैस को बाहर निकालकर स्वच्छ सामग्री को बाहर निकाला जाता है। सबसे छोटा फ्यूमीगेशन चेम्बर का आविष्कार नेशनल आरकाइब्स के द्वारा किया गया। यह चौकोर आकृति का है तथा इसमें 35 हजार से 40 हजार तक सामग्री रखी जाती है तथा इसको बाहर लाकर पानी तथा अन्य विधि से साफ भी किया जा सकता है। स्वच्छ किये गये सामग्री

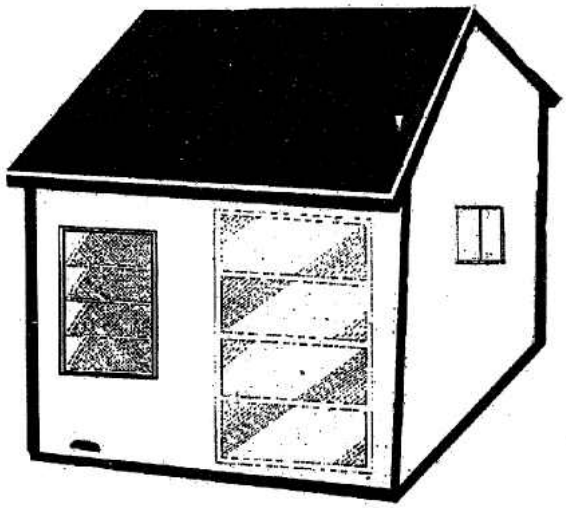

धूमन कक्ष

को 24 घंटे बाहर रखने के बाद ही फलक पर रखना चाहिए। धुआँ देने का कार्य प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा ही करवाना चाहिए।

कीटनाशक दवाओं या धूमन (धुआँ) के लिए कभी भी प्रचार माध्यम के द्वारा चुनाव नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे सामग्री रंगहीन तथा बर्बाद हो जाती है और कमज़ोर भी पड़ जाती है तथा उस पर चिन्ह अथवा धब्बे भी पड़ सकते हैं। ठीक इसी तरह किसी भी दवा का उपयोग सीधे ग्रन्थों के ऊपरी भाग पर नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे पाठक और कर्मचारी दोनों को बहुत ज्यादा नुकसान पहुँच सकता है।

अगर किसी फलक पर बहुत ज्यादा कवक का आक्रमण हो गया है और उसका तुरन्त उपचार छिड़काव करना चाहिए। यह छिड़काव किसी भी विद्युत संचालित पम्प के द्वारा किया जा सकता है लेकिन यहाँ एक बात सोचने की है कि यदि ग्रन्थालय मे वातानुकूलन की व्यवस्था है तो इसका छिड़काव नहीं किया जा सकता है। स्प्रे करने के बाद 24 घंटे के लिए भंडार कक्ष को बन्द कर देना चाहिए तथा हवा निष्कासन के बाद ही कर्मचारी या पाठक को प्रवेश करने देना चाहिए अन्यथा उनका स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है।

5.5 सफाई और धब्बों को दूर करना

ग्रन्थालय में संग्रहित ग्रन्थ तथा अन्य सामग्रियों पर धूलकण जम जाते हैं तथा बहुत तरह के धब्बे लग जाते हैं यथा उंगली की छाप तथा भूरे रंगों का धब्बा इत्यादि। जब क्षतिग्रस्त ग्रन्थों का फ्यूमीगेशन किया जा रहा हो तो दूसरे सामग्रियों की सफाई तथा धब्बों को हटाना भी उतना ही जरूरी है।

जहाँ तक सफाई का प्रश्न है इसके सम्बन्ध में कुछ मुख्य तकनीक निम्नलिखित हैं -

- तुरन्त लगे धब्बों को रूई तथा पानी के सहारे भी मिटाया जा सकता है।
- कवक के जन्तुओं को इंथनोल के घोल से रूई से साफ किया जा सकता है।
- कुछ कड़े धब्बों को हल्के वाश से भी साफ किया जा सकता है।
- ग्रन्थों पर से मिट्टी या धूलकण को हटाने के लिए चौड़े ब्लेड आकृति का चाकू तथा ब्रश का उपयोग किया जाता है।

- सीलन को छाया में विद्युत उपकरण से भी सुखाया जा सकता है। कभी भी सीधे धूप में ग्रन्थालय सामग्री को नहीं रखना चाहिए।

- फ्यूमीगेशन चेम्बर कम- से-कम 8.4.4 आकृति का उपयोग में लाना चाहिए और उसमें कभी भी 40 डिग्री सें0 45 डिग्री सें0 से अधिक तापमान नहीं देना चाहिए। भण्डार कक्ष में इससे अधिक तापमान होने पर पंखों का उपयोग बहुत ज्यादा करना चाहिए जिससे तापमान पर एक सीमा तक नियन्त्रण किया जा सके। सफाई का कार्य एक अलग कक्ष में होना चाहिए न कि ग्रन्थालय के सामान्य भण्डार कक्ष में अर्थात धूल-धूसरित ग्रन्थालय सामग्री को एक कक्ष में रखकर घूमने वाले पंखों के द्वारा उसपर लगे धूल को झाड़ देना चाहिए। यह काम प्रशिक्षित कर्मचारियों द्वारा निश्चित रूप से किया जाना चाहिए। ग्रन्थालय कर्मचारी को इसका प्रशिक्षण जरूर देना चाहिए। आरकाइब्स स्टडीस - द्वारा नेशनल आरकाइब्स ऑफ इंडिया के माध्यम से 8 सप्ताह का एक निःशुल्क प्रशिक्षण दिया जाता है, जिसका नाम केयर एण्ड सर्विसिंग ऑफ बुक्स है। इस स्कूल की मदद से भारत के सामान्य ग्रन्थालय भी अपनी समस्या का समाधान करवा सकते हैं। धब्बों को हटाने के लिए भी सुरक्षात्मक प्रयोगशाला अपने ग्रन्थालय में जरूर रखना चाहिए, जहाँ समय-समय पर विशेषज्ञों की सलाह अपेक्षित है। भारत में इस प्रकार के प्रयोगशाला निम्नलिखित संस्थाओं में पाये जाते हैं :

  (क) नेशनल आरकाइब्स ऑफ इंडिया

  (ख) नेशनल म्यूजियम

  (ग) नेशनल लाइब्रेरी

5.6 निष्कर्ष (Conclusion)

जैवीय आक्रमण से बचाव और उसके द्वारा ग्रन्थालय भंडार को क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए स्वच्छ, साफ और व्यवस्थित भंडारण का वातावरण तैयार करना बहुत जरूरी है जैसे ही किसी तरह की त्रुटि या क्षति दिखायी दे उसे आसानी से कुछ खास प्रक्रिया के द्वारा पहचाने जा सकते हैं और तुरन्त ही सुरक्षात्मक कदम भी उठाये जा सकते हैं। एक छोटी सी सुरक्षा किसी बड़े-से-बड़े खतरे को टाल सकती है।

फ्यूमीगेशन एक आवश्यक प्रक्रिया है, जिसे समय-समय पर प्रभावित सामग्री के लिए उपयोग में लाना चाहिए। लेकिन इसके लिए सुनिश्चित, चुने हुए तथा विशिष्ट रासायनिक पदार्थों का उपयोग सुरक्षित स्थान पर करना चाहिए।

इकाई 6 : ग्रन्थालय सामग्री के हानिकारक तत्व : रासायनिक
HAZARDS TO LIBRARY MATERIALS : CHEMICAL

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 ग्रन्थ एवं प्रलेख के मुख्य भाग

6.2.1 सूचना अंकित करने वाले भाग हेतु उपयोगी सामग्री

6.2.2 सूचना आवरण हेतु उपयोगी सामग्री

6.3 प्रारम्भिक सुरक्षा

6.3.1 कागज द्वारा सोखने वाले रासायनिक

6.3.2 पानी में घुलने वाले रसायन

6.3.3 कीटाणुओं को मारने वाले रसायन

6.4 क्षतिग्रस्त ग्रन्थों एवं प्रलेखों की देखमाल

6.4.1 पुनरुद्धार एवं सुदृढ़ जिल्दबन्दी हेतु सामग्री एवं रसायन

6.4.2 सफाई एवं धब्बे मिटाने वाले रसायन

6.4.3 आवरण पृष्ठ को चमकदार बनाने वाले रसायन

6.5 निष्कर्ष

6.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

ग्रन्थालय सामग्री के परीक्षण में रासायनिक पदार्थों का भी एक खास स्थान है। प्रलेख पर लिखने से लेकर सफाई और कीटाणु नाश करने तक ये रासायनिक ग्रन्थालयी तक की सहायता करते हैं लेकिन, यदि उसका सही ढंग से उपयोग नहीं किया गया तो वे खुद भी हानिकारक एवं प्रबल शत्रु बन जाते हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद निम्नलिखित बातों की जानकारी प्राप्त होगी :

- एक ग्रन्थ के मुख्य भाग और उनका परिचय
- विभिन्न भागों में उपयोग किये जाने वाले रासायनिकों का ज्ञान
- ग्रन्थालय सामग्री के लिए उपयोग में लाये गये रासायनिकों के स्वभाव और व्यवहार
- प्राथमिक सुरक्षा की दृष्टि से उपयोगी रासायनिक

- भंडारण तथा प्रदर्शन के समय उपयुक्त रासायनिक
- सही रासायनिकों का उपयोग और उसकी तकनीकी विधि
- ग्रन्थालय प्रलेख के पुनरुद्धार के समय उपयोग में लाये जाने वाले रासायनिक

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानवीय समस्याओं के समाधान तथा बौद्धिक विकास के लिए ग्रन्थालय का अपना ही महत्व है। एक ग्रन्थ या प्रलेख का निर्माण ही सूचना और ज्ञान के प्रसारण के दृष्टिकोण से किया जाता है। ग्रन्थ मानव का सच्चा मित्र होता है। इसके माध्यम से मनुष्य के समझने तथा उनके काम करने की क्षमता में भी वृद्धि होती है। मानव अपनी इच्छानुसार लक्ष्य और उद्देश्य को प्राप्त कर सकता है और जीवन को कल्पना के अनुरूप ढाल सकता है।

जब भी ज्ञान अथवा सूचना दिशाविहीन होने लगती है तो ग्रन्थ ही उसे सही दिशा प्रदान करती है। पुनः उसे लक्ष्य का ध्यान दिलाते हुए वहाँ तक पहुँचने में उसकी पूर्ण मदद करती है। इसी वजह से इन ग्रन्थों का सही संरक्षण एवं परिरक्षण भी जरूरी है। ग्रन्थ एक रासायनिक तत्व से निर्मित होता है किन्तु एक ग्रन्थालय में सिर्फ ग्रन्थ ही नहीं होता है बल्कि उसके अतिरिक्त पाण्डुलिपि तथा ग्रन्थेत्तर सामग्री भी होती हैं। ये सभी हमारे गौरव के प्रतीक हैं तथा हमारी सभ्यताओं को आगे बढ़ाने में मददगार हैं। बहुत सी ऐसी भी सामग्री हैं जो छितराये हुई शीटों के रूप में ग्रन्थालय में आती हैं किन्तु उस पर अंकित सूचनाएँ बहुत महत्वपूर्ण होती है, जिनके कारण इनके जिल्दबन्दी की आवश्यकता पड़ती है और इसे ग्रन्थपुटी का रूप दिया जाता है। इनका रख-रखाव भी आवश्यक है।

6.2 ग्रन्थ एवं प्रलेख के मुख्य भाग

ग्रन्थ अथवा प्रलेख को निम्नलिखित दो भागों में बाँटा जाता है।

(क) सूचना अंकित करने वाले भाग तथा

(ख) आवरण

ग्रन्थ एवं प्रलेख

सूचना अंकित करने वाले भाग | आवरण

इन दोनों इकाइयों के बीच ग्रन्थ के बहुत सारे भाग अवस्थित हैं। इन्हें सामान्य भाषा में आन्तरिक पृष्ठ और आवरण पृष्ठ के रूप में जाना जाता है। आन्तरिक पृष्ठ जिसके ऊपर सूचनाएं अंकित होती हैं और आवरण पृष्ठ जो इन्हें ढके रहती हैं। दोनों ही अपने आप में महत्वपूर्ण हैं। सूचनाओं के अंकन के लिए नमी सोखने वाले कागज जिस पर स्याही न फैल सके ऐसे आधार की आवश्यकता है। दूसरी तरफ आवरण के रूप में भी टिकाऊ और सुरक्षित रखने वाले आवरण की जरूरत है जो लम्बी अवधि तक इसे सुरक्षित रख सके। इन दोनों ही के ऊपर रासायनिक प्रयोग होता है। इनके निर्माण से लेकर, सूचना अंकन, उपयोग, सुरक्षा, भंडारण एवं पुनरुद्धार सभी काम के लिए रासायनिकों की आवश्यकता होती है। अतः रासायनिक पदार्थों का उपयोग जहाँ एक ओर इन सामग्रियों की सुरक्षा के लिए है वहीं दूसरी तरफ इनका गलत उपयोग इनकी समाप्ति भी है। अतः रासायनिकों का सही

ज्ञान एक ग्रन्थालयी के लिए बहुत जरूरी है।

3.1 सूचना अंकित करने वाले भाग हेतु उपयोगी सामग्री

विज्ञान और तकनीकी के तीव्र गति से बढ़ते चरण ने लिखने की सामग्री का ग्रन्थालयी के सामने ढेर लगा दिया है। मनुष्य ने जब इसका प्रारम्भ किया था तब उसे प्रकृति से जिस प्रकार का कार्बनिक और अकार्बनिक द्रव्य प्राप्त हुआ था तब उसे उसी रूप में उपयोग में लाया था।धीरे-धीरे यह मिट्टी की गोटी, ईट के टुकड़े पत्थर, पेड़ के छाल, चमड़े इत्यादि रूप में बदलते रहे। आज यह देखा जा रहा है कि भोजपत्र और तालपत्र के रूप में एक बड़ी मात्रा में पाण्डुलिपियाँ ग्रन्थालय में भंडारण एवं पुनरुद्धार के लिए रखी हुई है जो अतीत के गौरव का प्रतीक हैं। उपरोक्त सामग्री के अतिरिक्त आज वृहद पैमाने पर लेखन सामग्री के रूप में कागज का उपयोग किया जा रहा है। हमारे ग्रन्थालयों में भंडारण और पाण्डुलिपियों के पुनरुद्धार से कहीं अधिक बंडल के रूप मे रखे ये कागज से बनी अन्य सामग्री हैं। इनका उत्पादन प्राचीन काल में हाथ से ही किया जाता था, और हाथ से ही इस पर लिखने का कार्य किया जाता था। 1405 ई0 में मुद्रण कला का विकास हुआ और उसके बाद संपूर्ण विश्व में वृहद पैमाने पर उद्योग प्रारम्भ हुआ। कागज के साथ-साथ बहुत तरह के रंगों की स्याही, लिखने,मुद्रित करने और चित्र बनाने के लिए विकसित हुआ। यह बहुत तरह के प्राकृतिक गोंद और सब्जी के रस से बनाये जाने लगे। कृत्रिम स्याही का निर्माण जिंक ह्वाइट, एन्टीमनी ऑक्साइड, क्रोम येलो, वर्मिलियन, अल्ट्रामेरिन इत्यादि के द्वारा बनाया जाता है और इन्हीं नामों से जाना भी जाता है। आगामी चरण में इनको पॉलिस्टर या आधुनिक रासायनिक सामग्रियों से तैयार किया जाता है जो काफी चमकीले होते हैं। इस कार्य में सबसे अधिक कार्बन का उपयोग किया जाता है। यह देखने में काला होता है या ग्रेफाइट, इन सामग्रियों को पानी या तेल में मिलाकर स्याही तैयार किया जाता है और अन्त में इसको शुद्ध करने के लिए एक खास प्रकार के रासायनिक द्रव्यों का उपयोग किया जाता है। ये सभी पदार्थ तरह-तरह के स्याही को जन्म देते हैं। इसी वजह से मुद्रण कला के विकास के साथ स्याही का भी विकास सम्पूर्ण विश्व में हुआ है।

कागज :

कागज को तैयार करने में बहुत सारी कच्ची सामग्रियों का उपयोग किया जाता है जो निम्नलिखित है -

- कपास, सूत या सूती कपड़ा
- फ्लैक्स
- लकड़ी
- शहतूत की लकड़ी
- पटसन
- बाँस

कागज के रेशे में बहुत अधिक मात्रा में सेल्यूलोज, लिगनिन, स्टार्च और कुछ लीसा, रेसिन आदि रहते हैं। लकड़ी के रेशे में लिगनिन की मात्रा अधिक रहती है जबकि रेशे छोटे रहते हैं। कपास के रेशे लंम्बे होते हैं। जिस कागज में लम्बे रेशे होते हैं, छोटे रेशों वाले कागज की तुलना में वह अधिक दिन तक टिकाऊ रहता है। प्रयोग में आने वाली सारी कच्ची सामग्री को साफ किया जाता है और रसायनों या मशीनों की मदद से रेशों को अलग करके उसकी लुगदी तैयार की जाती है।

विधि

लुगदी तैयार करने के लिए सबसे पहले निर्माण में आने वाली कच्ची सामग्री को छोटे-छोटे टुकड़ो

में काट लिया जाता है और उसको चूने के पानी में भिगा दिया जाता है। तब रेशों को अलग करने के लिए उसे पीटा जाता है या कूटा या धुना जाता है। प्राचीन काल में जिस तरह से इसकी पिटाई की जाती थी उसी प्रकार से की जाती है। चीन में भी कागज बनाने वाली सामग्री को पत्थर के बनी ओखली में रखकर लकड़ी की बनी मूसल से उसकी पिटाई की जाती थी। कुछ जगहों में लुगदी को पानी में रखकर सड़ाया जाता है और उसके बाद उसमें चूना या सोडा मिलाया जाता है ताकि रेशे आसानी से अलग हो सकें। आज कागज की खपत बहुत अधिक मात्रा में हो रही है, इसलिए लुगदी बनाने के लिए पिटाई का काम पत्थर की चक्कियों से किया जाता है। इस चक्की में पत्थर के बडे-बड़े भारी बेलन या चक्के लगे रहते हैं जिनकी खिंचाई बैलों की सहायाता से की जाती है। लुगदी तैयार होने के बाद उसे साफ पानी से अच्छी तरह धोया जाता है। यदि श्वेत रंग का कागज बनाने की जरूरत है तो लुगदी से गंदगी निकालने के लिए रंगकाट या ब्लीचिंग रसायन का प्रयोग किया जाता है। रंगकाट से सफाई के बाद लुगदी को एक बार फिर से अच्छी तरह से धोया जाता है ताकि उसमें से सारा मैल बहकर निकल जाय। यदि मैल अच्छी तरह बहकर बाहर नहीं निकल पाता तो इस तरह की लुगदी से तैयार हुए कागज में क्षय या तेजाब या गंदगी बनी रहेगी। रंगीन कागज बनाने के लिए लुगदी में उसी तरह के कुछ रंग मिला दिये जाते हैं।

लुगदी या पल्प तैयार होने के बाद उसे पानी के भरे टब या छोटे हौज में डाल दिया जाता है फिर सिरकी की बनी स्क्रीन को इस टब या हौज में सीधा डालकर थोड़ा टेढ़ा करके बाहर निकाल लेते हैं। इस तरह जो रेशे स्क्रीन के ऊपर आ जाते हैं वे थोड़ी देर के बाद सूखने की प्रक्रिया में आपस में जुड़ जाते हैं और पूरा सूखने पर कागज बन जाता है।

दूसरी विधि यह है कि बाँस के एक आयताकार ढांचे पर फैले हुए कपड़े पर पानी में घुली रेशेदार लुगदी को उलट दिया जाता जिससे पानी छन कर बाहर निकल जाय और रेशे बचे रह जायें। जब वे कुछ सूख जाते हैं तब उन्हें जाल पर से हटा लिया जाता है और फिर उन्हें पूर्ण रूप से सूखने दिया जाता है। एक दूसरे तरह का ढांचा और प्रयोग में लिया जाता है, जिसे लेड मोल्ड कहते हैं। यह ढाँचा गोल बाँसों की पतली-पतली पट्टियों को रेशम के धागे, तांत के धागे या घोड़े के बाल से बाँध कर तैयार किया जाता है। इस तरह के ढांचे से गीले कागज की परतें भी आसानी से हटाई जा सकती हैं।

कागज की गीली परतों को सुखाने के लिये संगमरमर या चूने की बनी चिकनी दीवार का सहारा लिया जाता है। उस पर चिपका कर सुखा लिया जाता है। इस तरह से सुखाये गये कागज की परतें दीवार से अलग करने पर समतल और चिकनी होती हैं। खास तौर से उसी तरफ से जिस तरफ से यह दीवार से चिपकी रहती है।

कागज तैयार करने की प्रक्रिया में अगला चरण है उसकी घुटाई या घिसाई से उसे चिकना करना ताकि उस पर स्याही न फैले। घिसाई से उसे चिकना करने का मतलब है सरेस या जिलेटिन अथवा गोंद या लीसा को कागज पर लगाकर उसकी घिसाई करना ताकि कागज़ चिकना हो जाय और उसके सोखने की क्षमता कम हो जाए और वह लिखने के योग्य बन सके। भारत में हाथ से बने कागज पर स्टार्च का लेप लगाकर उसकी घिसाई की जाती है। कुछ अन्य देशों में कागज को चिकना बनाने के लिए एक तरह के घोल में उसे डुबोया जाता है। घिसाई और कागज को चिकना करने की इस प्रक्रिया से कागज में मजबूती भी आती है।

अच्छे प्रकार का लिखने का कागज तैयार करने की प्रक्रिया का अन्तिम चरण है उसकी लोडिंग करना, लोडिंग का यह काम चॉक या सफेद मिट्टी से किया जाता है। कागज पर पॉलिश करने से उसमें चमक आती है और उसकी संरंध्रता भी दब जाती है।चूँकि कागज में जगह-जगह संरंध्रता की अवस्था कुछ समय तक बनी रहती है।

यूरोप में कागज में चमक लाने का काम मशीनों से किया जाता है। इन मशीनों में लकड़ी के दो बड़े-बड़े बेलन या चक्के लगे रहते हैं जिनके बीच से दबाकर कागज को निकाला जाता है।

कागज के रेशे में ज्यादा से ज्यादा सेल्यूलोज, लिगनिन, स्टार्च और उसी प्रकार के कुछ लीसा आदि

जैसे पदार्थ मौजूद रहते हैं। लकड़ी के रेशे में लिगनेट ज्यादा रहता है जिसके रेशे आकार में छोटे रहते हैं, जबकि सूत या कपास के रेशे लम्बे होते हैं जिससे कागज अधिक समय तक मजबूत बना रह सकता है। इसलिए जिस कागज को तैयार करने में पूरी तरह सूती कपड़े के चिथड़ों का प्रयोग किया जाता हो, दूसरे कागजों की तुलना में वह हमेशा अधिक समय तक टिकाऊ बना रहता है।

मशीन से बना कागज :

मशीन से कागज़ बनाने में भी उसी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है जो हाथ से बनाने में काम में लाई जाती है। मशीन से कागज बनाने में शीट तैयार करने, खींचने की विधि, सफाई, घिसाई और उसे अन्तिम रूप देना यह सभी एक लगातार प्रक्रिया के द्वारा होता है। पहले कागज बनाने में केवल रद्दी सूती कपड़े के चिथड़ों को काम में लाया जाता था, लेकिन आजकल कागज की भारी माँग को पूरा करने के लिए लेसदार रेशे को बतौर लकड़ी की लुगदी को कहीं अधिक मात्रा में उपयोग में लाया जाता है। लकड़ी की लुगदी तैयार करने का खास तरीका इस तरह है :

- सल्फाइड विधि या गंधक विधि
- संशोधित सल्फाइड विधि
- सोडा विधि

सल्फाइड विधि या गन्धक विधि :

इस विधि में सबसे पहले लकड़ी को छोटे–छोटे टुकड़ो में काट लिया जाता है और तब उन टुकड़ों को कैल्सियैम–बाई–सल्फाइड और सल्फ्यूरिक एसिड (गंधक) के घोल में मिलाया जाता है। उसके बाद इसी लकड़ी के टुकड़ों और रासायनिक घोल को एक मशीन में डाल कर घुमाया जाता है जिससे वह लुगदी में बदल जाता है और उसके बाद 140 डिग्री-180 डिग्री सें0 के तापमान पर उसको पकाया जाता है। इस तापमान पर द्रव पदार्थ या लिगनिन घुल जाता है। इस विधि में पी0 एच0 की मात्रा कम होती है जिसका अर्थ है कि एसिड की मात्रा अधिक रहती है जो कागज के लिए नुकसानदेह है। इसका मतलब यह हुआ कि लकड़ी से तैयार किये गये कागज में तेज़ाब की मात्रा अधिक रहती है।

संशोधित सल्फाइड विधि :

जो कागज सल्फाइड विधि द्वारा तैयार किया जाता है उसमें तेजाब की मात्रा अधिक होती है, इसीलिए इसमें कुछ सुधार करने की जरूरत महसूस की गई। इस संशोधित विधि में लुगदी बनाने के लिए लकड़ी के टुकड़ों में सोडियम बाई-सल्फाइड या मैगनीशियम बाई सल्फाइड मिलाया जाता है। इन रसायनों में तेजाब की मात्रा कम रहती है। इनमें पी0 एच0 4 से 5 के बीच में रहता है और इसे 170 डिग्री सें0 पर पकाया जाता है।

सोडा विधि :

सोडा विधि को क्राफ्ट विधि भी कहते हैं। इस विधि में लुगदी बनाने के लिए लकड़ी में सोडियम हाइड्रोक्साइड या सोडियम सल्फाइड मिलाया जाता है और उसे 170 डिग्री सें0 पर पकाया जाता है। पकाने से पहले हाइपो क्लोराइड या क्लोरीन या हाइड्रोजन पैराक्साइड से अगर जरूरत हो तो इसमें मौजूद गंदगी को साफ किया जाता है। रंगकाट से रंग और गंदगी की सफाई के बाद उसकी धुलाई होना बहुत जरूरी है। गंदगी की सफाई करने के लिए ज्यादातर हाइपो-क्लोराइड का उपयोग किया जाता है, क्योंकि यह सस्ता पड़ता है और हाइड्रोजन पैराक्साइड बहुत महंगा है। समय-समय पर रसायनों की कमी को पूरा करने के लिए सोडियम सल्फेट मिलाने की प्रक्रिया चलती है।

रंगकाट से सफाई/ब्लीचिंग :

लुगदी जो रासायनिक द्रव्यों की मदद से तैयार किया जाता है उसमें हल्का भूरापन या हल्का कत्थई रंग बना रहता है। रंगकाट के द्वारा इसको साफ करना जरूरी है। इसके लिए ज्यादातर क्लोरीन, हाइपोक्लोराइड, हाइड्रोजन पैराक्साइड जैसे रासायनिक द्रव्यों को उपयोग में लाया जाता है। मशीन से कागज बनाने में लकड़ी की लुगदी तैयार करने के लिए बहुत से रसायनों का उपयोग होता है। इसका परिणाम यह होता है कि मशीन से बने कागज में तेजाब नहीं रहता है और इसके रेशे की लम्बाई भी कम रहती है। इसलिए हाथ से बने कागज की तुलना में मशीन से बने कागज कम समय तक टिकाऊ रहते हैं।

लकड़ी के कुछ कागज मशीनों की मदद से बिना किसी रासायनिक द्रव्यों के तैयार किया जाता है। इसके लिए छाल उतरी लकड़ी के लट्ठों को गर्म पानी के नीचे घूमते हुए पत्थर के चक्के के नीचे दबाकर पीसा जाता है। इस प्रक्रिया में पानी से जो कुछ तत्व बाहर निकल जाते हैं उन्हें छोड़कर लकड़ी के सारे तत्त्व बचे रह जाते हैं।

घुटाई/घिसाई या चिकना करने की विधि

कागज की घुटाई अर्थात उसे चिकना करने के लिए स्टार्च, गोंद और मोम के घोल का उपयोग किया जाता है। कभी-कभी तेजाब में मिलाकर लीसा अथवा रेसिन को भी उपयोग में लाया जाता है। आजकल प्राकृतिक लीसा के बजाय कृत्रिम लीसा को उपयोग में लाया जाने लगा है।

भराई

मर्शन के द्वारा जो लुगदी तैयार किया जाता है उसमें कुछ ऐसे पदार्थ को मिलाया जाता है जिससे उसका रंग सफेद हो जाय और वह छपाई के उपयुक्त बन सके। ये पदार्थ हैं कौलिन, बेरियम सल्फेट, सफेद टिटानियम, चॉक मिट्टी, जिप्सम, मैगनीज सिलिकेट इत्यादि।

इसलिए यह कहा जा सकता है कि जिस कागज में लम्बे रेशे रहते हैं, उसे छोटे रेशों वाले कागज की तुलना में बेहतर माना जाता है या यह कहें कि रद्दी कपड़े के चिथड़े अथवा कपास से तैयार हुआ कागज लकड़ी की लुगदी से तैयार हुए कागज की तुलना में कहीं अच्छा होता है।

लेखन एवं मुद्रण स्याही

स्याही या कोई भी तरल सामग्री जिसके द्वारा लिखने अथवा मुद्रण का काम किया जाता है वह या तो पिग्मेंट अथवा डाई से बनता है। इसे पानी के अन्दर सामान्य घोल बनाकर तैयार किया जाता है और पुनः उसमें तेल डाला जाता है। स्याही के अन्दर मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

- यह किसी एक रंग का होता है जो लिखने के साथ ही कुछ समय के बाद सूख जाता है।
- इसके बहाव को आगे-पीछे करके इच्छित आकृति बनायी जा सकती है।
- जब इसे तरल सामग्री का रूप दिया जाता है तो यह पिग्मेंट, रंग, पानी और सूखने वाले तेल का सम्मिश्रण होता है।
- इसी वहज से यह जल्दी सूख जाता है। इसके लिए सामान्य वातावरण पी0 एच0 4.1 प्रतिशत ही आदर्श माना गया है।
- इसका रंग किस तरह का होगा, यह इच्छा पर निर्भर करता है, किन्तु जो भी रंग होगा वह चमकीला, फिसलने वाला, स्थायी, एवं मानक श्रेणी का होगा।

मुद्रण स्याही

जब पिग्मेंट में लैम्प ब्लैक, ग्रेफाइट, काला चारकोल, उजला भट्ठा, जिंक ह्वाइट, तूतिया, टाटेनियम

ऑक्साइड, एनाटोमी ऑक्साइड उजला, क्रोम येलो, जिंक क्रोमेट येलो, वॉमिलियन, स्कारलेट क्रोम, मददार (अल्जेरिन), ऑक्साइड ऑफ आयरन ब्लू, बेसिक एसिटेट ऑफ कॉपर (वरडिग्निस) ग्रीन इत्यादि मिश्रित कर दिया जाता है। तब यह मुद्रण स्याही के रूप में तैयार होता है। मुद्रण के सामान्य श्रेणी में तारकोल का तेल भी मिलाया जाता है। उच्च श्रेणी के मुद्रण तैल में सोडा अथवा ग्लिसरीन भी मिलाया जाता है, इसका उपयोग बहुत ही सुरक्षित और आकर्षक होता है लेकिन यह अधिक टिकाऊ नहीं होता है। बस इच्छित स्याही अथवा इच्छित आकृति ही इससे दिया जा सकता है।

लेखनीय स्याही

इस स्याही के अन्तर्गत भी कार्बन अथवा लैम्प ब्लैक चारकोल, आयरन इत्यादि मिलाकर और सूखने वाला तेल मिलाकर तैयार किया जाता है और इसमें दो तरह के अम्ल का भी प्रयोग किया जाता है, जिनका नाम है : हाइड्रोक्लोरिक और सल्फ्यूरिक एसिड। ये स्याही की दिशा को इच्छित आकृति देने में सहायता करते हैं।

वर्तमान समय में इस दिशा में भी बहुत तरह के आविष्कार हो चुके हैं जिसमें से कुछ को सारणी के अन्तर्गत दर्शाया जा रहा है :

रंग	डाई
ब्लैक ब्लू	फिनाल ब्लू
वायलेट ब्लैक	फिनाल ब्लू एण्ड पोनसियन रेड आर
रेड ब्लैक	पोनासियन रेड आर
ग्रीन	एनीलेयर ग्रीन

मुद्रण स्याही हो हस्तलिखित स्याही हो दोनों में ही सुरक्षा की दृष्टि से फिनाल और फार्मेलिन का उपयोग किया जाता है। यह परिरक्षण और संरक्षण दोनों ही दृष्टि से लाभदायक है, क्योंकि यह नमी और ताप दोनों को सहन करता है।

एक नए रंग के वर्ग के रूप में तरल सामग्री के रूप में बॉल पेन का आविष्कार किया गया है जिसमें रिफिल भरते हैं। इस रिफिल को पैथोलिक अनहाइड्राइड अथवा ग्लाइकोल्स इत्यादि को माध्यम के रूप में उपयोग में लाया जाता है। जब स्याही की क्रिया निर्धारित कर दी जाती है तब कागज पर यह किस रूप में काम करेगा, यह कागज के माध्यम पर निर्भर करता है। कागज में किस-किस प्रकार का रासायनिक मिलाया गया है। तथा उसके रेशे कितने मजबूत और टिकाऊ हैं इसी पर स्याही का फैलना और आकृति निर्भर करता है। स्याही में मिलाया गया तेल की श्रेणी पर भी इसका फैलना निर्भर करता है। पिग्मेंट इसका मुख तत्व है। इसको श्रेणी भी मान्य होना चाहिए नहीं तो स्याही को इच्छित आकृति देने में कठिनाई होगी। उपरोक्त वर्णन के माध्यम से हम यह पाते हैं कि स्याही किस प्रकार से काम करेगी यह पूर्णतः उसके विभिन्न तत्वों पर निर्भर करता है। सामान्यतया ग्रन्थालय में उपयोग के लिए यदि कागज और स्याही दोनों ही मानक स्तर के हों तो ग्रन्थ अथवा प्रलेख को अधिक परिरक्षण अथवा संरक्षण की आवश्यकता नहीं रहती है किन्तु यदि इसके विपरीत एक भी निम्न स्तर का होता है तो ग्रन्थ को सही जिंदगी नहीं दी जा सकती है।

स्याही की उपस्थिति मुद्रण अथवा लेखन दोनों को ही पूर्ण प्रभावित करता है क्योंकि दोनों के ही तत्व एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। इस कारण एक ग्रन्थालयी दोनों के ही श्रेणी पर समुचित ध्यान देता है ताकि रासायनिकों का उपयोग करते समय ग्रन्थों को पूर्ण परिरक्षण और संरक्षण दिया जा सके और

ग्रन्थ अथवा प्रलेख के किसी भी पक्ष को प्रत्यक्ष क्षति नहीं पहुँचे। इन दोनों में उपयोग किये जाने वाले तत्व एक दूसरे के पूरक हैं या एक के भी क्षतिग्रस्त होने से दोनों प्रभावित हो जाते हैं। इस प्रकार दोनों के अन्योन्याश्रय सम्बन्ध हैं। अतः दोनों के स्वभाव का समुचित ज्ञान होना भी आवश्यक है।

6.2.2 सूचना आवरण हेतु उपयोगी सामग्री

ग्रन्थ हो या प्रलेख दोनों के अन्दर ही सूचना रहती है। यह सूचना विभिन्न रूपों में लिखी रहती है। कभी-कभी यह लम्बे धारी में लिखी रहती है तो कभी-कभी यह कॉलम बनाकर या कभी अंकीय रूप में। सबका अपना-अपना महत्व है। यह डिसप्ले बोर्ड पर दिखायी देता है अथवा ग्रन्थ के अन्दर लेकिन यह क्रमिक रूप से रहता है, जिसका उपयोग पाठक आसानी से कर सकते हैं। इसके ऊपर से ही पूर्ण आवरण चढ़ा रहता है जो इसके सुरक्षा कवच का काम करता है। यह उपयोग करते समय टूटे नहीं, फटे नहीं और इसमें अंकित सूचनायें क्षतिग्रस्त हो जायें इसको ध्यान में रखकर ही आवरण चढ़ाया जाता है। यह आवरण खासतौर पर डोकेटिंग एवं जिल्दबन्दी के लिए प्रसिद्ध है। यह आवरण पृष्ठ निम्नलिखित प्रकार का होता है :

- साफ्ट कवर जिल्दबन्दी
- हार्ड कवर जिल्दबन्दी

साफ्ट कवर जिल्दबन्दी : आवरण को दफ्ती या गत्ता भी कहते हैं। यह मोटी और पतली दोनो तरह की होती है। जब आवरण के रूप में पतली और कोमल सामग्री का उपयोग किया जाता है तब इसे साफ्ट कवर जिल्दबन्दी कहते हैं। प्रकाशक पम्पलेट की इसी प्रकार की जिल्दबन्दी करते हैं। इसमें मुलायम कागज के रंगीन और आकर्षक शीट को आवरण के रूप में नत्थी कर दिया जाता है।

जिस तरह एडहेसिव जिल्दबन्दी का उपयोग बहुत तेजी से हो रहा है ठीक उसी प्रकार प्रकाशकों के द्वारा आज के युग में इस जिल्दबन्दी का वृहद पैमाने पर इसका उपयोग किया जा रहा है। सस्ते और निम्नस्तर के उपन्यासों, छोटे-छोटे ग्रन्थों तथा छात्र संस्करण ग्रन्थों के लिए भी इसी प्रकार की जिल्दबन्दी का उपयोग प्रकाशकों द्वारा किया जाता है, क्योंकि यह जिल्दबन्दी सस्ती और आकर्षक होती है। जिल्दबन्दी करते समय प्रारम्भिक प्रक्रिया के अन्तर्गत आकर्षक रंगों वाली मुलायम कागज की एकल शीट को लिया जाता है और उसे ग्रन्थ की आकृति के अनुकूल मापकर काट लिया जाता है। स्पाइन बीच में रखकर दोनों ओर से मोड़ दिया जाता है। उसके बीच ग्रन्थ के सभी सेक्शन को रख दिया जाता है और बाद में उसे नत्थी कर दया जाता है या चिपका दिया जाता है जो सुदृढ़ जिल्दबन्दी से मिलता जुलता है।

प्रकाशक के लिए तो यह बहुत ही सुविधाजनक है, क्योंकि यह भौतिक रूप से काफी कमजोर होता है, जिससे उपयोग के दौरान ग्रन्थ की आयु भी कम हो जाती है। उपरोक्त स्थिति से बचने के लिए पुनः जिल्दबन्दी जरूरी हो जाती है जिससे ग्रन्थ का परिरक्षण तथा संरक्षण लम्बे समय तक हो सके।

हार्ड कवर जिल्दबन्दी : जिल्दबन्दी में आवरण पृष्ठ का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। आवरण पृष्ठ में जब मोटे और मजबूत बोर्ड का उपयोग किया जाता है तो इसे हार्ड कवर जिल्दबन्दी कहते हैं। हार्ड बोर्ड निम्नलिखित तरह के होते हैं :

- स्ट्राव बोर्ड
- मिल बोर्ड
- ग्रे बोर्ड
- स्पलाइट बोर्ड

स्ट्राव बोर्ड : यह पुआल या घास से तैयार होता है, जो सस्ता होता है, इसका उपयोग भी छोटे-छोटे

और सस्ते ग्रन्थों के लिए होता है।

मिल बोर्ड : यह जूट, कपास या चिथड़ों से तैयार होता है। यह भी सस्ता होता है।

ग्रे बोर्ड : यह अच्छे किस्म के घास से बनाया जाता है, जो तुलनात्मक रूप से दोनों बोर्डों से मजबूत होता है।

स्पलाइट बोर्ड : यह भी जूट, कपास या उच्च श्रेणी के घास से तैयार किया हुआ सबसे मजबूत बोर्ड है जिसका उपयोग सुदृढ़ जिल्दबन्दी के लिए किया जाता है।

उपर्युक्त जिल्दबन्दी की विधियाँ निम्नलिखित हैं :

- सबसे पहले बोर्ड के दो टुकड़े लिए जाते है और उसे ग्रन्थ के सामने और पीछे से नापकर ग्रन्थ की आकृति से दो इंच बड़ी आकृति में काट लिया जाता है। दोनों के बीच सभी पृष्ठों को रख दिया जाता है और उसके बाद सुई धागे से इसकी सिलाई की जाती है फिर इसके ऊपर टेप चिपका दी जाती है। बोर्ड और ग्रन्थ के बीच एण्ड पेपर (End Paper) को चिपका दिया जाता है।
- दूसरे क्रम में ग्रन्थ और बोर्ड दोनों एक दूसरे से बंध जाते हैं। उसके बाद इस बोर्ड के ऊपर चमड़े, कपड़े, रैक्सीन, प्लास्टिक, अथवा पॉलिस्टर से बने आकर्षक आवरण पृष्ठ को चिपका दिया जाता है और पुनः इसे स्टाइलस अथवा मशीन के अन्दर दबा दिया जाता है।
- आवरण पृष्ठ में जिस सामग्री का उपयोग किया जाता है। उसके आधार पर भी जिल्दबन्दी को कइ तरह बाँटा जाता है जैसे,

पूर्ण चमड़ा जिल्दबन्दी: पूर्ण जिल्दबन्दी से यह मतलब है कि पुस्तक और उसका किनारा एक ही पदार्थ से बाँधे गए हों। अगर इसके लिए चमड़े का प्रयोग किया गया हो तो उसे पूर्ण चमड़े की जिल्दबन्दी कही जाएगी। इस तरह की जिल्दबन्दी का प्रयोग संदर्भ ग्रन्थों, शब्द कोष, विश्व कोष के लिए किया जाता है। इस तरह की जिल्दबन्दी महँगी होती है।

अर्द्ध चमड़ा जिल्दबन्दी : इस तरह की जिल्दबन्दी में बोर्ड अंशतः चमड़े से छिपे रहते हैं। शेष भाग कपड़े या अन्य सामग्रियों से ढके रहते हैं। इस तरह की जिल्दबन्दी में बोर्ड की पीछे का भाग और कोना (Corner) चमड़े से ढके रहते हैं। इस तरह की जिल्दबन्दी का प्रयोग पत्र-पत्रिकाओं के लिए किया जाता है।

पूर्ण कपड़ा जिल्दबन्दी : चमड़े की पूर्ण जिल्दबन्दी की तरह ही कपड़े की पूर्ण जिल्दबन्दी है जिसमें ग्रन्थ के बोर्ड को पूरी तरह से कपड़े से ढका जाता है। उच्च श्रेणी के ग्रन्थों और धार्मिक ग्रन्थों के लिए यह जिल्दबन्दी की जाती है।

अर्द्ध कपड़ा जिल्दबन्दी : इस तरह की जिल्दबन्दी में ग्रन्थ के बोर्ड के पीछे का हिस्सा स्पाइन और कोना कपड़े से ढका रहता है और बाकी हिस्से में कागज ही रहता है।

चौथाई जिल्दबन्दी : चौथाई जिल्दबन्दी में कपड़ा या चमड़ा ग्रन्थ के बोर्ड के चारों कोनों पर रहते है और बीच के भाग में कागज (Paper) ही रहता है।

एडहेसिव (Adhesive) एप्लाइड जिल्दबन्दी : इसे चिपकाने वाली जिल्दबन्दी भी कहते हैं। इस तरह की जिल्दबन्दी का प्रयोग इन दिनों तेजी से हो रहा है। यह ग्रन्थालय जिल्दबन्दी का एक प्रकार है जिसमें सिलाई का प्रयोग नहीं किया जाता है; केवल साट दिया जाता है। इस जिल्दबन्दी में पृष्ठों को एक दूसरे से चिपका दिया जाता है। इसके लिए चिपकने वाले जिल्दबन्दी यन्त्र का प्रयोग किया जाता है। चूँकि यह कम खर्चीला होता है। इसलिए अधिकांश प्रकाशक इसी तरह के जिल्दबन्दी का उपयोग करते हैं। यह आधुनिक युग में प्रकाशकों के लिए "वरदान" माना गया है। जहाँ वृहद मात्रा में ग्रन्थ छपते हैं और जिल्दबन्दी की जरूरत है, वहाँ प्रकाशक इसी सस्ती और

सुलभ जिल्दबन्दी का उपयोग करते हैं। ग्रन्थालय के लिए यह "अभिशाप" है, क्योंकि न तो यह जिल्दबन्दी टिकाऊ होती है और न ही सुरक्षित।

सेक्शन स्टिचिंग जिल्दबन्दी : इसे सिगनेचर स्टिचिंग जिल्दबन्दी भी कहते हैं। इसमें मोड़ने के समय सिगनेचर लगा दी जाती है, और फिर उसे सही क्रम में रख लिया जाता है और सुई एवं धागे के सहारे उसकी सिलाई कर दी जाती है। एक सिगनेचर को दूसरे सिगनेचर के सहारे सुई धागे से जोड़ दिया जाता है। पुनः इसके ऊपर से कड़ा आवरण बना कर लगा दिया जाता है। इसमें आवरण और ग्रन्थ के बीच में एण्ड पेपर और टेप का भी उपयोग किया जाता है। इस जिल्दबन्दी में कड़ा आवरण पृष्ठ हमेशा अपेक्षित है। इसमें सिलाई का काम भी सेक्सन दर सेक्सन किया जाता है इसके लिए ग्रन्थ के स्पाइन पर चिन्ह लगा दिया जाता है। इन चिन्हों पर टेप को चिपका कर उसके ऊपर से एण्ड पेपर को चिपका दिया जाता है। इसके बाद आवरण पृष्ठ को चिपकाया जाता है। वास्तव में जिल्दबन्दी सही अर्थ में इसे ही कहा जाता है जिसका विस्तृत विवेचन आगामी इकाई में है।

6.3 प्रारम्भिक सुरक्षा

"सुरक्षा उपचार से बेहतर है" यह कहावत बिल्कुल सही है। यह बहुत ही उपयोगी व्यवस्था है कि ग्रन्थालय का ऐसा वातावरण ही रखा जाय, जिसमें जैवीय प्राणी उत्पन्न ही नहीं हो सकें और अगर उत्पन्न हो भी गये तो इसका पता आसानी से लगाया जा सके। अस्वस्थ तथा अव्यवस्थित व्यवस्था जैवीय प्राणियों को उत्पन्न होने तथा उसे विकसित होने के लिए आमंत्रित करती है, जिसमें ग्रन्थालय सामग्री जैवीय क्षति से प्रभावित होती हैं। साफ़ या व्यवस्थित वातावरण में ये कीट न तो जन्म ले सकते हैं और न तो इनकी वृद्धि ही होगी क्योंकि ये इसके अभ्यस्त नहीं होते। इसी कारण सामान्य भाषा में यह कहा जाता है कि ग्रन्थालय भंडार का रोजाना अवलोकन या देख-रेख किया जाना चाहिए।

उत्तम गृह व्यवस्था तथा स्वच्छ व्यवस्था प्रदान करना बहुत जरूरी है। ग्रन्थालय सामग्री के संग्रहण के तहत उत्तम गृह व्यवस्था का अर्थ उत्तम रख-रखाव है, जिसके तहत शीलन का न होना, स्वच्छ और अपेच्छित मात्रा में वायु का आवागमन होना, उच्च तापमान से बचाव करना तथा उच्च सापेक्षिक नमी से बचाव पूर्ण वातावरण बनाये रखना है। वैसे तो अलग-अलग स्वभाव के लिए अलग-अलग वातावरण निर्धारित है फिर भी एक सामान्य वातावरण के लिए तापमान का मापदंड 40 डिग्री-25 डिग्री सें0 तथा सापेक्षित नमी का मापदंड 45-65 % है। ग्रन्थालय के सामान्य सामग्री के लिए एक आदर्श वातावरण हेतु ताप और आर्द्रता का यही मापदंड रखा गया है। यह तभी संभव हो सकता है जब 24 घंटे ग्रन्थालय हेतु वातानुकूलन की व्यवस्था संभव हो लेकिन भारत जैसे देश के लिए आर्थिक वजह से सम्भव नहीं है।

फिर भी यदि वातानुकूलित व्यवस्था सम्भव हो तो उसे नियोजित करने से पूर्व निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना बहुत जरूरी है :

- वातानुकूलित यंत्रों के रख-रखाव की समुचित व्यवस्था होना।
- उपरोक्त यंत्र को क्रैक करते समय उच्च श्रेणी पर ध्यान देना।
- यह लम्बे समय तक चले इसकी सुनियोजित व्यवस्था करना।
- यंत्र को चलाने के लिए लागत व्यय उपलब्ध होना।
- यंत्र को चलाने के लिए कर्मचारी का प्रशिक्षित होना क्योंकि अव्यवस्थित अथवा बीच-बीच में रुक-रुक कर चलने वाले वातानुकूलन की व्यवस्था अधिक नुकसानदेह होती है।

जैवीय प्राणियों से क्षतिग्रस्तता की सुरक्षा के दृष्टिकोण से ग्रन्थालय सामग्री हेतु शीतल तथा स्वस्थ

मौसम, साफ और स्वच्छ वायु का सीमित मात्रा में ग्रन्थालय भंडार कक्ष में आवागमन एवं प्रकाश का सीमित मात्रा में प्रवेश आवश्यक है। इसी वजह से ग्रन्थालय भंडार कक्ष हवादार तथा रोशनी युक्त होना बहुत जरूरी है। वायु को प्रदूषित होने से बचाव के लिए तथा आवागमन की सही व्यवस्था के लिए प्रचुर मात्रा में हवा मापक यंत्र और निष्कासन पंखे की भी पूर्ण व्यवस्था होना चाहिए। पंक्तियों तथा निधानियों का व्यवस्थापन भी इस तरह से किया जाना चाहिए कि वह वायु तथा रोशनी के आवागमन में बाधक न हो। शीलन को बचाने के लिए दीवारों पर तेल पोत देना चाहिए। शीलन वाली जमीन की सतह पर जूट की चटाई का उपयोग करना चाहिए। इन चटाइयों को भी समयानुसार धूप दिखाना चाहिए जिससे इसके अन्दर छिपी हुई नमी भी निकल सके।

जमीन के दरार तथा दरवाजे के छिद्रों को अच्छी तरह से सीमेंट से बन्द कर देना चाहिए, जिससे कीट अथवा पशु का प्रवेश नहीं हो सके। खिड़कियों के ऊपर भी तार के महीन जाली को लगवा देना चाहिए। दरवाजे एवं बरसाती में भी वांछित आकृति के लोहे के ग्रिल का उपयोग करना चाहिए। प्रवेश द्वार भी स्प्रिंगदार लगवाना चाहिए जिससे पशु का प्रवेश न हो सके।

ग्रन्थालय में उपयोग किये जाने वाले सभी उपस्कर और अन्य उपकरण "ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैण्डर्ड" द्वारा मान्य होना चाहिए।

धूल का जमना भी ग्रन्थालय के वातावरण को प्रदूषित कर देता है तथा जैवीय प्राणी के जन्म और विकास में सहायक होता है। अतः ग्रन्थालय में नियमित रूप से धूल झाड़ने का काम होना चाहिए। आधुनिक युग में इस काम के लिए विद्युत वाष्पीय धूल झाड़न यंत्र का आविष्कार हो चुका है, जिसका उपयोग आसानी से किया जा सकता है। इसके द्वारा आसानी से निधानी, आलमीरा तथा दिवालों पर पड़े धूल को हटाया जा सकता है।

प्रारम्भिक सुरक्षा को ही प्राथमिक उपचार भी कहते हैं जिसका अर्थ होता है कि प्रारम्भ से ही ऐसी व्यवस्था करना जिससे क्षतिग्रस्तता आये ही नहीं या यदि वह आ भी जाय तो छोटा-मोटा बचाव का काम खुद ग्रन्थालयी कर ले। यह ठीक उसी तरह से है जिस तरह से छोटे-मोटे दुर्घटना के समय या मामूली बीमारी के समय घर के लोग करते हैं।

निम्नलिखित तरीके से भी प्रारम्भिक सुरक्षा की जा सकती है -

- ग्रन्थालय और ग्रन्थों की सफाई नियमित रूप से करना चाहिए, क्योंकि धूल ही सभी तरह के क्षतिग्रस्तता का आधार है।
- समय-समय पर सम्पूर्ण ग्रन्थालय भंडार का निरीक्षण करना चाहिए।
- हवा की आर्द्रता (आर0 एच0) और तापक्रम पर नियन्त्रण रखना चाहिए।
- बन्द आलमारी का प्रयोग अधिक न किया जाता हो उसे समय-समय पर खोलना और उसके अन्दर पैरा-डाई-क्लोरोबेंजीन या नैपथलीन या ओडोनिल रखकर उसे बन्द कर देना चाहिए।
- जिन ग्रन्थों के ऊपर ग्रन्थ कीट या कवक का प्रकोप हो गया हो उसे अलग रखकर सफाई करना चाहिए तथा सफाई से पहले उन पर सफेद स्प्रिट का फव्वारा करना चाहिए जिससे ग्रन्थ रोगमुक्त हो जाएं।
- थाईमोल, पैरा-डाई-क्लोरोबेंजीन अथवा फारमलडिहाइड द्वारा या नीम की पत्ती जलाकर फ्यूमीगेशन की क्रिया करना चाहिए, जिससे सामग्री को रोगमुक्त किया जा सकता है।
- ग्रन्थों की मरम्मत के लिए प्रयोग किया गया कागज, कपड़ा, लेई, इत्यादि में कीटनाशक अथवा कवक नाशक दवाओं या रसायनों का प्रयोग करना चाहिए।
- कागज ऐसा प्रयोग करना चाहिए, जो कवक प्रतिरोधक या कीट प्रतिरोधक हो।
- यदि लकड़ी की आलमारी में दरारें इत्यादि हों तो उसे मोम से भर दिया जाना चाहिए जिससे कीड़े घुसने न पायें।

- आलमारियों में बोरिक एसिड अथवा बोरेक्स की मात्रा 1:1 में मिश्रित कर छिड़काव करना चाहिए। या उनके जगह पर बोरिक एसिड के साथ पाइरीथम पाउडर के मिश्रण का छिड़काव करना चाहिए इन छिड़कावों से कीट अथवा कवक सामग्री को क्षतिग्रस्त नहीं कर पाते हैं।
- कीट प्रतिरोधक लकड़ी जैसे टीक, देवदार इत्यादि से बने उपस्कर का ही उपयोग करना चाहिए।

6.3.1 कागज द्वारा सोखने वाले रासायनिक

नभी को हटाकर वातावरण को सामान्य करने पर स्याही कागज पर सामान्य स्थिति में बनी रहती है। इसकी मुख्य विधियाँ निम्नलिखित हैं :

- सूखने वाले पाउडर का प्रयोग करके, अल्कोहल को पानी में घोलकर, मिश्रण का प्रयोग करके।
- रासायनिक धुआँ दिखाकर नमी को हटाने के लिए प्रलेख के भौतिक पक्ष पर ध्यान देना आवश्यक है। यहाँ स्याही की श्रेणी भी अत्यधिक विचारणीय है और कागज भी धोने और सुखाने योग्य होना चाहिए। यदि कोई दाग या धब्बा लग गया हो तो प्राथमिक उपचार के रूप में निम्नलिखित रासायनिक को अल्कोहल में मिलाकर उसका उपयोग करना चाहिए :- मिल्ड एल्केलिन रासायनिक जैसे, कैल्शियम हाइड्रोक्साइड एण्ड मिथाइल मैग्नीशियम, मॉरफोलिन, मैग्नीशियम मेथाक्साइड, बेरियम हाइड्रोक्साइड, अमोनिया (डाइल्यूट) साइक्लो हेक्सालेमिन्स कार्बोनेट, डाइ इथाइल जिंक, ये सभी रासायनिक कागज को क्षतिग्रस्त नहीं करते हैं, उसे हमेशा सुरक्षित रखते हैं तथा कागज भी हमेशा चिकना और तरोताजा बना रहता है।

सबसे संतोषजनक निराद्रीकरण विधि निम्नलिखित है :

- जब रासायनिक, सावधानीपूर्वक नमी को हटा देता है तब नमी 5.5 तथा 9.5 के बीच रहता है। यही नमी की मानक गणना है।
- रासायनिक की श्रेणी क्या होगी ? यह विशेषज्ञ पर निर्भर करता है। अतः विशेषज्ञ की सलाह लेना जरूरी है।

6.3.2 पानी में घुलने वाली रासायनिक

किसी भी तरह के धब्बे को मिटाने के लिए पानी या पानी के रंग का रासायनिक का प्रयोग करना चाहिए। यह निराद्रीकरण की दृष्टिकोण से बहुत उपयोगी है। आज के युग में प्लास्टिक से बने पतले ब्रश विभिन्न श्रेणियों में मिल रहे हैं तथा ग्रन्थेत्तर सामग्री भी लिखने, चित्र बनाने अथवा मुद्रण करने के लिए विभिन्न प्रकार के मिल रहे हैं जो निम्नलिखित हैं :

घुलनशील नायलोन, पोलिविनाइल एसिटेट, पोलिविनाइल क्लोराइड, पोलिमाइडस और एक्राइलिक इस्टरस इनको साफ करने के लिए निम्नलिखित रसायनों का प्रयोग किया जाता है :

एसिटोन, एक्सिलिन, ट्राइ और डाइक्लोरो इथिलीन, क्लोरोफार्म इत्यादि उपर्युक्त सामग्रियों से साफ करने पर कागज में किसी भी तरह की प्रतिक्रिया नहीं होती है, वह अच्छी तरह से ग्रन्थ पर लगे धब्बों को साफ कर चिकना और टिकाऊ बना देती है।

6.3.3 कीटाणुओं को मारने वाले रासायनिक

फ्यूमीगेशन बहुत ही सुविधाजनक प्रक्रिया है, निम्नलिखित रूप से की जाती है जो कीड़ों को मारने में सक्षम है । फ्यूमीगेशन की प्रक्रिया को तीन तरह से संपादित किया जा सकता है। वायु प्रदूषण, कवक अथवा कीटों के नाश के लिए यह बहुत उपयोगी है। भारत के साधारण ग्रन्थालयों में नीम के पत्तों को सुखाकर और उसे जलाकर फ्यूमीगेशन की प्रक्रिया संपादित की जाती है। रासायनिक पदार्थों जैसे पेरा-डाई-क्लोरोबेंजीन, कार्बन डाई सल्फेट, कार्बन टेट्राक्लोराइड, मिथाइल ब्रोमाइड इत्यादि के वाष्पीकरण से भी फ्यूमीगेशन किया जाता है जिससे जैवीय शत्रु का नाश होता है। तीसरा आधुनिक ग्रन्थालय में एक फ्यूमीगेशन चेम्बर होता है जहाँ यह क्रिया संपादित की जाती है। कीटों तथा कवक के रोकथाम के लिए यह काफी कारगर विधि है। इसका प्रभाव तत्काल दिया गया। धूमन (फ्यूमीगेशन) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा सभी सक्रिय जैवीय प्रतिनिधियों का तत्काल विनाश किया जाता है। जिस ग्रन्थ पर कवक आवा कीट का आक्रमण हो गया हो उसका फ्यूमीगेशन बहुत जरूरी है। इस काम को पूरा करने के लिए निम्नलिखित प्रक्रियाएँ अपनानी पड़ती हैं :

- प्रथम चरण में क्षतिग्रस्त ग्रन्थों को छाँटकर हवा से दूर कर दिया जाता है, जिससे यह अन्य ग्रन्थों को प्रदूषित न कर सके।
- दूसरे चरण में ऐसे रासायनिक द्रव्यों को फ्यूमीगेशन हेतु निर्देशित किया गया है जो न तो ग्रन्थ के लिखित पक्ष को क्षति पहुँचाते हैं और न कागज के रंग को परिवर्तित करते हैं। इनका नाम निम्नलिखिव है :

    1. थाइमोल : 100-150 ग्राम प्रति कि0 मी0 स्थान हेतु
    2. कार्बोटेट्राक्लोराइड तथा इथिलीन डाइ-क्लोराइड का मिश्रण (:3) 225 एम0 एल0 प्रति कि0 मी0 स्थान हेतु
    3. पैराडाइक्लोरोबेंजीन : 400-500 ग्राम प्रति किलो मीटर स्थान हेतु।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो चुका है कि आजकल फ्यूमीगेशन चैम्बर का उपयोग किया जाता है। यह एक तरह का अलमारी या बाक्स है, जो लकड़ी या स्टील से बना होता है। इसमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं ये छेद अथवा छिद्र ही धुआँ को एक खाने से दूसरे खाने में ले जाते हैं। इसमें चार से छः खाने होते हैं जिसके दोनों ओर छिद्र के क्रम से ग्रन्थ को रख दिया जाता है और उसके बाद फ्यूमीगेशन की क्रिया की जाती है। दरवाजे को कसकर बन्द कर दिया जाता है। निर्वात पम्प के द्वारा अन्दर की हवा को बाहर खींचा जाता है जिससे चैम्बर वायु रहित हो जाता है। जरूरत महसूस करने पर निकास द्वार को भी बंद कर दिया जाता है , अब गैस को सुनिश्चित मात्रा में चैम्बर में भेज दिया जाता है फिर इसके प्रवेश द्वार को भी बंद कर दिया जाता है। 24 घंटे के बाद निष्कासन पम्प के द्वारा गैस को बाहर निकालकर स्वच्छ सामग्री को बाहर निकाला जाता है। सबसे छोटा धूमन (फ्यूमीगेशन) चेम्बर का आविष्कार नेशनल आरकाइब्स के द्वारा किया गया है। यह चौकोर आकृति का है तथा इसमें 35 से 40 हजार तक सामग्री रखी जा सकती है तथा इसे बाहर लाकर पानी तथा अन्य विधि से साफ भी किया जा सकता है। स्वच्छ किये गये सामग्री को 24 घंटा बाहर रखने के बाद ही फलक पर रखना चाहिए। धूमन (फ्यूमीगेशन) का कार्य प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा ही करवाना चाहिए।

कीटनाशक दवाओं या फ्यूमीगेशन हेतु कभी भी प्रचार माध्यम के द्वारा चुनाव नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे सामग्री रंगहीन तथा अधिक क्षतिग्रस्त हो सकती है। वह कमज़ोर भी पड़ सकती है तथा उस पर चिन्ह या धब्बे भी पड़ सकते हैं।

6.4 क्षतिग्रस्त ग्रन्थों एवं प्रलेखों की देखभाल

ग्रन्थ एवं प्रलेख किसी भी ग्रन्थालय का आधार स्तम्भ है। अगर इसकी सही देख-रेख होती भी है, लेकिन सुदृढ़ जिल्दबन्दी एवं पुनरुद्धार की व्यवस्था नहीं रहती है तो ये सारे बर्बाद हो जाते हैं इन्हें

निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है :

6.4.1 पुनरुद्धार एवं सुदृढ़ जिल्दबन्दी के लिए सामग्री और रासायनिक

इसे निम्नलिखित दो चरणों में बाँटा जाता है :

- पुनरुद्धार हेतु उपयोग में लाये जाने वाले रासायनिक तथा
- सुदृढ़ जिल्दबन्दी के लिए उपयोग में लाये जाने वाले रासायनिक

ग्रन्थ के ऊपर जब धब्बे दिखायी देते हैं तो इनके दो कारण होते हैं : (क) स्वाभाविक रूप से लगने वाले धब्बे एवं (ख) कीटाणुओं द्वारा लगने वाले धब्बे। कीटाणुओं द्वारा लगने वाले धब्बे को ही कवक कहते हैं। दोनों ही धब्बे ग्रन्थ के लिए नुकसान देह हैं। इन धब्बों को मिटाने के लिए दो तरह के रासायनिक उपयोग में लाये जाते हैं। साधारण धब्बे मिटाने हो तो फिनाइल अथवा पानी के रंग के रासायनिक पूर्ण उपयोगी होते हैं। अगर कीटाणुनाशक धब्बे मिटाने हों तो फ्यूमीगेशन की क्रिया के अन्तर्गत बहुत तरह के रासायनिक सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है जो निम्नलिखित हैं :

कैल्शियम हाइपोक्लोराइड, क्लोरोमाइन-टी, क्लोरीन, साइट्रिक एसिड, आक्जेलिक एसिड, हाइड्रोजन और सोडियम पेरोक्साइड, फार्मलडिहाइड, पोटैशियम बाइआक्जेलेट, सोडियम सल्फाइड, पोटैशियम पर बोरेट और परमैग्नेट।

सुदृढ़ जिल्दबन्दी भी अपने आप में महत्वपूर्ण है इसके लिए भी कई तरह की क्रियाएँ की जाती हैं जैसे, सटाई, सिलाई इत्यादि, जिसमें रासायनिक द्रव्यों का प्रयोग होता है। ये रासायनिक द्रव्य है तूतिया, ग्लीपसीन इत्यादि। ये कीटाणु रहित होते हैं तथा लेप को मजबूत और शुद्ध बनाते हैं, जिससे सुदृढ़ जिल्दबन्दी को बल मिलता है। पुनरुद्धार के लिए खासतौर पर टिशू पेपर का प्रयोग होता है। यह टिशू पेपर या तो उजले रंग का होता है अथवा रंगहीन होता है। इसके उत्पादन के समय ही विभिन्न रासायनिक द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है जिससे ताप और नमी से बचाव हो सके और रेशे पर भी किसी तरह का प्रभाव न पड़े। अगर टिशू पेपर नौ से बारह ग्राम वजन का है तो उसमें 6.0 PH रखने के लिए तेल का प्रयोग करना पड़ता है। इससे टिशू पेपर काफी मजबूत होता है और इससे रेशे भी प्रभावित नहीं होते। पुनरुद्धार के लिए वाक्सेड ऑयल बटर पेपर का भी प्रयोग किया जाता है। यह एक सहायक का काम करता है। यदि प्रलेख भारी हो तो चूँकि यह पानी को सोखने वाला होता है तथा काफी टिकाऊ होता है। इसका मुख्य कारण इसमें प्रचुर मात्रा में तेल का मिलाना तथा सूखने वाले पाउडर का मिलाना होता है। यह प्रलेख के ऊपर धब्बे भी नहीं लगने देता और सूचनाएँ भी स्पष्ट दिखायी देती है।

पुनरुद्धार के काम में सिफान का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह शुद्ध और उजले रंग का कपड़ा है जो रेशमी धागों से बना होता है। इसके द्वारा भी मरम्मत का काम किया जाता है। इसमें भी प्रलेख बिल्कुल सुरक्षित रहता है तथा सूचनाएँ स्पष्ट रूप से दिखायी देती हैं।

मरम्मत के लिए हाथ से बने कागज एवं ग्रेड ब्राउण्ड पेपर का भी उपयोग किया जाता है क्योंकि आर्द्रता इसमें 6.0 प्रतिशत या उससे कम ही होती है और इसमें रेशे 88 प्रतिशत तक लम्बे होते हैं। एक लम्बी अवधि तक इसके रंग में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है क्योंकि इसके उत्पादन के समय भी रासायनिक द्रव्य के रूप में तेल का समुचित मात्रा में प्रयोग किया जाता है।

पॉलिस्टर फिल्म भी ग्रन्थेत्तर सामग्री के रूप में काफी प्रसिद्ध है। खासतौर पर जब प्रलेख बिल्कुल बेकार हो जाता है अथवा यों कहें सामान्य पुनरुद्धार से बाहर चला जाता है तो पॉलिस्टर सीट का उपयोग किया जाता है। इस काम के लिए ताप चापक यंत्र तथा कोटिंग एडहेसिव का प्रयोग किया

जाता है इसमें प्रलेख से बड़े आकृति का पॉलिस्टर सीट ले लिया जाता है और बीच में प्रलेख को रखकर कोटिंग एडहेसिव लगाते हुए ताप चापक यंत्र के अन्तर्गत कुछ क्षणों तक दबा दिया जाता है। चूँकि ये पॉलिस्टर शीट पारदर्शी होते हैं इसी वजह से प्रलेख की विषय-वस्तु स्पष्ट दिखाई देती है किन्तु अधिकांशतः एक बार इस क्रिया को करने के बाद इसकी पुनरावृत्ति सम्भव नहीं है। बोलचाल की भाषा में इसे लेमिनेशन कहते हैं।

मरम्मत के लिए सामग्री

- टिशु पेपर
- वाक्सेड ऑयल पेपर
- सिफान
- हाथ से बने कागज और ग्रेड बाउण्ड पेपर
- पॉलिस्टर फिल्म

6.4.2 सफाई एवं धब्बे मिटाने वाले रासायनिक

ग्रन्थालय सामग्रियों के ऊपर जो दाग-धब्बा लगता है यह आम सी बात है। इससे भी ग्रन्थालय सामग्री क्षतिग्रस्त हो जाती है। इसी वजह से ड्राई वाश की जरूरत पड़ती है। ग्रन्थालय सामग्री के ड्राई वाशिंग करने के लिए निम्नलिखित रासायनिकों की जरूरत पड़ती है :

- एसिटोन
- बेंजीन
- पेट्रोलियम इथर
- ट्राइक्लोरोइथलिन इत्यादि

जब भी ग्रन्थालय प्रलेख के ऊपर रंग दूसरे चीजों के धब्बे दिखायी पड़ते हैं तब इसके ऊपर ड्राई वाशिंग की जरूरत होती है। रूई अथवा स्पंज के फोहे के सहारे उपरोक्त रासायनिक द्रव्य मिलाकर सफाई की जाती है। सामान्यतः यह धब्बे मिट ही जाते हैं।

यदि धब्बे स्थायी रूप धारण कर लेते हैं एवं वहाँ से मिटाना सम्भव नहीं होता ऐसी स्थिति में ब्लीचिंग की जरूरत होती है। ब्लीचिंग का अर्थ है भराई करना। इस काम के लिए निम्नलिखित रासायनिक पदार्थों का उपयोग किया जाता है : सल्फर, ऑक्सीजन, क्लोरीन इत्यादि। ये धब्बों के साथ प्रतिक्रिया करते हैं और यथासाध्य उसे मिटा देते हैं और यदि नहीं मिट सका तो उस स्थान पर स्थायी रंगहीनता के रूप में उसे भर लेते हैं। इस काम के लिए विशेष परिस्थिति में निम्नलिखित अन्य रसायनों का भी प्रयोग किया जाता है, जिससे कीटाणुयुक्त धब्बों को मिटाया जा सके :-

कैल्शियम हाइपो क्लोराइड, क्लोरोमाइन-टी, साइट्रिक एसिड, आक्जेलिक एसिड, हाइड्रोजन और सोडियम पेरोक्साइड, फार्मल-डिहाइड, पोटेशियम बाई-आक जेलेट, सोडियम सल्फाइड, पोटेशियम परबोरेट और परमैग्नेट।

6.3.3 आवरण पृष्ठ को चमकदार बनाने वाले रासायनिक

ग्रन्थालय सामग्री में आवरण पृष्ठ का महत्व परिरक्षण एवं संरक्षण दोनों ही दृष्टिकोण से रहा है। आवरण कितने तरह का होता है, और इसका उपयोग क्या है? इसकी विस्तृत विवेचना की जा चुकी है। इन आवरण पृष्ठों को विभिन्न रासायनिकों द्वारा आकर्षक, मजबूत और चमकीला बनाया जाता है। इसे अलंकरण की प्रक्रिया भी कहते हैं। जिल्दबन्दी उद्योग इसी कारण प्लास्टिक उद्योग से जुड़

109

गया है। ग्रन्थों के किनारों को बचाने के लिए तथा उसे टूटने-फूटने से सुरक्षा प्रदान करने के लिए भी विभिन्न प्रकार के रासायनिकों का उपयोग होता है। ये रासायनिक मुख्यतः निम्नलिखित है :

- पोलिविनाइल क्लोराइड
- नाइट्रो सेल्यूलोज
- पोलियोर इथेन
- पोलिक्रा इलटेस
- पोलिमाइडस

उपर्युक्त रासायनिक द्रव्य बहुत सावधानी से उपयोग में लाये जाते हैं क्योंकि इनकी प्रतिक्रिया भी उतनी ही तेजी से होती है। कुछ ऐसे चमकाने वाले पदार्थ हैं जिसमें खास तरह के वर्णित रासायनिक द्रव्यों को मिला देने पर काफी उपयोगी सिद्ध होते हैं। ये रंगों को आकर्षक और स्थायी बनाते हैं, उन्हें चमक प्रदान करते हैं तथा उनपर कीटाणुओं के आक्रमण होने से भी बचाते हैं। ये सभी ऐसे रासायनिक तत्वों से बने होते हैं जिनमें प्राकृतिक चमक होती है जैसे मरकरी, आर्सेनिक, सल्फर इत्यादि। चमकीला बनाते समय रासायनिक द्रव्यों के अन्तर्गत इन्हें समुचित मात्रा में मिला दिया जाता है।

खासतौर से जब आवरण के ऊपर चमड़े का प्रयोग होता है तब इन रासायनिक द्रव्यों का भी उपयोग जरूरी हो जाता है क्योंकि यह इसे टूटने-फूटने से तो बचाते ही हैं इसमें आर्द्रता की मात्रा को भी कम करते हैं।

उनको सुखाने और तैलीय बनाने में भी सहायक होते हैं। इस कार्य के लिए निमनिलिखित रासानिकों कार्ययोग किया जाता है :

- लेनोलिन
- बीसवाक्स
- कस्टर ऑयल इन हेक्सेन अथवा बेंजीन

पेट्रोलियम वाक्स भी तैलीय धब्बों को मिटाने में काफी उपयोग के यह आँत को सीधे नुकसान नहीं पहुँचाता। आर्द्रता से बचाने के लिए सब्जियों के छिल्के में क्रीग की उचित माचा मिलाकर भी चूर्ण तैयार किया जाता है जिसका उपयोग इसी काम के लिए किया जाता है। चमड़े के ऊपर आर्द्रता और धब्बे को हटाने के लिए सबसे खास घोल सोडियम बेंजोएट अथवा पोटेशियम लेक्टेट दोनों को समान मात्रा में मिलाकर तैयार किया जाता है और उसे चमड़े के बने आवरण पर लगाया जाता है। अल्कलाइन का उपयोग भी चमड़े के ऊपर से धब्बा मिटाने तथा उसे मुलायम होने से बचाने के लिए किया जाता है। जिस समय चमड़े का उत्पादन आवरण पृष्ठ के लिए किया जाता है, उसी समय किया जाता है। इन रासायनिकों का उपयोग हमेशा चमड़े को प्राकृतिक चमक प्रदान करती है और मजबूत बनाये रखती है।

6.5 निष्कर्ष (Conclusion)

ग्रन्थालय सामग्री टिकाऊ, चमकदार और अधिक दिनों तक चलने वाली होना चाहिए। यह तभी सम्भव हो पायेगा जब उसे टूटने-फूटने और उसपर दाग-धब्बे पड़ने या कीटों के प्रकोप से बचाने का कार्य क्रमिक रूप से किया जाय। इस कार्य के लिए आधुनिक युग में विभिन्न प्रकार के रासायनिक

अपना अलग-अलग महत्व रखते हैं। रासायनिक द्रव्य ऐसे पदार्थ हैं जिसकी क्रिया और प्रतिक्रिया उपयोग की मात्रा पर निर्भर है। समुचित मात्रा में उपयोग करने पर यह जिस तरह की क्रिया के द्वारा सामग्री को सुरक्षित रख सकता है, ठीक उसी प्रकार अपनी प्रतिक्रिया के द्वारा सामग्री को पूर्णतः क्षतिग्रस्त भी करता है। इस इकाई के अन्तर्गत किस कार्य के लिए कौन से रासायनिक कितनी मात्रा में उपयोग में लाना है इसका वर्णन किया गया है। यह ध्यान देने की बात है कि इन रासायनिकों के उपयोग से पहले एक ग्रन्थालयी ग्रन्थ अथवा प्रलेख के भौतिक पक्ष की जाँच जरूर करें। दूसरे चरण में क्षतिग्रस्तता के कारणों की जाँच अवश्य कर लें। इन दोनों चरणों को समाप्त करने के उपरान्त ही रासायनिक का समुचित मात्रा में उपयोग करना चाहिए। इन बातों को ध्यान में रखकर ही एक-एक पक्ष का वर्णन किया गया है कि सामग्री एवं रासायनिक दोनों ही मानक के अनुसार उपयोग में लाया जाये इसके अतिरिक्त भौतिक सामग्री के उत्पादन के समय से ही इसका ध्यान रखा जाय।

उपरोक्त विभिन्न चरणों का क्रमिक रूप से ध्यान रखकर ही एक ग्रन्थालयी अपने ग्रन्थालय को सफलतापूर्वक सुरक्षित रख सकता है।

इकाई 7 : ग्रन्थालय प्रलेखों की जिल्दबन्दी के विभिन्न प्रकार DIFFERENT TYPES OF BINDING OF LIBRARY DOCUMENTS

संरचना

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 जिल्दबन्दी

7.3 जिल्दबन्दी का वर्गीकरण

- 7.3.1 टांकेकरण की प्रक्रिया के आधार पर व्यावहारिक वर्गीकरण
- 7.3.2 आवरण सामग्री के आधार पर व्यावहारिक वर्गीकरण

7.4 केसिंग और जिल्दबन्दी

- 7.4.1 केसिंग
- 7.4.2 जिल्दबन्दी
- 7.4.3 केसिंग और जिल्दबन्दी का तुलनात्मक अध्ययन

7.5 विभिन्न प्रकार के ग्रन्थालय सामग्री की जिल्दबन्दी

- 7.5.1 पम्पलेट की जिल्दबन्दी
- 7.5.2 ग्रन्थ की जिल्दबन्दी
- 7.5.3 पत्र-पत्रिकाओं की जिल्दबन्दी
- 7.5.4 पाण्डुलिपियों की जिल्दबन्दी
- 7.5.5 मानचित्र की जिल्दबन्दी

7.6 निष्कर्ष

7.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई को पढ़ने के बाद निम्नलिखित बातों की जानकारी प्राप्त होगी :

- जिल्दबन्दी करतो समय कौन-कौन से चरण आते हैं ?
- जिल्दबन्दी प्रक्रिया के मुख्य प्रकार कौन-कौन से हैं ?
- केसिंग क्या है ?
- केसिंग और जिल्दबन्दी में क्या अन्तर है ?
- जिल्दबन्दी के लिए किन-किन सामग्रियों को काम में लाया जाता है ?

- ग्रन्थालय सामग्री जिल्दबन्दी के अनुसार कितने तरह के होते हैं ?
- विभिन्न प्रकार के ग्रन्थालय सामग्री के जिल्दबन्दी का विस्तृत विवेचन ?

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

जिल्दबन्दी एक कला है। ग्रन्थ जिल्दबन्दी का अर्थ है मुद्रित पृष्ठों को ग्रन्थीय्र रूप देने के लिए सही क्रम में सजाकर आवरण के अन्दर सुरक्षित रूप से रख देना है। जिल्दबन्दी सभी पृष्ठों को एक साथ मिलाता है, उन्हें टूटने-फूटने से बचाता है और उपयोग में उसे सरल बनाता है। जिल्दबन्दी ग्रन्थ को नया जीवन प्रदान करता है। देखने में खराब ग्रन्थ जिल्दबन्दी के बाद सुन्दर दिखाई देने, लगता है तथा पाठक को आकर्षित करता है।

अंग्रेजी शब्द क्राफ्ट के लिए हिन्दी में शिल्पकला का प्रयोग किया जाता है। शिल्प का अर्थ है हाथ का काम। किसी भी मानवोपयोगी सामग्री को लाभदायक और इच्छित रूप में बदल कर सुन्दर तथा उपयोगी बना देने की क्रिया को शिल्पकला कहते हैं। शिल्पकला के कई प्रकार हैं जैसे :काष्ठ शिल्प, धातु शिल्प, कटाई-बिनाई शिल्प, चर्म शिल्प, कृषि शिल्प, गृह शिल्प, ग्रन्थ शिल्प इत्यादि। ग्रन्थ शिल्प के व्यावहारिक भाग को ही जिल्दबन्दी कहते हैं।

"ग्रन्थ की जिल्दबन्दी" और "ग्रन्थालय जिल्दबन्दी" दोनों में अन्तर हैं। ये एक दूसरे से पूरी तरह भिन्न हैं। ग्रन्थों की जिल्दबन्दी का मतलब है ग्रन्थालय प्रलेख या ग्रन्थालय में उपलब्ध किसी भी तरह के कागजी प्रलेख को सही क्रम में एकत्र कर आवरण के अन्तर्गत रखना है। इसमें बहुत तरह की सामग्री और प्रक्रिया सम्मिलित हैं। सामान्य भाषा में जिस जिल्दबन्दी को लोग जानते हैं वह यही है। दूसरी तरफ "ग्रन्थालय जिल्दबन्दी" एक खास तरह की जिल्दबन्दी है जो मानक द्वारा निर्धारित सामग्री से ही किया जा सकता है और मानक द्वारा निर्धारित प्रक्रिया को ही अपनाया जा सकता है। भारत में सुदृढ़ जिल्दबन्दी को ही ग्रन्थालय जिल्दबन्दी कहा जाता है।

ऊपर जो वर्णन किया गया है उसके आधार पर कुछ ऐसे विन्दु हैं जिनपर विचार करना जरूरी है। एक ग्रन्थालय में कई तरह की ग्रन्थीय सामग्री होती हैं जैसे : पत्रिका, बुलेटिन, समाचार पत्र, मानचित्र एवं अन्य। इनमें ग्रन्थों की आकृति भी अलग-अलग होती है और ग्रन्थों का महत्व भी अलग-अलग होता है। इस आधार पर किस ग्रन्थालय सामग्री के लिए कौन सा जिल्दबन्दी होनी चाहिए यह एक विचारणीय प्रश्न है। सामान्यतया प्रकाशक अपनी ओर से इसे ग्रन्थीय रूप देकर भेजता ही है। जिसे जिल्दबन्दी भी कहा जा सकता है। अतः ऐसी स्थिति में एक ग्रन्थालयी अपने ग्रन्थालय सामग्री को या तो पुर्नजिल्दबन्दी करवाता है या तो सुदृढ़ जिल्दबन्दी। मुद्रण कला के आविष्कार के पहले भारत में तालपत्रों तथा भोजपत्रों पर जो ग्रन्थ लिखे जाते थे उन्हें काठ के दो तख्तियों के बीच रखकर बाँध दिया जाता था। काठ की तख्तियाँ उस जमाने में उन ग्रन्थ के लिए जिल्द का काम करती थी। वस्तुतः जिल्दबन्दी का ज्यादा विस्तार मुद्रण कला के बाद ही हुआ।

7.2 जिल्दबन्दी (Binding)

ऊपर जो व्याख्या की गयी है उससे यह स्पष्ट होता है कि जिल्दबन्दी की प्रक्रिया के अन्तर्गत ग्रन्थ के सभी पृष्ठ को एक क्रम में रखा जाता है। भारत में आजकल अधिकांश तीन प्रकार के ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं 1. पहला डिमाई आठ पेजी 2., दूसरा रायल आठ पेजी 3. तीसरा डबल क्राउन सोलह पेजी। इसके अतिरिक्त कुछ ग्रन्थ सुपर रायल आठ पेजी में भी छपते हैं। सबसे पहले जिल्दबन्दी में मोड़ाई, जुज बाँधना तथा सिलाई का काम किया जाता है। जिन कागजों के विषय में ऊपर निर्देश हैं, उनके उतने पन्ने उस आकार के एक सीट कागज में होते हैं, जिस पर विषय वस्तु मुद्रित रहती है। ग्रन्थ के सभी पृष्ठ दोनों तरफ से मुद्रित रहते हैं। मुद्रण की प्रक्रिया को समाप्त होते

ही इसके पृष्ठों को मोड़ा जाता है। जहाँ से यह मोड़ने की क्रिया की जायेगी वहाँ से खाली छोड़ दिया जाता है। डिमाई आठ पेजी में पूरे आठ पन्ने अर्थात उसमें सोलह पृष्ठ होते हैं। इसे एक फोरम या सेकसन कहते हैं। जिल्दसाज सबसे पहले सही क्रम में इन पृष्ठों को सजाता है। प्रथम पृष्ठ से लेकर अंतिम पृष्ठ तक चिन्हित कर उसे मोड़ देता है और उस पर एक प्रकार का चिन्ह लगाता है जिसे "सिगनेचर" कहते हैं। यह फोरम अथवा सेक्सन अथवा सिगनेचर जब एक क्रम में लगा दिया जाता है तब उसे मिशिल उठाना अथवा एकंगीकरण कहते हैं। अब यह सिलाई के लिए पूरी तरह तैयार हो जाती है। यहाँ इसकी सिलाई कर दी जाती है और अपेक्षित आवरण के अन्दर इसे डाल दिया जाता है। सिगनेचर को निम्नलिखित चित्रों के द्वारा भी समझा जा सकता है ।

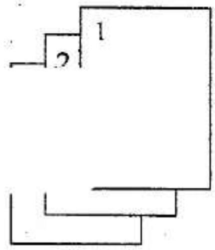

चित्र : सिगनेचर

7.3 जिल्दबन्दी का वर्गीकरण (Classification of binding)

उर्पयुक्त व्याख्या से यह स्पष्ट हो चुका है कि जिल्दबन्दी एक कला है। प्रकाशन के बाद जो ग्रन्थालय सामग्री ग्रन्थालय में आती है, वह धागे से लेकर चमड़े तक से बंधी रहती है। इसी वजह से जिल्दबन्दी को विस्तृत तौर पर निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटा गया है।

7.3.1 टांकेकरण की प्रक्रिया के आधार पर व्यावहारिक वर्गीकरण

जिल्दबन्दी करने में टांकेकरण या सिलाई का सबसे पहला स्थान है। चूँकि तकनीकी के अनुसार जिल्दबन्दी की सिलाई के लिए जो धागे और अवधि का उपयोग किया जाता है, उसके आधार पर जिल्दबन्दी को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा गया है :

- वायर स्टिचिंग जिल्दबन्दी
- एडहेसिव एप्लाइड जिल्दबन्दी
- सेक्सन स्टिचिंग जिल्दबन्दी

वायर स्टिचिंग जिल्दबन्दी : जब ग्रन्थालय में पम्पलेट की भाँति की सामग्री आती है, जिसके लिए प्रकाशक इसी जिल्दबन्दी का उपयोग करता है। पम्पलेट के पृष्ठ छोटी आकृति के होते हैं। इसी वजह से सभी पृष्ठों को एक क्रम में लगा दिया जाता है और सीधी सिलाई कर दी जाती है या नत्थी

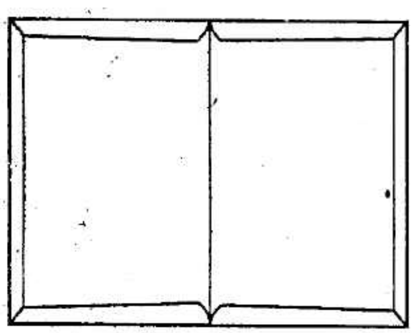

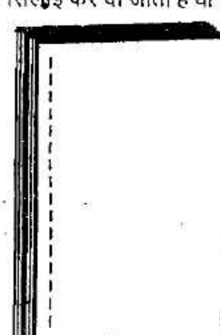

कर दी जाती है और उसके ऊपर से कागज का साधारण आवरण दे दिया जाता है लेकिन अगर यह पम्पलेट अनेक पृष्ठों का होता है तो बीच के पृष्ठों की सिलाई करते हुए पुनः किनारे से सिलाई भी आवश्यक हो जाती है। जब नत्थी करते हैं तो इसमें प्रयोग किये जाने वाले तार कॉपर या स्टील के बने होते हैं। यह काफी महँगे होते हैं और एक सीमित समय तक ही एक सेक्सन को सुरक्षित रख सकते हैं। इसे आसानी से खोला भी नहीं जा सकता है और उसके रख-रखाव में भी कठिनाई होती है। यह कागज पर भी अपना प्रभाव डालता है। इसी वजह से एक ग्रन्थालयी को इसकी उपयोगिता के अनुसार पुर्नजिल्दबन्दी करवाना भी आवश्यक हो जाता है। इसे निम्नांकित चित्रों के द्वारा भी समझाया जा सकता है :

एडहेसिव एप्लाइड जिल्दबन्दी

इसे चिपकने वाली जिल्दबन्दी भी कहा जाता है। आधुनिक युग में यह जिल्दबन्दी काफी तेजी से आगे बढ़ रही है। इस जिल्दबन्दी में सिलाई का काम नहीं होता है। मोड़ने के बाद सभी सीटों को एकत्र कर लिया जाता है और पीछे से इसे काट दिया जाता है जिससे यह एकल पत्तियों के रूप में बदल जाता है। इन बदली हुई पत्तियों को चिपकाने वाली मशीन से लेई या अन्य चिपकने वाली सामग्री से आपस में चिपका दिया जाता है। इस तरह इसका प्रत्येक पृष्ठ स्वतंत्र होता है और इसे खोलने में आसानी रहती है। अतः इसे आसानी से उपयोग में लाया जाता है। यह कम खर्चीला होता है। इसके द्वारा जिल्दबन्दी की गयी ग्रन्थ में खासतौर पर चिपकाने के क्रम में पॉलियर ग्लूज का उपयोग किया जाता है। चूँकि यह कम खर्चीला है इसीलिए अधिकांश प्रकाशक इसी तरह जिल्दबन्दी का उपयोग करते हैं। यह आधुनिक युग में प्रकाशकों के लिए 'वरदान' है, जहाँ वृहद मात्रा में ग्रन्थ छपते हैं और जिल्दबन्दी की आवश्यकता है वहाँ प्रकाशक इसी सस्ती और सुलभ जिल्दबन्दी का उपयोग करते हैं, लेकिन ग्रन्थालय के लिए यह 'अभिशाप' है, क्योंकि न तो यह जिल्दबन्दी टिकाऊ होती है और न ही सुरक्षित। चिपकाने के क्रम में सभी पृष्ठ कमजोर पड़ जाते हैं और चिपकने वाली सामग्री भी कीटाणुओं के आकर्षण का कारण होते हैं। इसी वजह से एक ग्रन्थालयी को परिरक्षण और संरक्षण की दृष्टि से पुर्नजिल्दबन्दी की आवश्यकता पड़ती है; जिससे वे लम्बे समय तक ग्रन्थ को सुरक्षित रख सकें।

सेक्सन स्टिचिंग जिल्दबन्दी : इसे सिगनेचर स्टिचिंग जिल्दबन्दी भी कहा जाता है। इसमें मुड़ाई के क्रम में एकत्र करने के समय सिगनेचर लगा दी जाती है फिर उसे सही क्रम में रख दिया जाता है ओर सुई और धागे से इसकी सिलाई कर दी जाती है। एक सिगनेचर को दूसरे सिगनेचर से सुई एवं धागे के सहारे मिला दिया जाता है। पुनः इसके ऊपर से कड़ा आवरण बनाकर लगा दिया जाता है। इसमें आवरण और ग्रन्थ के बीच एण्ड पेपर और टेप का भी उपयोग किया जाता है। इस जिल्दबन्दी में कड़ा आवरण पृष्ठ हमेशा अपेक्षित है। सिलाई का काम भी एक सेक्सन से दूसरे सेक्सन तक किया जाता है, इसके लिए ग्रन्थ के स्पाइन पर चिन्ह लगा दिया जाता है और उन चिन्हों पर टेप को चिपका दिया जाता है। इसके ऊपर आवरण पृष्ठ को चिपका दिया जाता है। वास्तव में सही अर्थ में जिल्दबन्दी इसे ही कहा जाता है। जिसका विस्तृत विवेचन आगामी इकाई में किया जायेगा। इसे निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से भी समझा जा सकता है :

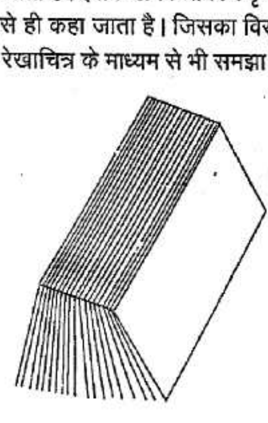

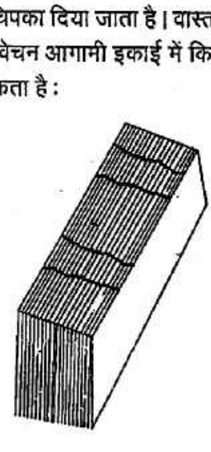

7.3.2 आवरण सामग्री के आधार पर व्यावहारिक वर्गीकरण

आवरण सामग्री के आधार पर जिल्दबन्दी के निम्नलिखित प्रकार हैं:

- साफ्ट कवर जिल्दबन्दी
- हार्ड कवर जिल्दबन्दी

साफ्ट कवर जिल्दबन्दी : आवरण को दफ्ती या गत्ता भी कहा जाता है। यह दो प्रकार की होती है, मोटी और पतली। जब आवरण के रूप में पतली और कोमल सामग्री का उपयोग किया जाता है तब इसे साफ्ट कवर जिल्दबन्दी कहते हैं। पम्पलेट का प्रकाशक इसी तरह की जिल्दबन्दी करते हैं। इसमें मुलायम कागज के रंगीन और आकर्षक सीट को आवरण के रूप में नत्थी कर दिया जाता हे।

जिस तरह प्रकाशक के द्वारा एडहेसिव जिल्दबन्दी का उपयोग बहुत तेजी से हो रहा है उसी तरह प्रकाशक के द्वारा आज के युग में इस जिल्दबन्दी का वृहद पैमाने पर उपयोग हो रहा है, क्योंकि यह सस्ती और आकर्षक होती है। निम्नस्तर के उपन्यासों, छोटे-छोटे ग्रन्थों और छात्र संस्करण ग्रन्थों के लिए इसका उपयोग बहुत तेजी से हो रहा है।

इस तरह की जिल्दबन्दी करते समय प्रारम्भिक प्रक्रिया के तहत आकर्षक रंगों वाली मुलायम कागज का एकल सीट लिया जाता है और उसे ग्रन्थ की आकृति के अनुकूल मापकर काट लिया जाता है। स्पाइन बीच में रखकर दोनों तरफ से मोड़ दिया जाता है और चिन्हित कर दिया जाता है। उसके बीच ग्रन्थ के सभी सेक्सन को रख दिये जाते हैं और बाद में इसे नत्थी कर दिए जाते हैं या चिपका दिए जाते हैं, जो सुदृढ़ जिल्दबन्दी से मिलते-जुलते हैं।

प्रकाशक के दृष्टिकोण से यह बहुत सुविधाजनक है लेकिन ग्रन्थालयी के लिए यह काफी असुविधाजनक है क्योंकि यह भौतिक रूप से अत्यन्त कमजोर होती है, जिससे उपयोग करने के दौरान ग्रन्थ की आयु कम हो जाती है। उपरोक्त स्थिति से बचने के लिए पुर्नजिल्दबन्दी जरूरी हो जाती है जिससे ग्रन्थों का परिरक्षण तथा संरक्षण लम्बे समय तक हो सके। इसे भी निम्नलिखित रेखा चित्रों के द्वारा भी अच्छी तरह से समझा जा सकता है :

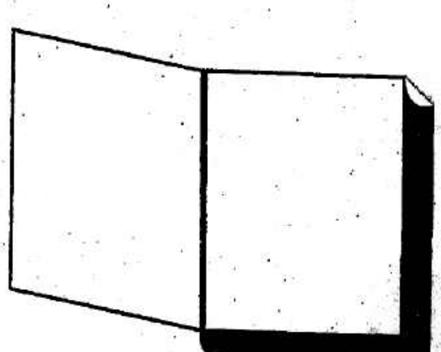

हार्ड कवर जिल्दबन्दी : जिल्दबन्दी में आवरण पृष्ठ का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। आवरण पृष्ठ में जब मोटे और मजबूत बोर्ड का उपयोग किया जाता है तो इसे हार्ड कवर जिल्दबन्दी कहते हैं। हार्ड बोर्ड निम्नलिखित प्रकार का होता है :

- **स्ट्राव बोर्ड:** यह पुआल या घास से तैयार किया जाता है जो तुलनात्मक रूप से सस्ता होता है। इसका उपयोग भी हमेशा छोटे-छोटे और सस्ते ग्रन्थों के लिए होता है।

- **मिल बोर्ड** : यह जूट, कपास या चित्थड़ों से तैयार किया जाता है, यह भी तुलनात्मक रूप से सस्ता होता है।
- **ग्रे बोर्ड** : यह अच्छे किस्म के घास से तैयार किया जाता है जो तुलनात्मक रूप से उपर्युक्त दोनों बोर्डों से मजबूत होता है।
- **स्पलाइट बोर्ड** : यह भी जूट, कपास या उच्च श्रेणी के घास से तैयार किया जाता है। यह सबसे मजबूत बोर्ड है जिसका उपयोग सुदृढ़ जिल्दबन्दी के लिए किया जाता है।

उपरोक्त जिल्दबन्दी की विधियाँ निम्नलिखित हैं :

- सर्वप्रथम बोर्ड के दो टुकड़ा किए जाते हैं और उसे ग्रन्थ के सामने और पीछे से नापकर ग्रन्थ की आकृति से दो इंच बड़े आकृति में काट लिया जाता है और दोनों के बीच सभी पृष्ठों को रख दिया जाता है और उसके बाद सुई और धागे से उसकी सिलाई की जाती है और फिर इसके ऊपर से टेप चिपका दिया जाता है। बोर्ड और ग्रन्थ के बीच एण्ड पेपर चिपका दिया जाता है।
- दूसरे क्रम में ग्रन्थ और बोर्ड दोनों एक दूसरे से बंधे होते हैं, उसके बाद इस बोर्ड के ऊपर चमड़े, कपड़े, रैक्सीन, प्लास्टिक, या पॉलिस्टर से बने आकर्षक आवरण पृष्ठ को चिपका दिया जाता है और पुनः इसे स्टाइलस अथवा मशीन के अन्दर दबा दिया जाता है।
- आवरण पृष्ठ में जिस सामग्री का उपयोग किया जाता है उसके आधार पर भी जिल्दबन्दी को निम्नलिखित प्रकारों में बाँटा जाता है, जैसे:

क) **पूर्ण चमड़ा जिल्दबन्दी** : पूर्ण चमड़ा जिल्दबन्दी का तात्पर्य यह है कि आवरण पृष्ठ में पूर्णतः चमड़े का उपयोग किया गया हो और उसी से ग्रन्थ का किनारा बाँधा गया हो अर्थात सम्पूर्ण आवरण पृष्ठ चमड़े का हो।

ख) **अर्द्ध चमड़ा जिल्दबन्दी** : जब आवरण पृष्ठ के आधे भाग में चमड़े का उपयोग किया जाता है और शेष भाग में कपड़े या कागज का उपयोग किया जाता है तब इसे अर्द्ध चमड़ा का जिल्दबन्दी कहते हैं। इस तरह के जिल्दबन्दी में बोर्ड के पीछे तथा कोने का भाग चमड़ा से ढका रहता है।

ग) **पूर्ण कपड़ा जिल्दबन्दी** : चमड़े की पूर्ण जिल्दबन्दी की तरह ही कपड़े की पूर्ण जिल्दबन्दी है जो ग्रन्थ के बोर्ड को पूरी तरह से कपड़े से ढकी रहती है। उच्च श्रेणी के ग्रन्थों और धार्मिक ग्रन्थों के लिए यह जिल्दबन्दी की जाती है।

घ) **अर्द्ध कपड़ा जिल्दबन्दी** : इस तरह की जिल्दबन्दी में ग्रन्थ के बोर्ड के पीछे का भाग और कोना कपड़े से ढका रहता है और शेष भाग में कागज ही रहता है।

ङ) **चौथाई जिल्दबन्दी** : चौथाई जिल्दबन्दी में कपड़ा या चमड़ा ग्रन्थ के बोर्ड के चारों कोनों पर रहती है और बीच के भाग में कागज ही रहता है। इसे निम्नलिखित रेखा चित्रों के माध्यम से समझा जा सकता है :

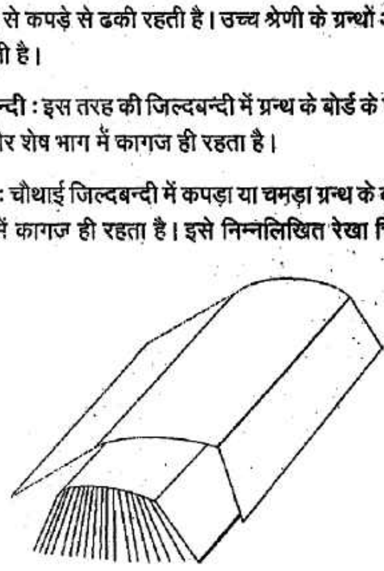

7.4 केसिंग और जिल्दबन्दी

केसिंग : केसिंग सामान्यतया प्रकाशक जिल्दबाजी या केसिंग जिल्दबन्दी या संस्करण जिल्दबन्दी कहा जाता है। यह साधारण जिल्दबन्दी या अतिरिक्त जिल्दबन्दी या हाथ जिल्दबन्दी से बिल्कुल अलग है।

इस जिल्दबन्दी में आवरण केस के आकृति में अलग से बना लिया जाता है, उसके अन्तर्गत सभी सिगनेचर को अथवा सेक्सन को एकत्र कर टेप या चिपकने वाली सामग्री से चिपका दिया जाता है। ऊपर से सस्ते कागज को चिपका दिया जाता है और अन्त में इसे आवरण केस में चिपका दिया जाता है चूँकि यह सस्ती होती है और कम समय में तैयार होती है। इसी वजह से प्रकाशक संवर्ग इसी जिल्दबन्दी का उपयोग उच्च स्तर पर करते हैं। केसिंग कमजोर होता है। इसमें ग्रन्थ भी अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रह सकता है, इसी वजह से इसमें पुर्नजिल्दबन्दी की जरूरत पड़ती है इसे निम्नांकित चित्र के द्वारा भी समझा जा सकता है :

जिल्दबन्दी : केसिंग और जिल्दबन्दी की प्रक्रिया में काफी अन्तर है। जिल्दबन्दी के अन्तर्गत सभी सिगनेचर की सिलाई अलग-अलग की जाती है और इसमें इण्ड पेपर लगाकर चिपका दिया जाता है। आवरण को भी फीता के द्वारा मूल ग्रन्थ के साथ सिलाई कर दी जाती है और ऊपर से भी इसे चिपका दिया जाता है, जिसके कारण यह काफी मजबूत होता है। इसे निम्नलिखित रेखाचित्रों के माध्यम से भी समझा जा सकता है:

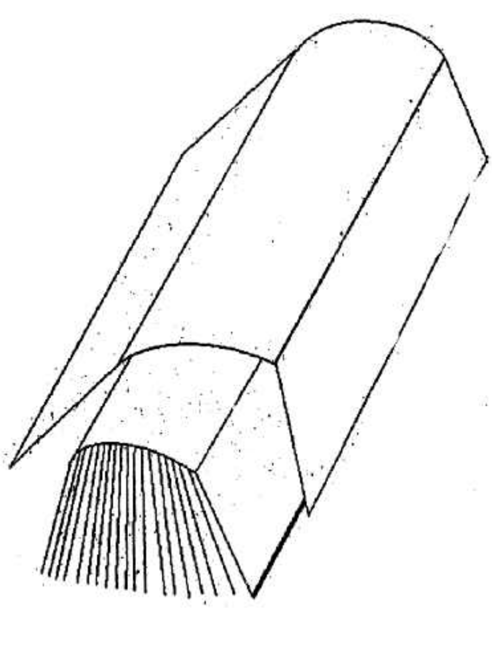

केसिंग और जिल्दबन्दी का तुलनात्मक अध्ययन

	केसिंग	जिल्दबन्दी
क)	आवरण बोर्ड को मात्र ऊपर से चिपका दिया जाता है, इसी वजह से यह ग्रन्थ का महत्वपूर्ण भाग नहीं होता।	जिल्दबन्दी में आवरण बोर्ड को ग्रन्थ के साथ पूरी तरह से सिल दिया जाता है। इसी वजह से यह ग्रन्थ का महत्वपूर्ण भाग होता है।
ख)	केसिंग में आवरण अलग और ग्रन्थ अलग होते हैं। इसी वजह से ग्रन्थालयी को पुर्नजिल्दबन्दी की जरूरत होती है।	जिल्दबन्दी पूरी तरह मानक विधि के द्वारा की जाती है, जिसके वजह से यह काफी मजबूत होती है और लम्बे समय तक चलती है।
ग)	कम लागत और अधिक लाभ के सिद्धांत के तहत केसिंग प्रकाशकों के लिए काफी लाभदायक है, क्योंकि मशीन से यह कम समय में आसानी से किया जा सकता है।	चूँकि जिल्दबन्दी का काम हाथ से किया जाता है, इसलिए इसमें खर्च और समय दोनों ही अधिक लगता है।
घ)	एक ही आख्या के अनेक प्रतियों की सीट के द्वारा जिल्दबन्दी की जाती है, जिसके वजह से एक साथ हजारों ग्रन्थ एक घंटे के अन्दर मशीन के द्वारा जिल्दबन्दी करके उपयोग के लिए तैयार हो जाती है। इसी वजह से इसे संस्करण जिल्दबन्दी अथवा प्रकाशक जिल्दबन्दी कहते हैं।	वास्तव में जिल्दबन्दी सुदृढ़ जिल्दबन्दी ही है, जिसके तहत पुर्नजिल्दबन्दी की जरूरत ही नहीं रहती क्योंकि यहाँ एक बार में एक ही वाल्यूम की जिल्दबन्दी सम्भव है।
ङ0)	परिरक्षण की दृष्टि से केसिंग कभी भी ग्रन्थ को लम्बी उम्र नहीं दे सकता है।	सुदृढ़ जिल्दबन्दी हमेशा ग्रन्थ को लम्बी उम्र देता है।

7.5 विभिन्न प्रकार के ग्रन्थालय सामग्री की जिल्दबन्दी

7.5.1 पम्पलेट की जिल्दबन्दी

ग्रन्थालय में पम्पलेट कई ग्रन्थ के रूप में आते हैं। यह हमेशा प्रकाशक की ओर से आता है। जिस पर आवरण पृष्ठ साधारण कागज का लगा होता है तथा वायर स्टिचिंग जिल्दबन्दी की हुई रहती है, जिसके कारण पृष्ठ तो एक-दूसरे से बंधे हुए रहते हैं, किन्तु इसे अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता। इसी वजह से इसे पुर्नजिल्दबन्दी की जरूरत पड़ती है। प्रारम्भ में इसे चौड़ाई के क्रम में सीसा अथवा गार्ड फाइल में कुछ समय तक रखा जाता है, किन्तु बाद में इसके लिएं सुदृढ़ जिल्दबन्दी आवश्यक हो जाती है। इस जिल्दबन्दी से मुक्त जिल्दबन्दी में पम्पलेट की वायर स्टिचिंग कर दी जाती है और सुविधानुसार इसे मोड़ दिया जाता है, उसके बाद सुई और धागे से इसकी सिलाई की जाती है। पुनः कठोर आवरण पृष्ठ लगाकर जिल्दबन्दी के काम को पूरा किया जाता है। इस तरह से यह काफी टिकाऊ हो जाती है।

7.5.2 ग्रन्थ की जिल्दबन्दी

ग्रन्थालय को ग्रन्थों का घर माना गया है। इसलिए इसकी जिल्दबन्दी ही महत्वपूर्ण है। ग्रन्थों की जिल्दबन्दी एक खास तरह की जिल्दबन्दी है, जिसमें मजबूत और आकर्षक सामग्रियों का प्रयोग

किया जाता है। यह ग्रन्थों को और मजबूत और टिकाऊ बनाती है, ग्रन्थालय में उपयोग होने वाले ग्रन्थों को मजबूत और टिकाऊ जिल्दबन्दी नहीं दी गयी तो वह अधिक दिन तक नहीं चल सकेगी। इस तरह की जिल्दबन्दी में मोड़ाई, एकत्रीकरण, सटाई, सिलाई, पोस्तीन चढ़ाना,छटाई किनारे की कटाई, चिपकाना, गोल करना, कोर या किनारी निकालना, गत्ते लगाना, आवरीकरण करना, अक्षराकन करना इत्यादि सभी आते हैं। खासतौर पर इस जिल्दबन्दी में फ्रेंच ज्वाइन्ट अथवा स्प्लिट बोर्ड का प्रयोग किया जाता है। आवरण बोर्ड कपड़े से ढका रहता है।

7.5.3 पत्र-पत्रिकाओं की जिल्दबन्दी

ग्रन्थालय में भाँति-भाँति की पत्रिकाएँ सामयिक प्रकाशन तथा पत्र इत्यादि आते हैं। इन सामग्रियों का अपना विशेष महत्त्व होता है, इसी वजह से एक ग्रन्थालयी का पुनीत कर्तव्य होता है कि वे इनको उचित सम्मान देते हुए परिरक्षण की दृष्टि से इनके जिल्दबन्दी की भी उचित व्यवस्था करें। कुछ महत्वपूर्ण निर्देश नीचे दिये जा रहे हैं :

	पत्रिका सामग्री के प्रकार	सिलाई	आवरण
क)	पत्रिका सामग्री हमेशा ही एक सामयिक महत्व ही रखती है। वैसे तो वह कई ग्रन्थ में निकलती है, किन्तु सभी ग्रन्थ एक समान महत्वपूर्ण नहीं होते और किसी ग्रन्थ की एक ही प्रति ग्रन्थालय में आती है जिसे वह उपयोगकर्ता को निर्गत भी नहीं कर सकता। ऐसी हालत में या तो उस प्रति का निजीकरण कर दिया जाता है या उसे अन्य ग्रन्थालय से अन्तर ग्रन्थालयी ऋण के द्वारा मँगवाया जाता है।	पत्रिका की सिलाई सिगनेचर सिलाई है तथा केसिंग जिल्दबन्दी ही इसके लिए उत्तम है।	इसके आवरण बोर्ड हमेशा पतले होने चाहिए, किन्तु आवरण के रूप में कपड़े अथवा मजबूत कागज का प्रयोग होना चाहिए।
ख)	ग्रन्थ का अलग-अलग उपयोग किया जाता है।	"	प्रत्येक ग्रन्थ का आवरण बोर्ड उपरोक्त ही होना चाहिए।
ग)	यदि वार्षिक रूप से सभी ग्रन्थ का एक साथ उपयोग किए जाते हैं तो	"	आवरण बोर्ड हार्ड होना चाहिए तथा आवरण पूर्ण चमड़े अथवा रैक्सीन का होना चाहिए।
घ)	त्रिवर्षीय अथवा पंचवर्षीय ग्रन्थपुटी का उपयोग एक साथ करना हो तो वह काफी वजनी हो जाता है।	"	इसमें भी हार्ड कार्डबोर्ड तथा पूर्ण चमड़े के आवरण का प्रयोग किया जाता है।

पत्र-पत्रिकाओं की जिल्दबन्दी इस बात को ध्यान में रखकर की जाती है कि उसके सभी पृष्ठ आसानी से खुल सकें और उसका उपयोग भी सरल और सुविधाजनक हो। यदि आवश्यकता पड़े तो उसका फोटोकॉपी भी आसानी से करवायी जा सके। यदि लगातार भी इसका उपयोग किया जा रहा हो तो भी जिल्दबन्दी कमजोर नहीं हो और सभी बाधाओं को झेल सके। इसके सभी ग्रन्थपुटी को एक साथ जमा कर लिया जाता है और उसके ऊपर के आवरण पृष्ठ को हटा दिया जाता है और सभी को एक समान क्रम में मिलाकर अर्द्धवार्षिक,वार्षिक,त्रिवार्षिक अथवा पंचवर्षीय रूप से जिल्दबन्दी कर दी जाती है। स्पाइन के ऊपर इच्छित रंग से पत्रिका का परिचय एवं वर्ष लिख दिया जाता है।

7.4.5 पाण्डुलिपियों की जिल्दबन्दी

सामान्यतया पाण्डुलिपियों की जिल्दबन्दी नहीं होती है। इसकी जिल्दबन्दी के लिए संग्रहालय का उपयोग किया जाता है। संग्रहालयों के द्वारा पहले तो इसकी सफाई और पुनरुद्धार किया जाता है। उसके उपरान्त इसे सिफान के कपड़े से लपेट कर रख दिया जाता है। कहीं-कहीं सिफान के कपड़ों का भी उपयोग किया जाता है, किन्तु यह उपयोगी नहीं होता है।

इसे अधिक समय तक टिकाऊ रखने के लिए शीशे के अन्दर डाल दिया जाता है। यह शीशा पारदर्शी होता है जो बिना हिलाये डुलाये इसे स्थिर रखता है तथा उपयोगकर्ता को भी इससे उपयोग करते समय आसानी होती है।

7.4.5 मानचित्र की जिल्दबन्दी

पाण्डुलिपियों की तरह इसकी भी जिल्दबन्दी सम्भव नहीं है। मानचित्र को सुरक्षा की दृष्टि से लपेट कर रखा जाता है। लपेटने के लिए कीटाणु रहित कागज, कपड़े अथवा लिनेन या कुस्लिन का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक काल में बहुत तरह के पॉलिस्टर सीट का प्रयोग किया जाता है। बड़े-बड़े मानचित्रों को सीसे के बोर्ड के अन्दर भी लगा दिया जाता हे। यह प्रयास किया जाता है कि अधिक से अधिक समय तक इसे सुरक्षित रखा जा सके।

7.5 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में जिल्दबन्दी के विभिन्न प्रकार और उसकी विभिन्न प्रक्रियाएँ इत्यादि की व्याख्या की गई है। वर्गीकरण का मुख्य आधार जिल्दबन्दी की प्रक्रिया को माना गया है। इसमें दो मूल बिन्दुओं पर ध्यान दिया गया है। पहला सिलाई की विधि पर तथा दूसरा आवरण बोर्ड के प्रकार पर। इन्हीं दोनों आधारों पर जिल्दसाजी के प्रकारों को दर्शाया गया है। केसिंग और जिल्दबन्दी की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए दोनों में सामान्य अन्तर को भी दर्शाया गया है। निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि ग्रन्थालय में आने वाले कई तरह की सामग्रियों के लिए अलग-अलग प्रकार पर विचार किया गया है।

इकाई 8 : जिल्दबन्दी हेतु प्रयुक्त सामग्री के प्रकार एवं प्रक्रियाएँ
VARIETIES OF BINDING MATERIALS AND BINDING PROCESS

संरचना

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 सिलाई सामग्री : धागा

8.3 सुदृढ़ जिल्दबन्दी हेतु सामग्री

- 8.3.1 बुकरम एवं धागा गेज
- 8.3.2 टेप और कोंड़
- 8.3.3 एण्ड पेपर और कागज का गार्ड

8.4 एडहेसिव

- 8.4.1 स्टार्च पेस्ट
- 8.4.2 डेक्सटराइन पेस्ट
- 8.4.3 ग्लू और जिलेटिन
- 8.4.4 सिन्थेटिक एडहेसिव

8.5 आवरण सामग्री (Covering Material)

- 8.5.1 बाहरी आवरण के लिए कागज
- 8.5.2 कपड़े एवं फेब्रिक पर आधारित उत्पादन

8.5.3 चमड़े

8.5 विभिन्न श्रेणी कें बोर्ड

8.6 सजावट की सामग्री

8.7 निष्कर्ष

8.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति के लिए अनेकों प्रयास किये जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में ग्रन्थालयी की सेवा अपना ही महत्व रखती है। इस इकाई को पढ़ने के बाद निम्नलिखित तथ्यों की जानकारी प्राप्त होगी :

- जिल्दबन्दी की प्रक्रिया का एक सामान्य आंकलन करना
- जिल्दबन्दी के क्रम में आनेवाले विभिन्न चरणों का ज्ञान होना
- जिल्दबन्दी में प्रयोग होने वाले विभिन्न सामग्रियों का विस्तृत ज्ञान होना
- इन सामग्रियों के उपयोग के सही उपयोग का ज्ञान
- एक ग्रन्थालयी के रूप में जिल्दसाज के साथ किस प्रकार से व्यवहार किया जाय उसका ज्ञान

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

मुद्रण कला के आविष्कार के बाद जिल्दबन्दी की दुनियाँ में क्रान्ति आई। प्रकाशक और मशीन दोनों ने इस क्षेत्र में भयंकर स्थिति पैदा कर दी। महत्वपूर्ण से महत्वपूर्ण ग्रन्थों का मशीन द्वारा केसिंग कर ग्रन्थालय में भेज दिया जाता है। चूँकि यह प्रकाशीय जिल्दबन्दी बहुत ही कमजोर होती है। मात्र इसका कागज ही आकर्षित करने वाला होता है। फलतः ग्रन्थ उपयोग में आते ही फटने लगते हैं। लेकिन आजकल इस नशीनी प्रक्रिया में सुधार लाया जा रहा है जिसे पिछले कई दशकों से देखा जा रहा है। स्वचालित मशीनें कम समय और कम दर पर ग्रन्थों का केसिंग कर देती है जो प्रकाशकों के लिए बहुत ही लाभदायक है। उदाहरण स्वरूप जिल्दबन्दी व्यवसाय के लिए जो मशीन आ रही है उसकी कीमत मात्र दस हजार रुपये हैं और वे एक दिन में डेढ़ लाख ग्रन्थों की केसिंग कर सकती है। इस प्रकार प्रकाशक जिल्दबन्दी व्यवसाय की दुनियाँ में लोकप्रिय है।

लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हाथ से की गई जिल्दबन्दी का महत्व कब हो गया है। जिस तरह केसिंग प्रकाशक के लिए महत्वपूर्ण है उसी तरह जिल्दबन्दी ग्रन्थालयी के लिए महत्वपूर्ण है। केसिंग एक ग्रन्थ को लम्बे समय तक सुरक्षित नहीं रख सकता लेकिन हाथ से की गई जिल्दबन्दी लम्बे समय तक ग्रन्थ को सुरक्षित रख सकती है। ग्रन्थालय में आने वाले ग्रन्थ के लिए जरूरी है कि उसका पुनःजिल्दबन्दी हाथ से किया जाय और मशीन का प्रयोग कम से कम किया जाए। केसिंग के वजह से ही एक ग्रन्थालयी, ग्रन्थों, पत्रिकाओं और सामयिक प्रकाशनों के लिए पुर्नजिल्दबन्दी की दुनियाँ से पूर्णरूप से जुड़ गया है। महत्वपूर्ण ग्रन्थों और पत्रिकाओं के लिए सुदृढ़ जिल्दबन्दी बहुत जरूरी हो गयी है। क्योंकि इसकी मूल जिल्दबन्दी उपयोग करने के साथ ही बिखरने लगती है। इसी वजह से अलग-अलग जिल्दबन्दी सभी ग्रन्थपुटी के लिए जरूरी हो गयी है।

एक ग्रन्थालयी के लिए ग्रन्थों का संरक्षण और परिरक्षण की जानकारी बहुत जरूरी है। इस इकाई में बहुत तरह के जिल्दबन्दी में प्रयुक्त होने वाले सामग्रियों की विवेचना की गई है। केसिंग के द्वारा आयी क्रान्ति के बावजूद हाथों से की जाने वाली जिल्दबन्दी का महत्व ज्यों का त्यों बना हुआ है। चार सौ वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुए जिल्दबन्दी की यह प्रक्रिया केसिंग के बढ़ते चरणों के कारण दिन-प्रतिदिन अपना महत्व और भी बढ़ाते जा रहे हैं। अतः यह भी बहुत जरूरी है कि इस काम के लिए सही सामग्री का उपयोग किया जाय। ये सही सामग्री क्या हैं? इसका विस्तृत विवेचन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्दर किया जा रहा है :

- सिलाई सामग्री
- सुदृढ़ जिल्दबन्दी सामग्री
- पेस्टिंग सामग्री
- आवरण सामग्री
- सजावट की सामग्री

6.2 सिलाई सामग्री : धागा

जिल्दबन्दी की जो प्रक्रिया होती है उसमें सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण स्थान धागे का है। यह धागा कई वस्तुओं से तैयार किया जाता है जैसे : रुई, नायलोन तथा रेशमी कपड़े आदि। वास्तव में जिल्दबन्दी की मजबूती या टिकना मूलतः धागे के श्रेणी पर निर्भर करता है। धागे का चुनाव करते समय निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना जरूरी है :

- जिल्दबन्दी में उपयोग किये जाने वाले धागे को न तो अधिक मोटा और न ही अधिक पतला होना चाहिए। यह पूरी तरह सेक्सन की मोटाई के अनुकूल होना चाहिए।
- धागों को सीते वक्त यह हमेशा ध्यान रहे कि सभी सेक्सन एक दूसरे के साथ जुड़ गये हों।
- पतले सेक्सन के लिए पतले धागे का प्रयोग करना चाहिए नहीं तो ग्रन्थपुटी सिलाई के समय ही क्षतिग्रस्त हो जायेंगे।
- मोटे ग्रन्थपुटी के लिए अपेक्षाकृत मोटे धागे का उपयोग होना चाहिए अन्यथा धागा ही टूट जायेगा और जिल्दबन्दी का कोई महत्व ही नहीं रहेगा।
- धागा को हमेशा गांठ रहित होना चाहिए।
- सामान्यतया धागे, लिनियन अथवा उच्च श्रेणी के कपास से बने धागे होना चाहिए।
- थ्री प्लाई से अधिक मोटे धागे का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिए। क्योंकि थ्री प्लाई का धागा ढाई किलोवजन तक आसानी से ढो सकता है और यह देखा गया है कि सामान्य ग्रन्थों का वजन इनके अन्दर ही होता है। मात्र संदर्भ ग्रन्थ अथवा शौध ग्रन्थ ही पाँच किलोग्राम वजन तक का हो सकता है। इनके वजन के अनुसार फोर और फाइव प्लाई का धागा लिया जाना चाहिए।
- धागा हमेशा मुलायम और फिसलने वाला होना चाहिए, जिससे ग्रन्थ सिलाई के बाद हमेशा उपयोगी बना रहे।
- सिलाई करते समय गांठ भी सही ढंग से लगाना चाहिए जिससे वह खुले नहीं।
- टांके भी न तो बहुत कसकर लगाना चाहिए और न ही ढीला।

सामान्यतया आधुनिक युग में सूती, लिनियन या सिल्क के धागे का उपयोग बहुत ही कम हो रहा है। धागे का ही निर्माण ही सिन्थेटिक फाइबर से हो रहा है। अतः अधिकांश जिल्दसाज इसका ही उपयोग कर रहे हैं। सामान्यतया यह धागा सूती अथवा लिनियन धागों से अधिक मजबूत टिकाऊ, फिसलने वाा, कोमल और समान मोटाई का होता है। यह धागा नमी और ताप और अन्य वातावरण प्रदूषण से बचा रहता है। यह काफी उपयोगी माना जा रहा है और जिल्दबन्दी के साथ-साथ परिरक्षण और संरक्षण की दृष्टि से भी काफी उपयोगी सिद्ध हो रहा है। अतः एक ग्रन्थालयी के लिये जिल्दसाज को धागे का चुनाव करते समय पूर्ण सोच-समझकर निर्देश देना चाहिए।

8.3 सुदृढ़ जिल्दबन्दी हेतु सामग्री

सुदृढ़ जिल्दबन्दी के लिए निम्नलिखित सामग्रियों का होना आवश्यक है -

8.3.1 बुकरम एवं धागा गेज

सुदृढ़ जिल्दबन्दी के तहत यह ध्यान रखा जाता है कि ऐसे कार्ड बोर्ड का प्रयोग किया जाय जो लम्बे

समय तक चल सके। इसी वजह से इस कार्ड बोर्ड के ऊपर खासतौर पर जहाँ ग्रन्थ की स्पाइन आती है, उसके ऊपर ग्लू अथवा पेस्ट के सहारे से कड़े सूती कपड़े का छोटा भाग काट कर चिपका दिया जाता है। इसी सामग्री को धागा गेज कहते हैं। इसके रेशे काफी लम्बे समय तक बोर्ड को मजबूती से पकड़े रहते है। ठीक इसी तरह सुदृढ़ जिल्दबन्दी में एण्ड पेपर को भी मोड़कर कार्ड के साथ चिपका दिया जाता है। कार्ड बोर्ड और एण्ड पेपर के बीच कड़े सूती कपड़े भाग को काट कर लगा दिया जाता है अथवा सिल दिया जाता है। इसे ही बुकरम कहते हैं।

सूती कपड़े के रेशे काफी मुलायम और टिकाऊ होते हैं। इन दोनों कामों के लिए किस प्रकार या किस श्रेणी के कपड़े का उपयोग किया जाय इसके लिए भारतीय राष्ट्रीय संग्रहालय ने निम्नलिखित सारणी दिया है :

कपड़े का प्रकार	सूत की गिनती	मोटाई (लगभग)
लम्बे कपड़े	160	0.15 मिमी0
मलमल	160	0.10 मिमी0
गेज	40	0.15 मिमी0

ऊपर जो सारिणी दी हुई है उससे यह स्पष्ट होता है कि सुदृढ़ जिल्दबन्दी बहुत महत्वपूर्ण संस्करणों का किया जाता है। किसी भी जिल्दबन्दी में धागे, गेज अथवा बकरम का प्रयोग किया जाता है। इन महत्वपूर्ण ग्रन्थों में धागे गेज का प्रयोग ग्रन्थ के किनारों पर भी किया जाता है। कभी-कभी आवरण पृष्ठ के कोने-कोने पर भी इसका प्रयोग किया जाता है।

8.3.2 टेप और कोड

जिल्दबन्दी करने में टेप और कोड का भी महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसके द्वारा आवरण में प्रयुक्त होने वाले कार्डबोर्ड की सिलाई सेक्सन के साथ की जाती है। यह भी सामान्यतया लिनियन अथवा उच्च श्रेणी के सूती धागे से किया जाता है और यह हमेशा ही कीटाणु रहित प्रक्रिया से उत्पादन के समय ही शुद्ध कर दिया जाता है। कोड का चुनाव करते समय इसकी मोटाई का ध्यान रखना बहुत जरूरी है।

आधुनिक युग में धागे गेज, टेप या कोड को सिन्थेटिक रेशे से तैयार किया जा रहा है जो काफी लचीला, मुलायम, टिकाऊ और इच्छित आकृति की मोटाई लिए होता है। इसका उत्पादन भी बड़े पैमाने पर होता है और कीटाणु रहित होने के कारण ग्रन्थालयी का यह पुनीत कर्तव्य होता है कि जिल्दसाज को इसी टेप और कोड का उपयोग करने का निर्देश दें क्योंकि इसका उपयोग ग्रन्थ के एक हिस्से को दूसरे हिस्से से मिलाने के लिए किया जाता है अन्त में इसे आवरण के गत्ते से इसे चिपकाया जाता है, जो ग्रन्थालय जिल्दबन्दी का एक महत्वपूर्ण आधार है।

8.3.3 एण्ड पेपर और कागज का गार्ड

एण्ड पेपर का उपयोग अथवा गार्डिंग कागज को चढ़ाने की प्रक्रिया को पोस्तीन चढ़ाना कहते हैं। सिलाई के बाद ग्रन्थ के दोनों तरफ नपा हुआ कटा कागज चिपकाते हैं इसे ही एण्ड पेपर अथवा पोस्तीन कहते हैं। यह ग्रन्थ के भीतरी जोड़ का और स्तर का काम करता है तथा आख्या पृष्ठ की सुरक्षा भी करता है; इसी वजह से इसका कागज मोटा, मजबूत और मुलायम होना चाहिए। कटे-

फटे या कमजोर कागज का प्रयोग नुकसान देह है। आजकल इस कार्य के लिए रंगीन कागज का प्रयोग किया जा रहा है।

8.4 एडहेसिव

जिल्दबन्दी में एडहेसिव का भी एक अपना महत्वपूर्ण स्थान है। एडहेसिव जिल्दबन्दी की क्षमता को बढ़ाता है और अगर यह चिकना और कीटाणु रहित है तो परिरक्षण और संरक्षण की दृष्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण होता है। इसी वजह से इसका चिकना एवं दाग रहित होना बहुत जरूरी है। सामान्यतया निम्नलिखित प्रकार के एडहेसिव का उपयोग जिल्दबन्दी में किया जाता है।

8.4.1 स्टार्च पेस्ट

स्टार्च पेस्ट को बोल-चाल की भाषा में लेई कहा जाता है। यह जिल्दबन्दी करते समय जिल्दसाजों के द्वारा परम्परागत रूप से उपयोग में लायी जाती रही है। सामान्यतया यह मैदा या आटा में फिटकरी या नीला थोथा मिलाकर पानी में मिलाकर तैयार की जाती है। इसके साथ अगर तूतिया मिला दिया जाय तो कीड़ों का प्रकोप नहीं होता है, और चूहे भी जिल्द को नहीं काटते हैं। भारतीय राष्ट्रीय संग्रहालय के अनुसार लेई बनाने के लिए आटा या मैदा के साथ अन्य सम्मिश्रण को निम्नलिखित ढंग से बताया है। दो किलोग्राम आटा में दो या तीन प्रतिशत फोरमेलिन और एक से तीन प्रतिशत तक ग्लिसरीन मिलाना चाहिए अथवा दो या तीन प्रतिशत कॉपर सल्फेट मिलाकर पानी में इसे तैयार करना चाहिए और बाद में इसे धीमी आँच पर पकाना चाहिए। भारतीय मानक संस्थान ने भारतीय जिल्दसाजों के जरिए अपनी कौड संख्या : IS 3050 (1965) तथा IS 562 (1962) में जो श्रेणी निर्धारित किया है; वह निम्नलिखित है :

- लेई या गोंद में पाँच किलो आटा में पाँच प्रतिशत फोरमेलिन तथा पाँच से तीन प्रतिशत ग्लिसरीन मिलाकर धीमी आँच पर पकाना चाहिए। ठंढा हो जाने पर इसी का उपयोग करना चाहिए, क्योंकि यह हानि रहित होता हैं। भारतीय जिल्दसाज हमेशा इसी तरह के लेई का प्रयोग करते हैं क्योंकि यह सस्ती, उपयोग में आसान और मानव स्वास्थ्य के लिए भी हानिरहित होती है। कागज अथवा कपड़े को भी नुकसान नहीं पहुँचाती है। ठीक उसी तरह रैक्सीन, बकरम और चमड़े को भी नुकसान नहीं पहुँचाती। अभी तक इसके विकल्प के रूप में सही लेई नहीं बनायी जा सकी है, क्योंकि यह अम्ल रहित होती है कीटाणु रहित भी। जिल्दबन्दी का यह भी अभिन्न अंग है।

8.4.2 डेक्सटराइन पेस्ट

इस पेस्ट का उपयोग ग्रन्थों की मरम्मत के क्रम में किया जाता है। यह भी स्टार्च पेस्ट से मिलता-जुलता पेस्ट है, लेकिन कुछ सुधार होने की वजह से यह उससे ज्यादा उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इसको तैयार करने की निम्नलिखित विधि है :

डेक्सटराइन	2.5 किलोग्राम
वाटर	5.0 किलोग्राम
ऑयल ऑफ क्लोव्स	4.0 ग्राम
सेफरॉन	40 ग्राम
बेरियम कार्बोनेट	80 ग्राम

126

इसका मिश्रण बनाकर धीमें-धीमे आँच पर पकाना चाहिए और ठंढा हो जाने पर इसका उपयोग करना चाहिए।

8.3.3 ग्लू और जिलेटिन

सामान्य भाषा में इसे गोंद कहते हैं। ग्लू और जिलेटिन दोनों ही जानवरों द्वारा उत्पादित सामग्री है। एक जिल्दसाज़ जब अति उत्तम श्रेणी के ग्लू का उपयोग अपने जिल्दबन्दी में करता है तो उसे काफी आत्मीय संतोष मिलता है। ग्लू या जिलेटिन में थोड़ी सी मात्रा में फिनाल (कार्बोनिक एसिड) को मिला दिया जाता है और उसे ढीला करने के लिए धीमी आँच पर धीरे-धीरे पकाया जाता है, जिससे यह कीटाणु रहित हो जाता है। यह परिरक्षण और संरक्षण दोनों ही दृष्टिकोण से लाभदायक है। ठंढा होने पर इसका उपयोग किया जाता है। यह काफी महँगा होता है, जिसके वजह से जिल्दसाज इसका उपयोग महत्वपूर्ण ग्रन्थपुटियों के लिए ही करते हैं। आजकल तो ग्लू और जिलेटिन से गोंद बनाना व्यवसाय का रूप धारण कर लिया है। सर्वोत्तम गोंद अरब का माना गया है।

8.3.4 सिन्थेटिक एडहेसिव

सामान्य भाषा में इसे सरेस कहते हैं। अगर ग्रन्थ को लम्बी जिन्दगी देना हो तो सरेस का प्रयोग किया जाता है। यह न तो स्टार्च पेस्ट और न ही डेक्सटराइन पेस्ट का वैकल्पिक है। इसका अपना ही महत्व है क्योंकि इसका उपयोग ग्रन्थ की जिल्दबन्दी करते समय स्पाइन के ऊपर होता है। इसको लगाते समय यह ध्यान रखा जाता है कि यह गर्म रहे। गर्म सरेस ग्रन्थ पर चढ़ाये जाने वाले कपड़े को मजबूती से पकड़ लेता है और कभी भी उसे अपने से अलग नहीं होने देता है। उपर्युक्त सभी सामग्री का जिल्दबन्दी में एक महत्वपूर्ण स्थान है।

8.5 आवरण सामग्री

8.5.1 बाहरी आवरण के लिए कागज़

कागज का उपयोग जिल्दबन्दी में सबसे अधिक होता है। प्रकाशक की ओर से भी जो ग्रन्थ उत्पादित किया जा रहा है उसमें भी आवरण के रूप में आकर्षक और रंगीन कागज का प्रयोग किया जाता है। इस कागज को हल्के स्ट्राव बोर्ड के साथ चिपका दिया जाता है। इस काम के लिए जिस भी कागज का प्रयोग किया जाता हैं, वह मोटे तथा अति आकर्षक स्वरूप के होते हैं, जिसे इच्छित आकृति में काट लिया जाता है और उसके ऊपर ग्रन्थ के शीर्षक को चित्रमय प्रणाली से मुद्रित कर दिया जाता है। जहाँ तक कागज के रंग का प्रश्न है इसके संदर्भ में यह ध्यान रखना पड़ता है कि यह बहुत आकर्षक, चमकीला तथा आँखों को भाने वाला हो। अगर ग्रन्थालयी ग्रन्थों का दुबारा जिल्दबन्दी करवाता है तो वह इस कागज के ऊपर चमकीला स्याही से ग्रन्थ का परिचय लिखवा देता है। जिससे पाठक उपयोग करते समय खुद ही समझ जाए कि वह कौन सा ग्रन्थपुटी है। यदि आवरण पृष्ठ कपड़े का बना हुआ है तो भी एक चौथाई भाग में इस कागज का उपयोग होगा ही। यदि ऐसा सम्भव नहीं होता है तो पूरे ग्रन्थ के आवरण पर इस कागज को लगा दिया जाता है।

इस कार्य के लिए लिनसन नामक कागज सर्वोत्तम माना गया है, क्योंकि यह काफी मजबूत रेशों से बना हुआ होता है और हाथ के द्वारा उत्पादित कागज है। इसके ऊपर रंग कभी फैलता नहीं है, जिसके कारण इसके ऊपर एक से एक सुन्दर और इच्छित आकृति बनायी जा सकती है। वैसे तो यह कपड़े से बने आवरण की तरह ही दिखायी देता है, लेकिन तुलनात्मक रूप से कमजोर होता है। साधारण जिल्दसाज इस कार्य के लिए क्रॉफ्ट कागज का उपयोग करते हैं।

8.5.2 कपड़े एवं फेब्रिक पर आधारित उत्पादन

आवरण बोर्ड को ढकने के लिए कपड़े पर आधारित उत्पादन भी उपयोग में लाया जाता है। इस कार्य में रैक्सीन का भी उपयोग किया जाता है तथा रैक्सीन से मिलती-जुलती अन्य सामग्रियों का भी उपयोग किया जाता है। उपरोक्त सभी सामग्रियाँ चमड़े के वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में लाई गयी हैं जो काफी मजबूत और कीमती होती हैं। कपड़े से बना हुआ आवरण या रैक्सीन से बना हुआ आवरण दोनों ही धोने योग्य तैलीय पदार्थ को सोखने वाले, पानी से प्रभावित नहीं होने वाले, विभिन्न रंगों में विभिन्न आकृतियों में विभिन्न मोटाई के एवं मजबूत पाये जाते हैं।

कपड़ा या कपड़े से बना हुआ आवरण कितने दिनों तक चलेगा या कितना मजबूत होगा यह पूर्णतः निर्भर करता है कि उस कपड़े का रेशा कैसा है ? रैक्सीन की श्रेणी उत्पादन की प्रक्रिया में किसी प्रकार की कमी नहीं होने पर निर्भर करता है।

कपड़े अथवा रैक्सीन का आवरण तैयार करते वक्त यह ध्यान देना पड़ता है कि रंग आकर्षक हो तथा वह पूरी तरह से ढक रहा हो। जहाँ तक सम्भव हो वह स्टार्च पेस्ट से ढका हुआ हो। अगर स्टार्च पेस्ट मौजूद नहीं हो तो वर्तमान समय में एक दूसरा ही घोल ढकने के लिए तैयार किया जाता है। उसमें नाइट्रो सैल्यूलोज और कास्टर ऑयल का उपयोग किया जाता है। इस सन्दर्भ में वास्तविकता यह है कि वर्तमान समय में तरह-तरह के सिन्थैटिक रैक्सीन उपयोग के लिए उपलब्ध हो गये हैं। इसके ऊपर लेप लगाने के बाद इसे सुखा दिया जाता है, जिससे वह कीटाणु रहित एवं कड़ा हो जाता है उसके बाद उसे इच्छित आकृति में मोड़ दिया जाता है और उसके बाद हाथ से अथवा मशीन से आवरण के कार्ड बोर्ड में जोड़ दिया जाता है। आवरण के कार्ड बोर्ड में यदि पूर्णतः कपड़े का उपयोग किया जाता है, तो इसे पूर्ण कपड़ा जिल्दबन्दी, आधो भाग में कपड़े का उपयोग किया जाता है, तो अर्द्ध कपड़ा जिल्दबन्दी, चौथाई भाग में कपड़े का उपयोग किया जाता है तो चौथाई जिल्दबन्दी कहते हैं। खासकर भारतीय ग्रन्थों में अथवा यूँ कहें कि हिन्दू धर्म ग्रन्थों में आवरण के लिए इसी जिल्दबन्दी को सही माना गया है।

8.5.3 चमड़े

चमड़े को आवरण के रूप में सबसे पहले उपयोग अरब देशों में किया गया। चमड़े जानवरों की छाल हैं, जिसे घिसकर आवरण बनाया जाता है। यह काफी मजबूत और टिकाऊ होता है। इसी वजह से आधुनिक युग में इसे एक आदर्श आवरण सामग्री माना जा रहा है। यह लचीला होता है तथा इसे बहुत ही सुन्दर तरीके से तैयार किया जाता है। इस पर अक्षरांकन भी खूबसूरत ढंग से हो सकता है। इच्छित आकृति भी बनायी जा सकती है। चमड़े के रूप में भेड़, बकरी अथवा गाय के चमड़े का उपयोग किया जाता है। ग्रन्थ के वजन पर चमड़े की मोटाई निर्भर करती है। चमड़े को तैयार करने के क्रम में कई विधियाँ अपनायी जाती हैं। जानवर के ऊपर से चमड़ा उतारने के बाद उसे गर्म पानी में धो दिया जाता है और चाकू के सहारे उसे चिकना कर सुखा लिया जाता है। इसके ऊपर लेप लगाकर पुनः सुखाया जाता है और उसके बाद इच्छित आकृति में काट कर उसे मोड़ दिया जाता है और तब इसे ग्रन्थ के आवरण बोर्ड से जोड़ दिया जाता है। यह काफी मंहगा होता है और साथ ही परिरक्षण एवं संरक्षण की दृष्टि से भी यह तुलनात्मक रूप से उपयोगी नहीं होता है, इसी वजह से यह आधुनिक युग में बहुत ही कम दिखायी देता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि अच्छे श्रेणी के चमड़े का उपयोग करने से आवरण सभी तरह के प्रदूषणों से बचा रहता है और इसे ताप, नमी इत्यादि भी काफी हद तक प्रभावित नहीं करती है। इसके ऊपर वनस्पतियों का लेप अथवा रासायनिक पदार्थों का लेप किया जाता है, जिसके वजह से यह कीटाणु रहित होता है।

जो चमड़ा बकरी से लिया जाता है उसे मोडक्को चमड़ा कहते हैं। भेड़ से बने चमड़े को भेल कहते हैं। मोडक्को से भेल कहीं उत्तम श्रेणी का चमड़ा होता है, क्योंकि यह कोमल रेशेदार तथा आकर्षक रंगों का होता है। इन्हीं दोनों श्रेणियों का उपयोग अधिकांश देशों में होता है। गाय के चमड़े का उपयोग मात्र अरब देशों में होता है। भारतीय मानक ने भी अपनी संहिता संख्या : IS 2960 (1964) : में भेड़ और बकरी के चमड़े को ही आवरण के रूप में मान्यता दी है।

ग्रन्थ जिल्दबन्दी के लिए चमड़े की विशिष्टता

ग्रन्थ के जिल्दबन्दी के लिए बकरी, भेड़ के चमड़े के अतिरिक्त गाय के बछड़े और सुअर के बच्चे का चमड़ा तथा घड़ियाल के खाल का भी उपयोग किया जा रहा है। गाय के बछड़े का चमड़ा काफी अच्छा होता है। यह मुलायम, चमकीला और आकर्षक होता है , लेकिन यह टिकाऊ नहीं होता है। दूसरी तरफ सुअर के बच्चे का चमड़ा और घड़ियाल के खाल आकर्षणहीन और तुलनात्मक रूप से टिकाऊ होता है। इसी वजह से पाश्चात्य देशों में सुअर एवं घड़ियाल के खाल का प्रयोग आवरण के रूप में आवश्यक रूप से किया जाता है। यह काफी कीमती और मजबूत होता है, किन्तु जानवरों की घटती संख्या के कारण इसका उपयोग बहुत कम हो रहा है।

8.5.4 विभिन्न श्रेणियों के बोर्ड

बोर्ड आवरण पृष्ठ का महत्वपूर्ण भाग है। यह पतला और मोटा दोनों तरह का होता है। पहले के समय में लकड़ी का पतले बोर्ड का उपयोग ग्रन्थों की सुरक्षा के लिए किया जाता था और आज भी पाण्डुलिपियों की सुरक्षा के लिए इन्हीं बोर्डों का उपयोग किया जाता है। आजकल लकड़ी से बने बोर्ड का उपयोग बहुत ही कम हो रहा है और इसके वैकल्पिक सामग्री के रूप में कागज से बने बोर्ड ने अपना स्थान ले लिया है।

कागज के बोर्ड भी कई तरह के होते हैं। किस तरह के बोर्ड का उपयोग किया जाय यह ग्रन्थ के उपयोगिता पर निर्भर करता है। वर्तमान समय में कागज से बने बोर्ड की मुख्य श्रेणियाँ निम्नलिखित हैं :

- मिल बोर्ड
- स्ट्राव बोर्ड
- स्पलाइट बोर्ड
- ग्रे बोर्ड

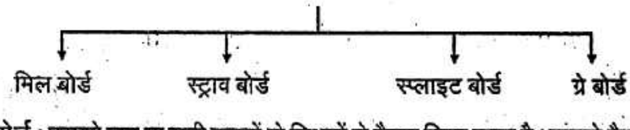

मिल बोर्ड : इसको जूट या सूती कपड़ों के चिथड़ों से तैयार किया जाता है। इसको तैयार करने की विधि इस तरह से है, पहले जूट या सूती कपड़े के चिथड़ों को छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़कर पानी में भिंगा दिया जाता है और बाद में इसको रासायनिक द्रव्यों के सहारे कीटाणु रहित किया जाता है और उसके बाद इसका बोर्ड तैयार किया जाता है। यह बोर्ड काफी मंहगा और आकर्षक होता है साथ में मजबूत भी होता है। इसी वजह से इसका उपयोग हमेशा महत्वपूर्ण ग्रन्थ और पत्रिकाओं के ग्रन्थपुटी के जिल्दबन्दी में किया जाता है।

स्ट्राव बोर्ड : इसको पुआल अथवा घास से तैयार किया जाता है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है। इसके तैयार करने की विधि इस तरह से है, पहले पुआल अथवा घास के छोटे-छोटे टुकड़े करके उसकी

लुगदी बनायी जाती है। फिर उसमें रासायनिक द्रव्यों का प्रयोग करके उसे कीटाणु रहित किया जाता है। तब इसका बोर्ड बनाया जाता है। यह बोर्ड काफी सस्ता होता है। इसी वजह से इसे जिल्दसाज का बोर्ड भी कहते हैं। सामान्य जिल्दबन्दी में इसी का उपयोग किया जाता है। जिल्दबन्दी के लिए स्ट्राव बोर्ड अथवा मिलबोर्ड का सही चुनाव करने के लिए निम्नलिखित सुझाव सारणी में दिया है :

		मोटाई		तुलनात्मक स्तर	
(1)	मिल बोर्ड	न्यूनतम	अधिकतम	1.55 मिमी	1500 GSM (gm.)
		"	"	3.5 मिमी	3500 " "
		"	"	4.5 मिमी	4500 " "
(2)	स्ट्राव बोर्ड	"	"	1.5 मिमी	1000 " "
		"	"	3.5 मिमी	2000 " "
		"	"	4.5 मिमी	3000 " "

स्प्लाइट बोर्ड : स्प्लाइट बोर्ड का उपयोग सामान्यतः सुदृढ़ जिल्दबन्दी में होता है। इसको भी सामान्यतया जूट और सूती कपड़ों के चिथड़ों से तैयार किया जाता है, लेकिन मिल बोर्ड की अपेक्षा यह अधिक संशोधित कर बनाया जाता है, इसी वजह से यह अधिक टिकाऊ और कीमती होता है। इसका उपयोग सामान्यतया शोध ग्रन्थों के लिए किया जाता है। यह दो तहों का बना होता है।

ग्रे बोर्ड : यह भूसों की लुगदी बनाकर तैयार किया जाता है जो अत्यन्त साधारण और कम टिकाऊ होता है। इसमें कड़ापन बहुत अधिाक होता है इसकी वजह से इसका उपयोग बहुत कम मात्रा में होता है।

स्प्लाइट बोर्ड को छोड़कर अन्य सभी बोर्ड एक ही तह के बने होते हैं। यह सभी बोर्ड स्प्लाइट बोर्ड की तुलना में कठोर और चौड़ाई लिए हुए होते हैं जिनका क्रम उदग्र होता है। अन्य सभी बोर्ड सस्ते, चमकदार और तुलनात्मक रूप से कम टिकाऊ होते हैं फिर भी इन्हीं बोर्डों का उपयोग अधिकांशत होता है।

8.6 सजावट की सामग्री

जिल्दबन्दी की क्रिया समाप्त हो जाने के बाद ग्रन्थ के स्पाइन पर साधारणतः ग्रन्थ का नाम, लेखक का नाम, क्रमांक संख्या लिखी जाती है। इस क्रिया को अक्षरांकन की क्रिया कहा जाता है। यह काम पीतल के बने अक्षरों से होता है। सुनहरा अक्षर बनाने के लिए सोना, ताँबा एवं चाँदी का मिश्रित घोल तैयार किया जाता है। इस काम के लिए निम्नलिखित तीन तरह की विधियों को अपनाया जाता है :

- सुनहरे अक्षर (गोल्ड टूलिंग)
- उजले अक्षर (सिल्वर टूलिंग)
- मुद्रण (प्रिंटिंग)

सुनहरे अक्षर : इस काम के लिए पीतल के बने अक्षरों का उपयोग किया जाता है। पहले अक्षरों को कम्पोज कर उसे स्टिक में कस देते हैं। उसके ऊपर सुनहले रंग के घोल में हल्का सा सोना मिश्रित कर घोल तैयार रखते हैं। पीतल के दाँतों को कसने के बाद इसे तेज आंच पर गर्म करते हैं और उसके बाद उसे उठाकर जिस स्थान पर अक्षरांकन करना हो वहाँ रखकर दबा देते हैं। परिणाम स्वरूप आवरण के ऊपर टाइप के दाग या गड्ढे बन जाते हैं। उस पर सफेदी पोत देते हैं। सूखने पर स्टाइल के सहारे उसे चिकना कर देते हैं। इस तरह सुनहला अक्षरांकन पूरा हो जाता है।

उजले अक्षर : इस काम में भी पीतल के दाँतों का ही सहारा लेते हैं और उपरोक्त विधि ही अपनाते हैं, किन्तु सफेद इंक स्याही के घोल में चाँदी का अर्क मिला देते हैं। सफेदी के ऊपर से इसे लगा देते हैं और सूखने पर स्टाइलस से चिकना कर लेते हैं। इस तरह सफेद अक्षरांकन की प्रक्रिया पूरी हो जाती है।

मुद्रण : इसमें छापाखाना का उपयोग करते हैं जहाँ इच्छित रंगों में आवरण के ऊपर ग्रन्थ परिचय *यथा लेखक, शीर्षक, प्रतिक्रांक इत्यादि को मुद्रित करवा देते हैं। यह काफी सस्ता पड़ता है और* प्रकाशकों के लिए सुविधाजनक है। क्योंकि यह कम लागत और अधिक उत्पादन के सिद्धान्त पर आधारित है। इस तरह सजावट का काम पूरा होता है ।

8.7 निष्कर्ष (Conclusion)

इस इकाई में जिल्दबन्दी के विभिन्न सामग्रियों का विस्तृत विवेचन किया गया है। जिल्दबन्दी के विभिन्न चरणों में इसका उपयोग कैसे होता है तथा इसका महत्व क्या है? इसकी विस्तृत जानकारी दी गयी है। सिलाई जिल्दबन्दी का सबसे प्राथमिक चरण है। जिसके सामग्री के रूप में सुई और धागे का उपयोग किया जाता है। यह धागे सूती, लिनियन, रेशमी अथवा सिन्थेटिक किसी भी प्रकार के हो सकते हैं। इनमें से कौन सा उपयुक्त है, इसका भी विस्तृत विवेचन किया गया है। आगामी चरण में सुदृढ़ जिल्दबन्दी के लिए आवश्यक सामग्री के रूप में धागा, गेज, बकरम, कोर्ट, टेप, इण्ड पेपर तथा कागज से बना हुआ गार्ड फाइल इत्यादि की आवश्यकता पड़ती है। इसका भी विस्तृत विवेचन किया गया है। जिल्दबन्दी के आगामी चरण में चिपकाने का काम होता है, जिसके लिए विभिन्न प्रकार के एडहेसिव सामग्री की आवश्यकता होती है, जैसे स्टार्च पेस्ट, डेस्टराइन पेस्ट, ग्लू और जिलेटिन, सिन्थेटिक एडहेसिव इत्यादि। इसका भी विस्तृत विवेचन किया गया है। तीसरे चरण में विभिन्न प्रकार के आवरण सामग्री की आवश्यकता पड़ती है जैसे, चमड़े, कपड़े, कागज, बोर्ड इत्यादि। इन सभी के विषय में भी विस्तृत विवेचन किया गया है और अन्त में अक्षरांकन और अलंकरन के लिए विभिन्न प्रकार की सामग्रियों और आकृतियों पर भी विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है।

इकाई 9 : ग्रन्थालय जिल्दबन्दी के मानक
STANDARDS FOR LIBRARY BINDING

संरचना

- 9.0 उद्देश्य
- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 ग्रन्थालय जिल्दबन्दी के मानक
  - 9.2.1 कोडान्तरण
  - 9.2.2 सुदृढ़ जिल्दसाजी
  - 9.2.3 पॉकेट तथा टेप्स तथा इण्ड पेपर का निर्धारण
  - 9.2.4 सिलाई
  - 9.2.5 बोर्ड्स
  - 9.2.6 अग्रसारण
  - 9.2.7 मुख्य पृष्ठ का जिल्दसाजी सुनिशचित करना
  - 9.2.8 परिष्करण
  - 9.2.9 रंग और सजावट सुनिश्चित करना
- 9.3 निष्कर्ष

9.0 उद्देश्य (Objectives of the Unit)

इस इकाई को पढ़ने के बाद निम्नलिखित तथ्यों की जानकारी प्राप्त होगी :

- ग्रन्थालय सामग्री के स्वभाव।
- ग्रन्थालय सामग्री के विभिन्न प्रकारों की जिल्दसाजी
- जिल्दसाजी के लिए विभिन्न प्रकारों के पदार्थों के श्रेणियों को पहचानने में दक्षता की प्राप्ति।
- इस कार्य हेतु सही सामग्री के लिए सही निर्देश देने में दक्ष होना।
- ग्रन्थ जिल्दसाजी के विभिन्न तत्वों एवं प्रक्रियाओं को विस्तृत रूप में जानना।
- जिल्दसाजी में प्रयुक्त सामग्रियों के परिरक्षण हेतु सुनिश्चित व्यवस्था निरूपित करना।
- ग्रन्थालयी का परिरक्षण एवं संरक्षण की दृष्टि से जिल्दसाजी के सभी तत्वों की पहचान करने में दक्ष होना।

132

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

उपर्युक्त संदर्भ में ग्रन्थालय विज्ञान के जनक डॉ0 शियाली रामामृत रंगनाथन महोदय ने अपनी पुस्तक सोशल बिब्लियोग्राफी और फिजिकल बिब्लियोग्राफी फॉर लाइब्रेरियन्स के अन्तर्गत एक श्रृंखला प्रक्रिया का सूत्र दिया है। यह श्रृंखला ग्यारह जोड़ों की है जिसका आपस में घनिष्ट सम्बन्ध है। जिसे निम्नांकित रेखा चित्र के द्वारा भी स्पष्ट किया गया है और जिसका उल्लेख भारतीय मानक संस्थान के IS 3050-1965 में विस्तृत रूप से किया गया है :

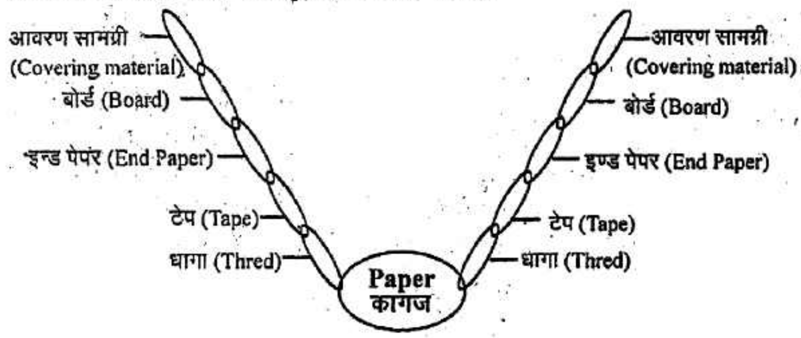

जिल्दबन्द ग्रन्थ के अंग

उपरोक्त चित्र द्वारा जिल्दबन्द ग्रन्थ के अंग स्पष्ट होते हैं; जिल्दबन्दी करते समय इन अंगों पर ध्यान की आवश्यकता होती है :

शृंखला की मजबूती (Strength of the chain) : शृंखला का सबसे कमजोर तत्व जिल्द की पूर्ण मजबूती को निर्धारित करता है। उदाहरणस्वरूप किसी भी कड़ी को कमजोर कड़ी की अपेक्षा मजबूती प्रदान करना मितव्ययी नहीं होगा। इन ग्यारह कड़ी में, मुद्रित कागज को जिल्दसाज और ग्रन्थालय को उसी रूप में स्वीकारना पड़ता है, जिस रूप में वह विद्यमान हो। इसलिए बचे जिन दस सामग्री की कड़ी का प्रयोग करना हो उन्हें कागज की मजबूती के अनुसार प्रयोग करना चाहिए अर्थात उनकी गुणवत्ता कागज की मजबूती के अनुसार प्रयोग करना चाहिए अर्थात अनकी गुणवत्ता कागज के अनुसार निर्धारित करनी चाहिए। खास कर अमहत्वपूर्ण ग्रन्थ जो कि घटिया किस्म के कागज पर मुद्रित हो, के लिए सस्ते जिल्द सामग्रियों के प्रयोग किए जा सकते हैं; इसके विपरीत महत्वपूर्ण एवं स्थायी महत्व के ग्रन्थों की जिल्दबन्दी के लिए मजबूत सामग्रियों का प्रयोग अपेक्षाकृत करना चाहिए। इन ग्यारह कड़ियों का मूल्यांकन मध्य कड़ी से प्रारम्भ कर निम्नलिखित रूप में किया जा सकता है :

- **कागज (Paper) :** सबसे पहला कार्य ग्रन्थ के सिलाई को तोड़कर मुद्रित पृष्ठों को व्यवस्थित किया जाना है। यदि कागज कमजोर हो तो उन्हें मजबूती प्रदान करने के लिए उसके किनारों पर मजबूत कागज चिपकाये जाते हैं। धूल, धब्बे आदि को साफ किया जाता है। कमजोर पृष्ठों को आवश्यकतानुसार पारदर्शी टेप साट कर उन्हें मजबूती प्रदान की जाती है।
- **धागा (Thread) :** ग्रन्थ को सिलाई करने के लिए जिस धागे का उपयोग करना हो वह मजबूत होना चाहिए क्योंकि अगर सभी जिल्दबन्दी की सामग्री मजबूत हो लेकिन धागे कमजोर हों तो जिल्द कमजोर रहती है। तार के धागे मजबूत जरूर होते है लेकिन उनमें जंग लगने तथा कागज को नुकसान करने का भय बना रहता है। इसलिए तार का प्रयोग न कर ब्लीच किया हुआ रुई या नाइलॉन के मजबूत धागे का प्रयोग करना चाहिए।
- **टेप (Tape) :** टेप का प्रयोग भी अच्छे किस्म का करना चाहिए। खासकर ऐसी सामग्री जो स्थायी महत्व की हों उनमें मजबूत टेप लगाना चाहिए।

- **इण्ड पेपर (End Paper) :** जिल्द के प्रारम्भ तथा अन्त में एण्ड पेपर का उपयोग करना चाहिए। उसका एक हिस्सा गत्ते के साथ चिपका रहता है तथा दूसरा हिस्सा खुला होता है। यह कागज मजबूत किस्म का इस्तेमाल में लाना चाहिए।
- **गत्ता (Board) :** अन्तर्राष्ट्रीय मानक संगठन (ISO) ने गत्ते के मानक के सम्बन्ध में निर्धारित किया है कि कागज जिस गत्ते का उपयोग जिल्दबन्दी हेतु करना हो उसका वजन एक वर्ग मीटर के आकार में 250 ग्राम होना चाहिए। चूँकि गत्ते पर जिल्दबन्दी की मजबूती निर्भर करती है इसलिए मजबूत किस्म के गत्ते उपयोग करना चाहिए।
- **आवरण सामग्री (Covering Materials) :** आवरण सामग्री भी कई तरह की होती है। जिनमें सबसे मजबूत चमड़े की होती है यह काफी महँगी होती है इसलिए बहुत ही महत्वपूर्ण और दुर्लभ ग्रन्थों के ज़िल्दबन्दी में आवरण हेतु चमड़े का प्रयोग होता है। चमड़े के बाद कपड़े और उसके बाद रेक्सीन और कागज का स्थान आता है। ये क्रमशः कम मजबूत होते हैं। इनका प्रयोग पाठ्य सामग्रियों की महत्ता के अनुसार निर्धारित की जाती है।

रंगनाथन महोदय ने यह भी स्पष्ट किया है कि जिस प्रकार जिल्दसाजी के किसी एक तत्व का अवगुण सम्पूर्ण जिल्दसाजी की व्यवस्था को ही प्रभावित करता है। ठीक उसी प्रकार इस शृंखला के तत्वों का गुण भी आपस में एक दूसरे को प्रभावित करता है तथा पूरी व्यवस्था को मजबूत बनाता है, जिससे ग्रन्थ काफी समय तक सुरक्षित रहता है। यदि कागज निम्न श्रेणी का भी हो, किन्तु जिल्दसाजी के अन्य सामान उच्च श्रेणी के हों तो भी जिल्दसाज़ी सही नहीं होगी। क्योंकि उसका मूल तत्व ही निम्नश्रेणी का हो जायेगा अन्यथा उच्च श्रेणी के जिल्दसाजी की सामग्री काफी हद तक टिकाऊ एवं उपयोगी होते हैं। इसी वजह से एक ग्रन्थालयी को जिल्दसाजी की सही सामग्रियों का ज्ञान होना अति आवश्यक है। ग्रन्थालयी एक विद्वान और सेवा भावी होता है। अतः वह जिल्दसाज नहीं हो सकता, न ही एक विशेषज्ञ हो सकता है, लेकिन यह कार्य उसके कर्तव्य में निहित है। अतः उसका सामान्य ज्ञान होना उसके लिए जरूरी है। कागज उत्पादन पर तो उसका नियन्त्रण बहुत ही कम होता है क्योंकि यह काम मुख्यतः प्रकाशक पर निर्भर करता है कि अपनी लागत मूल्य के आधार पर वह किस श्रेणी का कागज उपयोग में लायेगा। यहाँ ग्रन्थालयी मात्र इतना ही कर सकता है कि वह प्रकाशक को सुझाव अथवा प्रस्ताव भेज दे किन्तु यह जरूरी नहीं है कि प्रकाशक इसे मान ही ले। अर्थात प्रकाशक के पास कोई कानूनी बाध्यता इस सन्दर्भ में नहीं होती है, क्योंकि यह पूरी तरह व्यापारिक और आर्थिक पक्ष है।

यदि यह मान भी लिया जाय कि प्रकाशक उसकी बात मान भी लेगा तो भी यह उसके नियन्त्रण में नहीं होता है। ऐसी स्थिति में उसके पास एक ही साधन होता है और वह है पुर्नजिल्दसाजी की व्यवस्था करना। वैसे तो सैद्धान्तिक रूप से कई प्रकार की वैकल्पिक व्यवस्थाएँ दी जा सकती हैं, किन्तु व्यावहारिक रूप से उसके पास निम्नांकित दो वैकल्पिक व्यवस्थाएँ ही बच जाती हैं, जिसे वह कर सकता है।

(क) यदि ऐसी पुस्तकें, जिन्हें लम्बे समय तक परिरक्षण देना है, क्योंकि वह प्रकाशन में उपलब्ध नहीं है, उसका होना विभिन्न शोधकार्यों के लिए आवश्यक है तथा कागज भी निम्नस्तर का प्रयोग में लाया गया है तो ऐसी पुस्तकों के समुचित सुदृढ़ जिल्दसाजी विधि के द्वारा पुर्नजिल्दसाजी करवा सकता है। हाँ इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सुदृढ़ जिल्दसाजी मँहगी होगी, किन्तु ग्रन्थ भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है।

(ख) ठीक इसके विपरीत यदि पुस्तक की विषय-वस्तु सामान्य हो, प्रकाशन में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो तथा उसका मात्र सामयिक महत्व हो तो यह सुदृढ़ जिल्दसाजी हेतु उपयुक्त नहीं है। ऐसी स्थिति में उसे सामान्य सस्ती जिल्दसाजी ही करवा देना चाहिए।

उपर्युक्त संदर्भ में यह देखा जा रहा है कि ज़िल्दसाजी से सम्बन्धित सामान जैसे चमड़ा, बकरम, कार्ड बोर्ड, टेप, इण्ड पेपर इत्यादि बाजार में उच्च श्रेणी का उपलब्ध नहीं हो पाता है। यह अति

दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है। सैद्धान्तिक रूप से सुझाव अथवा प्रस्ताव देना एक अलग वस्तु है। लेकिन प्रायोगिक रूप से उसका बाजार में उपलब्ध होना और उपयोग में लाना दूसरी वस्तु है। दूसरी तरफ एक ग्रन्थालयी के लिए चमड़े की सही श्रेणी की पहचान करना, बोर्डों की श्रेणी को जानना, कपड़ों की विभिन्न श्रेणियों को पहचानना सम्भव नहीं है और न तो यह हमेशा ग्रन्थालय में उपलब्ध रहता है और न ही यह ग्रन्थालय के वित्तीय स्रोतों के अनुकूल होता है। अतः यदि कहा जाय कि इसी वजह से हमेशा प्रायोगिक रूप से निम्न श्रेणी की सामग्रियों का उपयोग जिल्दसाजी में हो जाता है।

आजकल प्रायोगिक रूप से इस क्षेत्र में भी सिन्थेटिक सामग्रियों की नई श्रेणी का प्रवेश हुआ है। यह लागत मूल्य के अनुसार अन्य सामग्रियों से सस्ती होती है तथा यह अपेक्षाकृत टिकाऊ भी होती है। इसी वजह से जिल्दसाज के द्वारा इसका उपयोग वृहत पैमाने पर किया जा रहा है। किन्तु भारतीय ग्रन्थालयों के लिए सुदृढ़ जिल्दसाजी को अधिक उपयोगी माना गया है तथा इसे ही एक मानक के रूप में स्थापित किया गया है।

क्या यह सामान्य ग्रन्थालयों में स्थापित हो चुका है? यह वास्तव में है क्या? इसकी गहन जानकारी ग्रन्थालयी के लिए आवश्यक है जिसका विस्तृत विवेचन नीचे दिया जा रहा है।

9.2 ग्रन्थालय जिल्दबन्दी के मानक (Standard for library binding)

मानक ऐसे नियम को कहते हैं जिसके द्वारा श्रेणी निर्धारित की जाती है। अर्थात किसी वस्तु को बनाने के लिए किस श्रेणी की सामग्री अधिक उपयुक्त होगी तथा कौन सी प्रणाली सही होगी इसका निर्धारण करना ही मानक है। इसके कई स्तर होते हैं। जिस सामग्री की सम्पूर्ण विश्व स्तर पर मान्यता की जरूरत होती है, उसे इन्टरनेशनल स्टैण्डर्ड ऑर्गनाइजेशन के द्वारा किया जाता है तथा जिसकी मान्यता भारतीय राष्ट्रीय स्तर पर दी जाती है। उसे भारतीय मानक संस्थान के द्वारा मान्यता दी जाती है। जहाँ तक ग्रन्थालय जिल्दसाजी के मानक का सवाल है इसके निम्नलिखित दो पक्ष हैं :

(क) उपयोग में लाये जाने वाले पदार्थों की श्रेणी का निर्धारण करना।

(ख) दक्षता का निर्धारण करना।

(क) उपयोग में लाये जाने वाले पदार्थों की श्रेणी का निर्धारण करना

उपर्युक्त ग्यारह जोड़ों वाली शृंखला से ही स्पष्ट हो गया है कि जिल्दसाजी के लिए कई पदार्थों की आवश्यकता होती है : जैसे कार्डबोर्ड, चमड़ा, इण्ड पेपर, लेई, धागा इत्यादि। ऐसी स्थिति में उपर्युक्त शृंखला में यह पूर्णतः स्पष्ट कर दिया गया है कि उपयोग में लायी गयी एक भी सामग्री यदि उपयुक्त श्रेणी की नहीं होगी तो पूरी जिल्दसाजी की व्यवस्था ही समाप्त हो जायेगी। इस उपयुक्त अथवा सामग्री की श्रेणी का निर्धारण ग्रन्थालय जिल्दसाजी के मानक का पहला पक्ष है।

(ख) दक्षता का निर्धारण करना

जिल्दसाजी किस प्रणाली से की गई है, वह उपयुक्त है अथवा नहीं इसका भी निर्धारण करना जरूरी होता है, क्योंकि अगर सामग्री उच्च स्तर की होगी, किन्तु जिल्दसाजी की प्रक्रिया सही नहीं होगी तो भी परिणाम सही नहीं होगा। इसका निर्धारण भी मानक का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है।

उपर्युक्त संदर्भ में जिल्दसाजी हेतु अलग-अलग देशों के लिए बहुत तरह के मानक दिये गये हैं जिसमें से कुछ महत्वपूर्ण मानक की विवेचना नीचे की जा रही है :

(1) अमेरिकन मानक : अमेरिका विश्व का सबसे धनी एवं हर क्षेत्र में अग्रणी राष्ट्र है। ग्रन्थों का टिकाऊ हार्ड कवर जिल्दसाजी जिसे अमेरिकन राष्ट्रीय मानक संस्थान तथा राष्ट्रीय मानक

संस्थान तथा राष्ट्रीय सूचना मानक संगठन ने मिलकर स्थापित किया है। यह मानक 1992 में संयुक्त रूप से अमेरिकन ग्रन्थालय संघ तथा ग्रन्थालय जिल्दसाजी संघ के द्वारा प्रयोग में लाया गया। यह काफी खर्चीला होता है। इसीलिए विश्वस्तर पर मान्य होते हुए भी सभी देशों की आर्थिक स्थिति के अनुकूल नहीं है।

(2) **ब्रिटिश मानक :** यह 1980 में ब्रिटिश मानक संस्था द्वारा स्थापित किया गया। इसके अन्तर्गत पूर्व से प्रचलित 1989 में कुछ सुधार भी किया गया। इस मानक को ब्राउनस मैनुअल ऑफ लाइब्रेरी इकोनामी तथा जिल्दसाजी पर ब्रिटिश ग्रन्थ में दिये गये सुझावों के आधार पर तैयार किया गया। यह भी टिकाऊ हार्ड कवर जिल्दसाजी से मिलता-जुलता है, किन्तु इसके जिल्दसाजी की विधि अलग है। इसके द्वारा किये गये जिल्दसाजी में कवर हार्ड होते हैं, किन्तु सिलाई हल्की ढीली रखी जाती है, जिससे उपयोग में सुविधा हो। यह भी काफी मंहगी होती है. इसीलिए सभी देशों की आर्थिक स्थिति के अनुकूल नहीं होती है।

(3) **भारतीय मानक :** भारत में भी वातावरण के अनुकूल जिल्दसाजी के लिए अलग मानक स्थापित की गयी है। यह 1968 में भारतीय ग्रन्थालय के जनक एस0 आर0 रंगनाथन महोदय के द्वारा अपनी ग्रन्थ सोशल बिब्लियोग्राफी और फिजिकल बिब्लियोग्राफी फॉर लाइब्रेरियन्स में कोड ऑफ प्रैक्टिस फॉर रेन फोर्सड बाइन्डिंग ऑफ लाइब्रेरी बुक्स और प्रियोडिकल्श आइ0 एस0 3050 (1965) में स्थापित किया। उपर्युक्त विवरण में विभिन्न प्रकार के मानकों का एक संश्लेषित रूप है, जो भारतीय मानक पर ही जोर देते हैं, क्योंकि भारतीय मानक सबसे अच्छी मानक है और सभी देशों की आर्थिक स्थितियों के अनुकूल है। यह पूर्णतः आगे के विवरणों से स्पष्ट हो जायेगा।

उपर्युक्त सभी मानक में एकरूपता है कि यह सभी एक ही समान गुणों पर निर्भर हैं, उन्हीं के संश्लेषित रूप हैं तथा एक ही तथ्य पर आधारित हैं, वह तथ्य हैं जिल्दसाजी का मजबूत होना। अतः इस सन्दर्भ में यह भी कहा जा सकता है कि उपर्युक्त सभी मानक इस-दूसरे के पूरक हैं एवं उनका निष्कर्ष सुदृढ़ जिल्दसाजी है। आगे भी कार्यकारी शृंखला के तहत व्याख्या किया गया है।

9.2.1 कोडान्तरण

जिल्दसाजी के क्रम में यह एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसे सम्पादित करने के क्रम में निम्नलिखित चरण आते हैं :

(1) सभी ग्रन्थों को सावधानीपूर्वक जमा कर लिया जाता है और इसके क्षतिग्रस्त पन्नों को भी जमा किया जाता है तथा क्रमिक रूप से लगा दिया जाता है, जिससे यह पता चल सके कि पृष्ठ अपने सही क्रम में है और कोई भी पृष्ठ भूलवश छूट नहीं गया है। क्योंकि अगर भूलवश कोई पृष्ठ छूट जाता है तो पुर्नजिल्दसाजी का महत्व ही समाप्त हो जाता है। इसीलिए प्रत्येक ग्रन्थ को बारी-बारी से और प्रत्येक पृष्ठ को भी बारी-बारी से देखना जरूरी हो जाता है। इस तरह जब ग्रन्थालय कर्मी पुर्नजिल्दसाजी के लिए पूर्ण सुनिश्चितता की स्थिति में आ जाता है अर्थात सभी पृष्ठों के सही क्रम में होने के प्रति पूर्ण आश्वस्त हो जाता है तब उसे जिल्दसाज के पास भेजता है।

(2) अगर पत्रिकायें या ग्रन्थ क्रमिक रूप से प्रकाशित होती हैं तो ऐसी स्थिति में इसके सभी अंक को जमा किया जाता है और उसे एक ही शीर्षक के तहत रखा जाता है। इसके अतिरिक्त इसके अर्न्तविषय सूची पृष्ठ तथा अनुक्रमणिका को भी जमा कर लिया जाता है और उसे शृंखलाबद्ध कर दिया जाता है। यदि शृंखलाबद्ध नहीं किया जायेगा तो भी जिल्दसाजी उद्देश्यहीन हो जायेगी।

(3) पत्रिकाओं के आवरण पृष्ठ और विज्ञापन वाले पृष्ठों को अलग कर दिया जाता है, क्योंकि यह ग्रन्थालय के लिए जरूरी नहीं होती है और पृष्ठों की संख्या भी कम हो जाती है। मोटाई कम

हो जाने की वजह से जिल्दसाजी करना असान हो जाता है और इसकी मजबूती भी बढ़ जाती है।

(4) जहाँ तक सम्भव हो सके तो एक अंक सात सेंटी मीटर (7 cm) से अधिक मोटा नहीं होना चाहिए।

9.2.2 सुदृढ़ जिल्दसाज़ी

यह भी एक तरह की जिल्दसाजी है जो भारतीय मानक के अनुसार स्थापित की गयी है जिसे पूरे विश्व में मान्यता प्राप्त है। इस तरह की जिल्दसाजी करने में निम्नलिखित चरण आते हैं :

(1) ग्रन्थ के प्रथम और अन्तिम खण्ड को एक साथ मिलाकर सुरक्षात्मक ढंग से या तो लेई से चिपकाया जाता है, अथवा फेब्रिक के धागे से सिलाई कर दिया जाता है।

(2) सभी फटे भागों को पीछे से क्रमिक रूप से रखा जाता है तथा उसके बीच टिशू पेपर का उपयोग किया जाता है। शुरू में यह नपे-तुले आकृति में नहीं होता हैं तथा पीछे से इसे चिपका दिया जाता है। टिशू पेपर के अनोपेक्षित भाग को मोड़ दिया जाता है और बाद में उसे काट लिया जाता है, जिसे ही मरम्मत कहते हैं। जिल्दसाजी के किनारे को एक समान बनाते समय अतिरिक्त भाग को काट लिया जाता है।

(3) सभी फटे पष्ठों को टिशू पेपर के सहारे अथवा इसी तरह की जापानी टिशू पेपर से अथवा ओनियन स्कीन बाउण्ड पेपर से जोड़ दिया जाता है। इस तरह जिस सामग्री का चुनाव किया जाता है; उसे लेई के सहारे से चिपका दिया जाता है, जिससे पठनीय पक्ष प्रभावित नहीं होता। जापानी टिशू पेपर भारत में हर जगह नहीं मिलता है और ओनियन स्कीन बाउण्ड पेपर काफी महँगा होता है इसीलिए फटे हुए अंश को बाउण्ड पेपर के माध्यम से ठीक किया जाता है।

(4) जब ग्रन्थ के पेपर मुलायम होते हैं और कमजोर तथा छेदयुक्त होते हैं तो ऐसी स्थिति में पारदर्शी टिशू पेपर को चिपका कर मरम्मत की जाती है जिससे पठनीय पक्ष प्रभावित नहीं होता है।

(5) सभी मुड़े हुए पृष्ठ, नक्शे, योजनाएँ, सारणी अथवा अन्य प्रकार के कागज के तह को, जो ग्रन्थ के सामान्य पक्ष न होकर विशेष पक्ष होते हैं उन्हें भी विशेष सुरक्षा उपरोक्त पेपरों द्वारा दी जाती है। पृष्ठों को चिपकाने की प्रक्रिया बहुत लम्बी होती है, लेकिन अगर इसे और भी लम्बा कर दिया जाय तो फिर इसकी भी उपयोगिता समाप्त हो जायेगी।

(6) अगर किसी अंक में चित्रकारी अथवा कलाकारी उपलब्ध है और उसे बचाना है तो उसके लिए भी पारदर्शी टिशू पेपर का उप्रयोग किया जाता है। इस टिशू पेपर को दोनों तरफ से चिपका दिया जाता है, जिससे वह सही-सही दिखायी दे सके तथा अतिरिक्त पेपर को मोड़ दिया जाता है।

9.2.3 पॉकेट एण्ड पेपर तथा टेप्स का निर्धारण

ग्रन्थालय में कुछ ऐसे नक्शे, सारणी तथा इसी तरह के दूसरे सामग्री भी पायी जाती हैं जिनके अंक या ग्रन्थ खण्ड बनाये जा सकते हैं लेकिन आकृति में बड़ा होने की वजह से इसकी जिल्दसाजी करना या बंधन करना सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में ग्रन्थालय द्वारा एक विशिष्ट प्रकार के पॉकेट को तैयार किया जाता है, जो ग्रन्थ खण्ड के अन्त में लगाया जाता है। इस पॉकेट के द्वारा इस प्रकार के सभी सामग्री को सही ढंग से, सही आकृति, सही समय पर दिया जाता है जो इसके मजबूती तथा आकर्षण को बढ़ाता है, साथ ही इसका भविष्य में समन्वीकरण भी सम्भव हो पाता है।

खण्ड पेपर को चार भागों में बाँटकर ग्रन्थ के दोनों तरफ लगा दिया जाता है। ग्रन्थ के सभी भागों के मध्य में रखा जाता है। कपड़े या अन्य सामग्री को पीठिका पर मजबूती के साथ चिपका दिया जाता है। अगर बीच में भी एण्ड पेपर की जरूरत पड़ती है तो इसका उपयोग किया जाता है।

मशीन के द्वारा अगर एण्ड पेपर को लगाना हो तो जिल्दसाजी के किनारे तथा एण्ड पेपर के किनारे को साथ-साथ मिलाया जाता है। इसे भी कपड़ा अथवा रेशम के धागे से मजबूती के साथ चिपका दिया जाता है। इससे भी बीच का जोड़ काफी मजबूत हो जाता है। एण्ड पेपर काफी मज़बूत मोटा तथा उच्च श्रेणी का मुड़ने वाला कागज है, किन्तु यह भी साधारण कागज के समान ही होता है।

एण्ड पेपर की बनावट भी सिलने योग्य होता है। जिससे सुदृढ़ जिल्दसाजी में इसे धागों के सहारे आसानी से सिला जा सके। ग्रन्थ के विभिन्न खण्डों के बीच इसे दिया जा सके तथा इसके माध्यम से सभी खण्डों को सुरक्षित रखा जा सके।

एण्ड पेपर बहुत तरह का होता है : जैसे रंगीन, रंगहीन, सफेद इत्यादि। यह मुद्रित विषय-वस्तु के पृष्ठों के रंग पर भी निर्भर करता है कि किस रंग का एण्ड पेपर उपयोग में लाया जाये।

टेप को नायलोन या सूती कपड़ों से तैयार किया जाता है। इसकी चौड़ाई लगभग दो सेंटी मीटर (2 cm) की होती है। इसके द्वारा दो जगह या तीन जगह सिलाई के क्रम में ग्रन्थ के ऊपर से नीचे तक गांठ लगायी जाती है।

9.2.4 सिलाई (Sewing)

जिल्दसाजी के विभिन्न प्रक्रियाओं में से एक प्रक्रिया सिलाई की है, जिसका अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान है सिलाई की मजबूती पर ही जिल्दसाजी की मजबूती निर्भर करती है। किस तरह की सिलाई की विधि होगी, यह जिलदसाजी के तरीके पर निर्भर है। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित आधारभूत तथ्यों पर ध्यान देना जरूरी है :

(1) तुलनात्मक रूप से अधिक मजबूत होना।

(2) चयनित धागे की मोटाई का सुनिश्चित होना।

(3) ग्रन्थ को खोलने में आसानी होना।

(4) पीठिका तथा सामग्री की मोटाई का भी सुनिश्चित होना।

उर्पयुक्त आधारभूत तथ्यों को ध्यान में रखकर यदि सम्भव हो तो पुर्नजिल्दबाजी के समय पूर्व जिल्दसाजी के अधिकतम छिद्रों को ही उपयोग में लाना चाहिए। उक्त सन्दर्भ में ब्रिटिश मानक का प्रयोग अधिक लाभकारी है। अगर सम्भव हो तो सिलाई को मध्यम कड़ाई में रखा जाना चाहिए, अर्थात वह न तो अधिक ढीली हो और न अधिक कसा हुआ हो।

सिलाई करने के क्रम में एक बार में एक ही भाग को लिया जाता है। अगर कागज की मोटाई दूसरे भाग को लेने के लिए बाध्य न करें। और सिलाई के धागे भी मानक के अनुसार मोटे हो साथ ही मजबूत हों। इनका कोमल होना भी जरूरी है जिससे यह कागज को प्रत्यक्षतः क्षति न पहुँचा सके। इस संदर्भ में भी ब्रिटिश मानक का प्रयोग अधिक लाभकारी है।

सिलाई चौड़ाई में दोनों तरफ से की जाती है जिससे ग्रन्थ को खोलने या पढ़ने में किसी भी तरह की कठिनाई न हो।

9.2.5 बोर्डस (Boards)

जिल्दसाजी करते समय जिल्दसाजों के द्वारा बहुत तरह के बोर्डों का उपयोग किया जाता है। इसमें से स्पलाइट बोर्ड अन्य सभी तरह के बोर्डो से तुलनात्मक रूप से अधिक महँगा होता है, लेकिन यह

सुदृढ़ जिल्दसाजी एवं मोटे ग्रन्थ के लिए अधिक उपयोगी माना गया है। जब स्पलाइट बोर्ड का उपयोग किया जाता है तो इसका सबसे पतला भाग अन्य भागों की तुलना में ग्रन्थ के अधिक समीप होता है। भारत में इस तरह के उच्च स्तरीय बोर्डो की आपूर्ति बहुत ही कम मात्रा में हो रही है। इसी वजह से यहाँ के ग्रन्थालयों में बहुत कीमती ग्रन्थों का यदि विशिष्ट जिल्दसाजी करना जरूरी होता है तो इसी क्रम में इसे उपयोग में लाया जाता है। भारत के अधिकांश ग्रन्थालय में जिल्दसाज, जिल्दसाजी के लिए मिलबोर्ड का उपयोग करते हैं। यह बोर्ड ग्रन्थ के वजन एवं आकृति के अनुरूप मोटाई लिये हुए होता है। इसकी श्रेणी भी उच्च स्तर की होती है तथा इसमें एकल प्लाई लगा हुआ होता है। यह काफी मजबूत तथा अम्लविहीन होता है। इसमें पी0एच0 की मात्रा पाँच दशमलव जीरों (5.0) और नौ दशमलव जीरो (9.0) के बीच होता है, जो ब्रिटिश मानक के अनुकूल है। इस तरह के बोर्ड को जिल्दसाज बोर्ड के नाम से भी जाना जाता है।

9.2.6 अग्रसारण (Forwarding)

अग्रसारण क्रिया केअन्तर्गत मुख्यतः निम्नलिखित कार्य सम्पादित किए जाते हैं :-

(1) मोड़ाई : इस क्रिया के अन्तर्गत ग्रन्थ के पन्ने के आकार के अनुसार कागज मोड़ा जाता है। यह काम हाथ और मशीन दोनों से किया जाता है।

(2) संग्रहण और मिलान करना : एक ग्रन्थ के सभी छपे शीट को मोड़ लेने के उपरान्त जिल्दसाज प्रत्येक फर्मा की गड्डी को अपने अगल-बगल तथा सामने अर्द्ध वृत्ताकार रूप में बायीं तरफ से प्रारम्भ करता हुआ सजा कर रखता है। बायीं तरफ पहला फर्मा तथा दाहिनी तरफ अन्त में अंतिम फर्मा रखा जाता है और वह एक-एक कर्मा को उछाता जाता है इसी क्रिया को संग्रहण करते हैं।

एक जिल्द के लिए सभी फर्मे उठा लेने के बाद आसानी के साथ उसकी जाँच की जाती है कि कोई फर्मा छुटा तो नहीं। इस बात की भी सावधानी रखी जाती है कि एक ही फर्मा की दो प्रतियाँ एक साथ नहीं उठ जायें। अगर ग्रन्थ की पुनः जिल्दसाजी करनी हो तो वैसी स्थिति में ग्रन्थ के पृष्ठों की जाँच कर ली जाती है कि वे सभी क्रम से हैं या नहीं। इस क्रिया को तकनीकी भाषा में मिलान करना कहते हैं।

(3) जुज बाँधना :- जुज का मतलब है जोड़ा, अर्थात इस तरह की सिलाई में जोड़ा पन्ने का होना जरूरी है। अलग-अलग पन्नों की जुजबन्दी सिलाई नहीं होती है अगर ग्रन्थों में प्लेटों या चित्रों के अलग पन्ने हों तो उसके लिए साटने की विधि अपनायी जाती है। इस क्रिया में प्रत्येक आठ पृष्ठों, सोलह पृष्ठों को मोड़ लिया जाता है। इसी को जुज़ कहते हैं। इसके सीने की क्रिया को जुजबन्दी कहते हैं।

(4) सिलाई : सिलाई शुरू करने के पहले ग्रन्थ को शिकजा से कस दिया जाता है और सिलाई का हिस्सा ऊपर रहता है। शिकंजा कस लेने के बाद जहाँ फीता रखना होता है वहाँ आरी से खाँचा बना दिया जाता है। सिलाई की क्रिया शुरू करने के पहले ग्रन्थ के नीचे एक तख्ती रख दी जाती है तथा उसके साथ लकड़ी का एक फ्रेम लगा दिया जाता है। फ्रेम के ऊपर एक गोला है और सुई धागा से सिलाई शुरू कर दी जाती है।

(5) पोस्तीन चढ़ाना : सिलाई करने के बाद पोस्तीन चढ़ाने का कार्य होता है, जो ग्रन्थ के भीतरी जोड़ और स्तर का काम करता है तथा आख्या पृष्ठ को सरक्षा भी प्रदान करता है।

(6) छँटाई : ग्रन्थ की सिलाई करने के बाद अगर धागा निकला रहता है तो उसकी छँटाई की जाती है और हथौड़े से हल्के-हल्के ठोंका जाता है ताकि पन्ने सट जाएँ और ऊपर नीचे न रहें।

(7) किनारे की कटाई इस क्रिया के द्वारा ग्रन्थ के किनारे की कटाई की जाती है। सबसे पहले शिकजें में ग्रन्थ को दवा दिया जाता है और उसके उपरान्त किनारे को काट कर ग्रन्थों के पन्नों को एक समान कर दिया जाता है और ग्रन्थ के उस किनारे को भी काटा जाता है जिधार से वह खुलता है। इसके बाद ग्रन्थ के ऊपर और नीचे के भागों को काटा जाता है। अन्त में कटे हुए भाग को रेती से चिकना कर दिया जाता है।

(8) **चिपकाना :** इस क्रिया में ग्रन्थ पर सबसे पहले पोस्तीन चिपकाया जाता है। फिर ग्रन्थ के स्पाइन पर सरेस का हल्का लेप चढ़ा दिया जाता है।

(9) **गोल करना :** इस क्रिया में जिल्दसाज के द्वारा दोनों हिस्सों पर हथौड़ा से ठोका जाता है। इस क्रिया के सम्पादन के समय जिल्दसाज को काफी सावधानी बरतनी पड़ती है क्योंकि ज्यादा गोल करना ग्रन्थ का खुलना कठिन बना देता है ।

(10) **पृष्ठाधान :** पृष्ठाधान करते समय ग्रन्थ के दोनों तरफ बोर्ड के मोटाई के आकार का पटरा रखकर ग्रन्थ को शिकंजों में इस तरह से कस दिया जाता है कि दोनों किनारे पटरी पर चढ़ जायें।

(11) **बोर्ड लगाना :** बोर्ड लगाने की भी कई विधि है जिसमें सबसे उल्लेखनीय विधि यह है कि ग्रन्थ के आकार का दो बोर्ड का टुकड़ा ले लिया जाता है। उस बोर्ड की लम्बाई चौड़ाई ग्रन्थ के लम्बाई और चौड़ाई से दो सेंट्रीमीटर (2 cm) अधिक होता है। बोर्ड को कड़ा रखने के लिए उसका जो हिस्सा अन्दर रखा जाता है उसके ऊपर पतला कागज चिपका दिया जाता है। इसके बाद बोर्ड के साथ ग्रन्थ की सिलाई की जाती है। इस तरह इस कार्य के लिए मूलतः फ्रेन्च ज्वाइंट का उपयोग किया जाता है।

9.2.7 मुख्य पृष्ठ की ज़िल्दसाजी सुनिश्चित करना

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं :

आवरणीकरण : यह दो हिस्सों में बँटा हुआ है, इसके अन्तर्गत ग्रन्थ की पीठिका पर तथा उनके चारों तरफ कोने पर चमड़ा, कपड़ा या कागज चिपकाये जाते हैं। इसीलिए इसका नाम "हेड बैक" भी है। यह आवरण चमड़ा, कागज, रैक्सीन या कागज किसी का भी हो सकता है और अन्त में एण्ड पेपर को बोर्ड के ऊपर चिपकाया जाता है। यदि आवरण के लिए चमड़े का उपयोग करते हैं तो इसके लिए 1990 में एक पुस्तक "स्पेशीफिकेशन फॉर बुक बाइन्डिंग लेदर" प्रकाशित हुई जिसके अन्तर्गत प्रकाशित हुई जिसके अन्तर्गत भारतीय मानक IS 2960, 1964 निर्धारित की गई। चमड़ा अपेक्षाकृत मोटा होता है जिससे यह कड़ाई से नहीं चिपकाया जा सकता है, अतः फ्रेंच ज्वाइन्ट करते समय भी इसे लचीला छोड़ा जाता है।

आवरण किसी भी वस्तु का क्यों न बना हो उसे ग्रन्थ की पीठिका से प्रत्यक्ष रूप से जोड़ दिया जाता है तथा उसे हमेशा चौड़ाई के क्रम में रखा जाता है। बोर्ड के साथ इसकी लम्बाई-चौड़ाई एवं इसकी आकृति कैसी होगी यह जिल्दसाजी के प्रकार और जिल्दसाज की इच्छा पर निर्भर करता है। आवरण के सामग्री को हमेशा ही मोड़ दिया जाता है, क्योंकि यदि इसे किनारों पर नहीं मोड़ा जायेगा तो यह न तो गोलाकार होगा और न तो टिकाऊ ही होगा।

हेड बैक और टेप को सूती कपड़े और सिल्क से तैयार किया जाता है। हेड बैक और टेप को ग्रन्थ खण्ड के पीठिका पर नीचे से ऊपर तक लगाया जाता है। टेप की शक्ति क्या होगी या टेप कितना मजबूत होगा यह ग्रन्थ के वजन पर निर्भर होता है।

140

9.2.8 परिष्करण (Finishing)

जिल्दसाजी की क्रिया समाप्त हो जाने के बाद अक्षरांकन (Lettering) और अलंकरन (Decoration) की प्रक्रिया शुरू होती है। इसमें ग्रन्थ की पीठिका पर चमकीले गाढ़े और टिकने वाले स्याही का प्रयोग किया जाता है, जो सुनहरा या सफेद रंग का होता है। इससे ग्रन्थ का नाम, लेखक का नाम, क्रमांक संख्या इत्यादि लिखी जाती है। इसे आसानी से पढ़ा जा सकता है, जिसकी आकृति निम्नलिखित क्रम में हो सकती है :

- ग्रन्थ के शीर्षक के बीच में पच्चीस मिली मीटर स्थान पर लेखक का नाम, मध्य में पच्चीस मिली मीटर जगह पर शीर्षक तथा उसके नीचे क्रमांक संख्या नीचे से पच्चीस मिली मीटर स्थान पर लिखा जाता है। यह सभी ग्रन्थ की पीठिका (Spine) पर लिखे जाते हैं। इसका मूल उद्देश्य फलक पर लगे ग्रन्थों की पीठिका को देखकर ग्रन्थ का परिचय प्राप्त करना है।
- अक्षर के आकृति का निर्धारण के सम्बन्ध में भारतीय मानक ने किसी तरह का विचार नहीं दिया है। अतः यह पूर्णतः ग्रन्थालयी पर निर्भर है कि इसका आकार कितना बड़ा रखें।
- अन्त में ग्रन्थ में मजबूती लाने के लिए वार्निशिंग की क्रिया की जाती है, जिसके अन्तर्गत ग्रन्थ को फ्यूमीगेशन अथवा अन्य विधि के द्वारा कीटाणु रहित बनाने का प्रयास किया जाता है।

9.2.9 रंग एवं सजावट सुनिश्चित करना

स्टाइल अथवा तरीका के लिए भारतीय मानक ने बहुत तरह की विधियों का उल्लेख किया है और उसे पूरी तरह से ग्रन्थालयी पर छोड़ दिया गया है कि वह इसका उपयोग करे तथा रंग और सजावट के लिए भी यह निर्देश दिया गया है कि टिकाऊ और आँखों को प्रिय लगने वाले रंगों का ही उपयोग किया जाये। अगर पत्रिकाएँ या कई ग्रन्थ में निकलने वाले ग्रन्थ अलग-अलग रंगों में निकाले गये हों तो भी उनमें एकरूपता लाने के लिए ग्रन्थालय के जिल्दसाजी में एक ही रंग का प्रयोग करना चाहिए।

9.3 निष्कर्ष (Conclusion)

डॉ० एस० आर० रंगनाथन ने जिल्दसाजी पर जो शृंखला रूपी अपना विचार प्रकट किया है उसमें बहुत तरह की कड़ी दिखायी गयी है इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जिल्दसाजी के क्रम में आने वाली सभी कड़ी एक समान महत्वपूर्ण है। इसको एक समान मजबूत होना भी चाहिए ताकि जिल्दसाजी को पूरी तरह मजबूती के साथ समपन्न किया जाये। जिल्दसाजी की सामग्री के सम्बन्ध में जितने भी मानक दिये गये हैं, उसे कार्य विधि के अनुसार पंक्तिबद्ध दिखाया गया है। इसके आधार पर ही जिल्दसाजी में दक्षता प्राप्त हो सकती है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित प्रक्रिया सम्मिलित हैं जैसे : कोडान्तरण, सुदृढ़ जिल्दसाजी, पॉकेट लगाना, एण्ड पेपर और टेप्स का निर्धारण करना, सिलाई, मोड़ना, अग्रसारण, आवरणीकरण एवं परिष्करण, अक्षरांकन एवं रंग तथा साज-सज्जा का निर्धारण इत्यादि। सभी मिलकर जिस कार्य को अन्तिम रूप देते हैं उसे ही जिल्दसाजी कहते हैं।

प्रमुख शब्द

अंकन	: अंकीय प्रतिनिधित्व
ग्रन्थेत्तर सामग्री	: आधुनिक तकनीक से बना हुआ ऐसा माध्यम जिसमें कागज का उपयोग नहीं किया गया हो।
आख्या	: शीर्षक
आर्ट पेपर	: यह एक मुलायम और चमकीला कागज है जिसे कोटेड पेपर कहते हैं।
आक्टों	: कागज का ऐसा पूर्ण सीट जिसे तीन बार मोड़कर सोलह पृष्ट बनाया जाता है।
इमलसन	: यह प्रकाश संश्लेषण के लिए बनायी हुई सामग्री है, जिसका उपयोग फिल्मों की सुरक्षा के लिए की जाती है।
इनकैनयुबुला	: पंद्रहवीं शताब्दी में लिखी गई पुस्तक
एण्ड पेपर	: एक ऐसा क़ागज जिसका आधा भाग आवरण बोर्ड पर तथा आधा भाग ग्रन्थ पर चिपका रहता है, इसे पोस्तीन भी कहते हैं। सिलाई के बाद ग्रन्थ के दोनों ओर नाप की आकार का कटा कागज चिपकाते हैं। यह ग्रन्थ के भीतरी जोड़ का तथा स्तर का काम करता है एवं आख्या पृष्ठ को भी सुरक्षित रखता है।
एन्टी क्यू लेदर	: चमड़े की वैकल्पिक व्यवस्था यथा कागज रैक्सीन इत्यादि।
एरोशोल	: वायु प्रदूषण के मुख्य अंश
केस	: यह आवरण के लिए बना होता है, जिसका ग्रन्थ से सीधा नहीं होता है।
कामब्यूशन	: ज्वलनशील रासायनिक
कवक	: यह एक बहुत ही छोटा पौधा है, जिसमें पत्ती, फूल इत्यादि नहीं होते हैं और यह रंगहीन होता है।
क्वारटो	: एक ऐसी पूर्ण कागज की शीट, जिसे दो बार मोड़कर आठ पृष्ठों की बनाया जाता है।
खास घर	: यही चीन के तकला मकान मरुभूमि के पास पश्चिमी सिंगकैंग प्रोविन्स नामक शहर में बने पाण्डुलिपियों के ग्रन्थालय का नाम है।
गत्ते	: आवरण बोर्ड
जिल्दसाज का बोर्ड	: यह सामान्य पुआल से बना हुआ बोर्ड होता है, जो मोटा होते हुए भी सस्ता और टिकाऊ है। इसे ग्रन्थ बोर्ड भी कहा जाता है।
जुजों	: जोड़ी, सेक्सन, सिगनेचर।
टिशू	: अति उत्तम श्रेणी का क़ागज जिसका काम मरम्मत और पुनरुद्धार के लिये किया जाता है।
डिकल ऐज	: ऐसे ग्रन्थ जिन्हें प्रकाशक बिना किनारे की कटाई किये ही भेज देते हैं।
डिहाइड्रेशन	: वायु शुद्ध करने की क्रिया।

डाइ इथाइल जिंक : यह एक रासायनिक दवा का नाम है, जिसके द्वारा वृह... पर निराअम्लीकरण किया जाता है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस के द्वारा यू0 एस0 ए0 में किया गया था।

डेस्टराइन ग्लू : यह एक तरह का गोंद है जो जानवरों की देन है जिसमें डेस्टराइन नामक पदार्थ मिलाकर पानी में घोल तैयार किया जाता है, और बाद में उसे पका लिया जाता है, इसका उपयोग चिपकाने के काम में किया जाता है।

तकला मकान : पश्चिमी चीन के एक मरुभूमि का नाम।

धूमन : यह एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा जैवीय प्रतिनिधियों का विनाश किया जाता है, तथा ग्रन्थालय के वातावरण को शुद्ध करने के लिए रासायनिक द्रव्यों से उत्पन्न धुआँ।

निराअम्लीकरण : ग्रन्थालय के वातावरण से अम्ल हटाने की विधि।

पेस्ट डाउन : एण्ड पेपर को चिपकाने वाली सामग्री

पेलियोग्राफी : लिखने की प्राचीनतम विधि।

पाण्डुलिपि : भोजपत्र, तालपत्र तथा पेपिरस पर लिखी गई पुरानी ग्रन्थालय सामग्री

प्रतिकांक : अहनांक, क्रामक संख्या

फार्मेट : चादर, आकृति, आकार

फाक्सिंग : कागज पर पाये जाने वाले भूरे धब्बे

फलाई लिफ : अतिरिक्त पृष्ठ जो प्रारम्भ और अन्त में चिपका रहता है।

फ्रोलियो : कागज का पूर्ण सीट जो चार भागों में मोड़ा जाता है।

फोरएज : सामने का किनारा।

फिनाइल : कार्बोनिक एसिड।

फंगस : कवक

फंगस स्पोर : कवक के लक्षण

फ्यूमीगेशन : धूमन

फ्लोरोशीन : विद्युत ऊर्जा का एक रूप

बुकरम : यह दो टुकड़ों को जोड़कर बनाया गया कपड़े का टुकड़ा है जिसके रेशे काफी मजबूत होते हैं और इस पर एक विशेष प्रकार का लेप लगा किस जाता है। इसका उपयोग आवरण को मजबूत बनाने में बोर्ड के साथ किया जाता है।

बुक जैकेट : यह ग्रन्थ के आवरण पृष्ठ पर लपेटा हुआ कागज होता है।

ब्लीच : एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा रासायनिक द्रव्यों के सहारे चमड़े अथवा कागज का रंग परिवर्तन करना।

माइक्रोफिल्म : चित्र या फोटोग्राफी के लिए उपयोग की गयी फिल्म

माइक्रोफिश : फिल्म बनाने के लिए उपयोग में लाये टुकड़े जिसकी आकृति चार इंच

		गुणे 6 इंच की होती है और जिसमें कम-से-कम दो सौ सत्तर छवि उगाये जा सकते हैं। इसका उपयोग कम्प्यूटर के लिए होता है।
मशीन से बने लकड़ी के कागज	:	सस्ते और कम टिकाऊ कागज
मशीन	:	यन्त्र
मिल्ड्यू	:	कवक के बढ़ते हुए आकृति का नाम।
मीटरिंग	:	यह जोड़ तथा चमड़े एवं बोर्ड के बीच का माप है जो पैंतालीस मिली मीटर (45mm) का है।
माइस्चर	:	शीलन
मशीन द्वारा कागज को निर्देश	:	जब मशीन मोड़ाई का काम करता है। इसे ही मशीन द्वारा कागज को निर्देश कहा जाता है।
मोड़ाई	:	यह एक ऐसी क्रिया है जिसमें ग्रन्थ के पन्ने के आकार के अनुसार ही कागज को मोड़ा जाता है। साधारणतया यह काम मशीन से लिया जाता है किन्तु जहाँ यह काम हाथ से होता है वहाँ जिल्दसाज लकड़ी के पतले टुकड़े का उपयोग इस काम के लिए करता है।
रैक्सीन	:	यह फेब्रिक पर आधारित उत्पादन है, जिसका उपयोग आवरण के रूप में किया जाता है।
नीला थोथा	:	कॉपर सल्फेट/तूतिया, इसका उपयोग लेई को कीटाणु रहित करने के लिये किया जाता है।
लेमीनेशन	:	पारदर्शी टिशू पेपर से बनाया गया पैकेट जिसके अन्दर सामग्री रख दी जाती है।
वार्प	:	फेब्रिक का एक टुकड़ा
वार्पिंग	:	ढकने वाला कागज
वफर सॉल्यूशन	:	यह एक तरह का रासायनिक घोल है जिसका उपयोग सामग्री के बचाव के लिए किया जाता है।
शक्ति	:	यह टिकाऊ अथवा मजबूती को स्पष्ट करता है।
साँचा (म्यूल्ड)	:	यह एक ऐसा कवक का पुराना रूप है जो इसकी वृद्धि में काफी सहायक होता है।
सैल्यूलोज	:	यह एक कार्बनिक तत्व है जो पौधों तथा वृक्षों में पाया जाता है और जिसका उपयोग कागज प्लास्टिक इत्यादि बनाने के लिए किया जाता है।
सैल्यूलोज एसिट	:	इसका निर्माण 1930 ई0 में हुआ था, जिसे फिल्मों को सुरक्षित रखने के काम में लाया जाता है।
सैल्यूलोज नैट्रेट	:	इसे फिल्म बनाने के काम में लाया जाता है।
सेलुलोज	:	लुगदी
सिल्क सिफॉन	:	पाण्डुलिपि को सुरक्षित रखने के लिए उपयोग में लाया गया एक विशेष

प्रकार का कपड़ा।

संस्करण जिल्दबन्दी : एक ही आख्या की अनेक प्रतियों की सीट के द्वारा जिल्दबन्दी।

सेक्सन : चार अथवा आठ अथवा सोलह पृष्ठों का क्रम

सपर : पतला, मुलायम सूती कपड़ा

स्ट्रेच एण्ड कन्सट्रक्शन : स्ट्रेच सिलाई से पहले कागज के किनारे को काटने के लिए जहाँ लकड़ी के पटरे रखे जायेंगे उस स्थान को चिन्हित करना है तथा कन्सट्रक्शन इसे अन्तिम रूप देना है।

स्पाइन : ग्रन्थ के पीछे का भाग, पीठिका

स्क्वायर : ग्रन्थ को सुरक्षित रखने के लिए काठ का बना हुआ पटरा।

स्टाइलस : रिकार्ड प्लेयर को चलाने वाला उपकरण

हस्तलेमिनेशन : यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पाण्डुलिपियों का पुनरुद्धार किया जाता है।

हाइन्ज : फिसलने वाला पदार्थ।

हेजार्डस : हानिकारक तत्व

ह्यूमिडिटी : आर्द्रता

सन्दर्भ एवं अतिरिक्त पाठ्य-सामग्री

American National Standards Institution (ANSI) and National Information Standards Organisation (NISO) : ANSI/NISOZ 39.66-1992, Durable hardcover binging for books,

British Standards Institution, BS 1971 part 2, 1980 (Amended 1989), Archieval Binding: Preparation of Documents for Binding: Methods Binding Materials.

Bureau of Indian Standards : Indian Standard Institution : 3050, 1965 (With amendment of February, 1968), Code of Practice for Reinforced Binding of Library books and periodicals.

Bhattacharya, B (1947). Palm Leaf manuscripts and their preservation. Indian Archives, vol. 1, No.3 pp –233-34.

Back E.A. (1947), Book Worms in the Indian Archives Vol. No. 2 New Delhi, National Archives of India.

Basu Purendu (1948). Insects Enemies of Books In The Indian Archives. Vol. 2, No. 1,2 New Delhi : National Archives of India.

Chakrabarti, B. and Mahapatra, P.K. (1991). Library Collection : Selection and preservation, Calcutta : Word Press.

Chunha, G.D.M. (1971). Conservation of Library Materials, 2nd ed. Metuchen : Scare Crow Press.

Chakravorti, S. (1947). A Study of Palm leaf Manuscripts, 1 bid, Vol. 1, No. 1 PP. 12-17.

Clough, Eric A. (1957) Book binding for Librarians London : Association of Assistant Librarians.

Cockerell, Douglas. (1955). Book binding and the care of books, London : Pitman.

Carderoy, John. (1967). Book binding for Beginners. London : Watson-Guptill.

Diringer, D. (1953). The hand produced Book, London : Hutchinson's.

Fothergill, Richard and Butchart, Ian (1990). Nonbook Materials in Libraries : A Practical Guide London: Clive Bingley.

Filliozat, Gean (1947). Manuscripts on Brick bark (Bhurjapatra) and their preservation Indian Archives, Vol. 1, No.2, PP. 102-108

Greenfield, N.J. Jane (1983). Books : Their care and Repair. New York :

Wilson.

Great House, G.A. and Wessel C.J, Deterioration of Materials, Causes,and Preventive Techniques. New York : Reinhold Publishing.

Gupta R.C. (1954). How to Fight White and In the Indian Archives. Vol. III No. 2. New Delhi : National Archives of India.

Harvey, Ross (1993). Preservation In Libraries : A Reader London : Bowker.

Henderson,Kathryn Luther and William T. Henderson (ed.). 1983. Converving and Preserving Library Materials urbana Champaign : University of Illinois.

Horton, Carolyn. Cleaning and Preserving Binding and Related Materials, Chicago American Library Association.

India National Archives of India, (1988) Repair and Preservation of Records. New Delhi: National Archives of India.

IFLA Journal : Volume 18, No. 3, 1992.

IGNOU (1997) : Preservation and Conservation of Library Materials.

Johnson, Arthur W. (1983). The Practical Guide to Book Repair and Conversation. London : Thames and Hudson.

Johnson, Arthur W. (1978). Mannual of Book binding, London : Thams and Hudson.

Krthpalia, Y.P. (1973). Conservation and Restoration of Archive Materials. Paris : UNESCO.

Lock, R.N. (ed.) Brown's Manual of Library Economy. London : Grafton.

Library Trend : Summer, 1995.

Mcyenny Hughes A.W. (1953) Protection of Books and Records from Insects In the Indian Archives. Vol. VII. New Delhi. The National Archives of India.

Morrow Carolyn Clark (1983). The Preservation Challenge : A Guide to Conserving Library Materials. Knowledge Industry Publications.

Majumdar P.C. (1957). Birch Bark (Bhurjapatra) and clay coated Manuscripts in the Gilgit Collection. their Repair and Preservation. Indian Archives, Vol. II ,P Nos. 1-2, P.P. –77-84.

Nair. S.M. (1977). Biodeterioration of Paper, Conservation of Cultural Property in India. Vol. X. New Delhi. : National Museum.

National Archives of India : Repair and Preservation of Records. (1988). New Delhi.